कुरुक्षेत्र

अगस्त 1990 मूल्य 5 रुपये

आठवीं पंचवर्षीय योजना 1990-95 में ग्रामीण विकास

दृष्टिकोण पत्र पर टिप्पणी

"शहर और गांव के बीच विषमताएं बढ़ती जा रही हैं। अतः सरकार ने ग्रामीण विकास पर अधिक ध्यान देने का संकल्प लिया है। ग्रामीण क्षेत्रों में परिवर्तन लाने के लिए कृषि संबंधों का पुनर्निर्धारण अनिवार्य है। भूमि कानूनों की समीक्षा और उनके पुनर्निर्धारण के लिए उपाय किए जाएंगे और उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करने के उपाय सुनिश्चित किए जाएंगे। संविधान के नौवें अनुच्छेद में भूमि सुधार कानूनों को लागू करना इसी दिशा में एक कदम है। भूमि सुधारों में भूमि संबंधों के विभिन्न पहलुओं को शामिल करना होगा जैसे कि पट्टेदारी, जोत वाली जमीन पर रहने का अधिकार, चकबंदी, भूमि सीमा और फालतू भूमि व सरकार के पास पड़ी भूमि का वितरण। इन उपायों से निर्धनों को उपलब्ध होने वाली जमीन को विकसित करके कृषि योग्य बनाया जाना चाहिए और जमीन मालिकों को सामूहिक आधार पर खेती के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जहां तक जनजातीय भूमि का संबंध है, इसकी गैर-जनजातीय लोगों के बिक्री या हस्तांतरण पर प्रतिबंध लगना चाहिए। भूमि सुधारों के लिए भूमि रिकार्डों के सही रख-रखाव तथा उनमें सुधार को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।

इस बात पर भी जोर दिया गया है कि ग्रामीण आबादी को लाभ पहुंचाने वाली योजनाओं पर खर्च की राशि में काफी वृद्धि की जानी चाहिए। इसे बढ़ाकर पचास प्रतिशत करने का लक्ष्य है।"

(आठवीं पंचवर्षीय योजना, 1990-95 के दृष्टिकोण पत्र से)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास विभाग का प्रमुख मासिक

वर्ष—35, अंक 10, श्रावण-भाद्रपद, शक-1912

[illegible]

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

[illegible]

"पूरे सोच-विचार से बनी है यह नीति" 3
लक्ष्मी चन्द जैन

आठवीं पंचवर्षीय योजना ग्रामोत्थान पर विशेष जोर 8
जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए बेहतर दिशा निर्देश 13
डा. मैलकम एस. आदिशेषैया

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र पर एक नजर 16
देवकृष्ण व्यास

दृष्टिकोण : योजना की गुणवत्ता पर बल 19
एस एम. शाह

ग्रामीण विकास की नई संभावनाएं 22
सुबह सिंह यादव

वास्तविकताओं पर मौन है यह पत्र 27
भारत डोगरा

छटपटाते काम (कविता) 29
सत्यपाल चुग

आठवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास तथा गरीबी उन्मूलन 30
डा. गिरिजा प्रसाद दूबे

आठवीं योजना की दिशा 33
डा. गिरीश मिश्र

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कायाकल्प का सार्थक प्रयास 36
एन. श्रीधरन

ग्रामीण विकास के लिए वांछित तैयारी 39
ईश्वर लाल पं. वैश्य

आठवीं योजना—ग्रामीण क्षेत्र में परिवर्तन की हवा लायेगी 44
वेद प्रकाश अरोड़ा

बेरोजगारी उन्मूलन के मार्फत गरीबी पर प्रहार 47
डा. हेमचन्द्र जैन

कहां नहीं है गांव (कविता) 49
डा. संतोष दीक्षित

आठवीं योजना : स्वप्न साकार करने की दिशा में एक और कदम 51
हरि विश्नोई

सामाजिक न्याय की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम 55
सुभाष चन्द्र सत्य

आठवीं योजना का प्रारूप क्या ग्रामीण क्षेत्रों के लिए वरदान सिद्ध होगा? 59
गणेश कुमार पाठक

पंचायती राज तथा उसका प्रशासकीय ढांचा 65
डा. (श्रीमती) वीणा मेहता

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 384888

इस अंक में

योजना आयोग के भूतपूर्व उपाध्यक्ष श्री रामकृष्ण हेगड़े ने 24 मई, 1990 को नयी दिल्ली में आयोजित संवाददाता सम्मेलन में आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र का मसौदा औपचारिक रूप से जारी किया था। संभवत: इसे इसलिए जारी किया गया ताकि देश के आर्थिक विकास के लिए इस दस्तावेज में परिकल्पित नीतियों पर राष्ट्रीय बहस हो सके। इसके 25 दिन बाद राष्ट्रीय विकास परिषद की एक लंबे अंतराल के पश्चात नयी दिल्ली में बैठक हुई और दो दिन के विचार-विमर्श के बाद 19 जून, 1990 को इसने दृष्टिकोण पत्र का अनुमोदन कर दिया।

कुरुक्षेत्र ने इस अंक में यह बताने का प्रयास किया है कि इस दृष्टिकोण पत्र में ग्रामीण विकास व गरीबी दूर करने के लिए किन उपायों की चर्चा की गयी है। हमारा यह प्रयास इस दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण बन गया है कि दृष्टिकोण पत्र का मसौदा जारी होने से काफी पहले राष्ट्रीय मोर्चे के केन्द्रीय नेताओं ने स्पष्ट रूप से कहा था कि आठवीं पंचवर्षीय योजना का लगभग आधा खर्च ग्रामीण विकास पर किया जाएगा। स्वयं दृष्टिकोण पत्र में स्पष्ट किया गया है कि रोजगार के अवसर जुटाने के लिए ग्रामीण विकास पर अब पहले से कहीं अधिक बल दिया जाएगा।

हमारे पाठकों को यह स्पष्ट हो जाएगा कि यह प्रयास फलदायक साबित हुआ है। इस अंक में विद्वान लेखकों ने पिछली सात पंचवर्षीय योजनाओं की बारीकी से समीक्षा की है तथा आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में ग्रामीण विकास के लिए अपनायी जाने वाली नीति की संपूर्ण विवेचना की है।

—सम्पादक

"पूरे सोच-विचार से बनी है यह नीति"

लक्ष्मी चंद जैन
सदस्य, योजना आयोग

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र के बारे में कुरुक्षेत्र के सम्पादक ने हाल ही में योजना आयोग के सदस्य श्री लक्ष्मी चंद जैन से एक साक्षात्कार किया जिसे निम्नलिखित लेख में प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रश्न : दृष्टिकोण पत्र का मुख्य ध्यान सामाजिक परिवर्तन की ओर है। इसे मुख्य रूप से लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और रोजगार के अवसर पैदा करने के जरिए हासिल करने का लक्ष्य रखा गया है। आपकी राय में क्या दोनों उपाय सामाजिक परिवर्तन के लक्ष्य को प्राप्त करने में मदद देने के लिए पर्याप्त हैं?

श्री जैन : आपका कहना बिल्कुल ठीक है कि अपेक्षित स्तर और मात्रा में सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए ये दो उपाय ही पर्याप्त नहीं हैं; लेकिन ये आवश्यक शर्तें हैं। ये पर्याप्त नहीं हो सकती हैं परन्तु ये इसके लिए आवश्यक हैं। हम ऐसा क्यों कहते हैं? क्योंकि पिछले चालीस वर्षों के अनुभवों ने हमें सिखाया है कि हम बड़े पैमाने पर निवेशों के बावजूद विकास का पूरा लाभ नहीं प्राप्त कर सके हैं, क्यों? क्योंकि हमने अमल का जो तरीका चुना है उसमें एक ओर तो जरूरत से ज्यादा केन्द्रीकरण पर बल दिया गया है और दूसरी ओर सभी स्तरों पर उसमें लोगों को अलग-थलग रखा गया है। जैसे—ग्रामीण स्तर पर लोगों को शामिल करना अनिवार्य है। उनके पास नकद धन नहीं हो सकता, उनके पास हुनर नहीं हो सकता लेकिन उनके पास स्थानीय जानकारी है—अपनी मिट्टी के बारे में, अपने यहां के पानी के बारे में, अपने वृक्षों के बारे में, अपने उत्पादन की पद्धति के बारे में, अपनी खपत की पद्धति के बारे में और अन्य सभी तरह की परिसम्पत्तियों और कठिनाइयों के बारे में, जो उनके इलाके में मिल सकती हैं, इन सब चीजों के बारे में उन्हें जानकारी है। किसी भी निर्धारित समय में हमारे देश में विकास का कार्य बड़ा ही कठिन है। लेकिन स्थानीय जानकारी को शामिल न करके हमने उस कार्य को और भी दुष्कर बना दिया है। प्राथमिकताओं का निर्धारण करने में हमने केवल स्थानीय जानकारी को ही अलग-थलग नहीं रखा है, बल्कि हमने स्थानीय लोगों की सलाह भी नहीं ली। यह देश किसी कारखाने में तो बना नहीं है, इसलिए इसमें पर्याप्त विविधता है। स्थिति एक ही तरह की नहीं है इसलिए कि किसी खास क्षेत्र में क्या उपयुक्त प्राथमिकता होगी, यह जानना होगा। हमें यह जानना होगा कि कौन-कौन से स्थानीय संसाधन उपलब्ध हैं, उनमें प्राकृतिक और पुरुषों तथा स्त्रियों के हुनर जैसे संसाधन शामिल हैं। जैसा कि मैंने पहले कहा है हमको यह जानना होगा कि खपत और उत्पादन का रवैया क्या है। उसके स्तरों पर खामियां कहां हैं? विकास के अमल के इस तरीके तथा योजना के कारण हमने पिछले चालीस वर्षों के दौरान जो तरीके अपनाए उनके न केवल बहुत मामूली परिणाम प्राप्त हुए बल्कि एक ओर गलत प्राथमिकताओं को रखा गया और दूसरी ओर असमानताओं को और बढ़ाया गया। इसलिए अब हमें यह मानना पड़ता है कि सामाजिक या आर्थिक स्तर पर किसी महत्वपूर्ण परिवर्तन की आशा करने से पहले हमारे लिए लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की पूर्व शर्त एक अनिवार्य दशा है। यही कारण है कि आप देखेंगे कि दृष्टिकोण पत्र में योजना के प्रथम वर्ष के दौरान समूचे देश में विकेन्द्रीकृत संस्थाओं के प्रतिनिधियों के लिए एक व्यवस्था शुरू करनी पड़ी। पिछले वर्षों की अन्य योजनाओं से हटकर आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में पहले की इस प्रवृत्ति की तरह कि आखिरी अध्याय के लिए मामले को छोड़ दिया जाता था, इस बार उसके बजाय पहले ही अध्याय में सरकारी स्तर की उचित प्रतिनिधि संस्थाएं बनाने के मुद्दे को शामिल किया गया।

अब मैं आपकी दूसरी बात पर आ रहा हूं कि सामाजिक परिवर्तन के लक्ष्य को प्रोत्साहन देने के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने के मामले में हमारा जोर है। रोजगार का तात्पर्य है—काम और आमदनी जो बदले में आजीविका उपलब्ध कराती है। हमारी राजनीतिक व्यवस्था में 18 वर्ष की उम्र से ऊपर के सभी व्यक्तियों को अधिकारों की समानता दी गई है यानि एक व्यक्ति एक वोट। सामाजिक क्षेत्र में हम असमानताएं नहीं बनाए रख सकते। हम कितने समय तक यह बर्दाश्त कर सकते हैं कि हमारे लाखों नागरिकों को आजीविका का पक्का

जरिया न हो या आजीविका के पर्याप्त साधन न हों जिसके जरिए वे सख्त मेहनत करके अपने लिए कुछ कमा सकें। हम इस बुनियादी आवश्यकता की उपेक्षा करते रहे जिसे हमारे राज्य की नीति के निर्देशक सिद्धांतों में दिया गया है और पांचवें दशक के प्रारम्भ में ही योजना आयोग के गठन के समय जिसे बिल्कुल प्रारम्भिक शर्त माना गया था कि सभी नागरिकों को आजीविका का जरिया सुनिश्चित किया जाएगा। रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने पर जोर और कुछ नहीं बल्कि इसी संवैधानिक निर्देश को मान्यता प्रदान करना है। एक लोकतांत्रिक मानव समाज के नाते हमें संविधान से यह निर्देश मिलना आवश्यक नहीं है कि हम यह सुनिश्चित करें कि कोई बच्चा भूखा न रहे। हमारे पास दान के जरिए भोजन नहीं मिलना चाहिए बल्कि काम के जरिए भोजन मिलना चाहिए और परिवार में प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए रोजगार उपलब्ध होने चाहिए। अब यह कल्पना करना बहुत आसान हो जाना चाहिए कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के साथ सामाजिक परिवर्तन की ओर अग्रसर होने के लिए हमारी नीति में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना इतना महत्वपूर्ण हिस्सा क्यों है। हमारी राय में, रोजगार उपलब्ध कराने में हमारे लोगों को उनके आदर्शवाद, कल्पना, अनुभव और भारत का निर्माण करने के काम में अधिक से अधिक योगदान करने का अनुपम अवसर मिल सकता है।

प्रश्न : दृष्टिकोण पत्र का प्रमुख लक्ष्य रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना है और रोजगार की समस्या ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत भयंकर है। वर्तमान सरकार का दृष्टिकोण यह है कि उपयुक्त विकास कार्यक्रमों के जरिए हर नागरिक को काम के अधिकार की गारंटी देकर इस समस्या का समाधान किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य से सरकार संसद के अगले अधिवेशन में आवश्यक संवैधानिक संशोधन विधेयक पेश करने पर विचार कर रही है। आपकी राय में क्या ऐसा प्रस्ताव सम्भावित है?

श्री जैन : यह प्रस्ताव सम्भावित है या नहीं, इस पर आने से पहले मैं यह स्वीकार करना चाहूंगा कि वास्तव में यह आवश्यक और अनिवार्य है। संविधान में काम के अधिकार को मौलिक अधिकारों में रखने से निःसंदेह इससे अधिकार पैदा होगा, इससे काम पैदा नहीं होगा। काम आर्थिक प्रणाली के लिए पैदा किया जाना चाहिए, चाहे वह कृषि में हो अथवा उद्योग में हो या नौकरियों में हो। लेकिन सरकार इस दृष्टिकोण पर क्यों पहुंची कि काम के अधिकार को संविधान में शामिल किया जाना चाहिए, इसे समझना होगा। ऐसा नहीं है कि लोग इस प्रकार के संवैधानिक प्रावधान के बगैर काम नहीं करेंगे बल्कि वास्तव में यह सरकार के लिए है क्योंकि पिछले वर्षों में सरकार आर्थिक प्रणाली को इस तरह चलाने के लिए पर्याप्त सावधान या उत्सुक नहीं है कि उससे अधिक से अधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध कराए जा सकें। यदि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां कि भौतिक सीमाएं इस प्रकार की हैं कि वहां रोजगार के और अवसर नहीं पैदा हो सकते तो हम इतने मूर्ख नहीं है कि यह मांग करें कि उस क्षेत्र में रोजगार के अवसरों का और विस्तार किया जाए। जैसे—हम रोजगार के अवसरों की उस सीमा को जानते हैं कि इस्पात अथवा सीमेंट जैसे भारी उद्योगों में कितना अधिक रोजगार पैदा हो सकता है। यदि हम बिजली उत्पादन से बहुत ज्यादा रोजगार पैदा करने की कोशिश करें तो हमें पता है कि इस प्रक्रिया में हम विफल हो जाएंगे। इसलिए कोई ऐसी मूर्खतापूर्ण मांग नहीं करेगा। लेकिन दूसरी ओर हम जानते हैं कि उत्पादन प्रक्रिया में कहां और ज्यादा लोगों को रोजगार दिया जा सकता है, जैसे—कपड़े के निर्माण के क्षेत्र में, जहां लाखों हाथ बगैर बिजली का इस्तेमाल किए ही देश में कपड़े का उत्पादन करते रहे हैं और जब तक बेरोजगारी की समस्या हल नहीं कर ली जाती तब तक उसमें काम करते रहेंगे। लेकिन बिना सोचे-विचारे नीति ऐसी बनी जिसने ऐसी मशीनों और टेक्नोलाजी के निवेश को प्रोत्साहन दिया गया जिससे रोजगार के मामूली अवसर उपलब्ध किए बगैर ही भारी मात्रा में कपड़े का उत्पादन किया जाने लगा। उपभोक्ता माल वाले तमाम उद्योगों में यदि आवश्यक है तो हम कुछ त्याग कर सकते हैं। हमने कुछ उत्पादन प्रणाली को इस प्रकार विकसित होने दिया कि हमारे रोजगार का अवसर बिल्कुल ही कम हो गया। इस प्रक्रिया में खरीदने की शक्ति केवल कुछ ही हाथों में सीमित रही और चूंकि यह कुछ ही हाथों तक सीमित रही, इसलिए मुट्ठी भर लोगों की जरूरतों को पूरा करने के लिए हम विलासिता की वस्तुओं का ज्यादा से ज्यादा उत्पादन करने को प्रोत्साहन देते रहे हैं। इस प्रकार इस प्रक्रिया में हमने न केवल रोजगार के अवसरों का गला घोंट दिया बल्कि पहले से ही भयंकर बनी गरीबी की समस्या को और भी गंभीर बना दिया। तथापि आपका यह प्रश्न उचित है कि यह प्रस्ताव हालांकि वांछनीय है, आसानी से सम्भावित नहीं हो सकता है। वास्तव में हमने संभावना के इस प्रश्न पर विचार किया है। संभावना के दो पहलू हैं—एक है तकनीकी तथा दूसरा है, संसाधन सम्बंधी। मुझे यह कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि जहां तक तकनीकी संभावना का सवाल है, हमारी कृषि भूमि के विशाल क्षेत्र में विशेषकर शुष्क भूमि जहां उत्पादन को दो गुने से लेकर पांच गुने तक बढ़ाने की सम्भावना है और साथ ही लाखों हाथों के लिए रोजगार पैदा करने की भी सम्भावना है। अगले पन्द्रह-बीस वर्षों के लिए पर्यावरण पुनर्निर्माण के काम समेत, हर वर्ग इंच जमीन का ध्यान रखते हुए, पानी की हर बूंद का

ध्यान रखते हुए, अपने पशुओं के लिए चरागाह की सुविधा उपलब्ध कराते हुए और बढ़ती हुई विशाल जनसंख्या की आवश्यकताओं के लिए न केवल भोजन बल्कि चारे और ईंधन की सुविधा उपलब्ध कराने के कार्यक्रमों को भी चलाना चाहिए। इसी प्रकार निर्माण के मामले में, जैसा कि मैंने कपड़े के निर्माण का उदाहरण देकर स्पष्ट किया है, पर्याप्त गुंजाइश है खासतौर से उपभोक्ता माल के उद्योगों में—न केवल उत्पादन बढ़ाने बल्कि इस तरीके से बढ़ाने की जिससे उत्पादन की प्रति इकाई में श्रम का अधिक से अधिक उपयोग किया जा सके। ऐसे तकनीकी विकल्प उपलब्ध हैं।

जहां तक संसाधनों की बात है हमारा प्रमुख ध्यान वित्तीय संसाधनों पर जाता है। बजट पर पहले ही अत्यधिक दबाव है। लेकिन याद रखें कि हमारे बजट संसाधनों पर इस भारी दबाव के बावजूद सरकारी तथा अर्द्धसरकारी संस्थाओं में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों द्वारा अपने वेतन तथा कुल रकम को बढ़ाने और जीवन स्तर पर लागत मूल्यों में किसी वृद्धि की क्षति पूर्ति के लिए लगातार मांग की जाती है जबकि हम जानते हैं कि यदि 90 प्रतिशत नहीं तो कम से कम हमारे श्रमिकों का 50 प्रतिशत से अधिक भाग सरकारी क्षेत्र के रोजगार या संगठित उद्योग क्षेत्र से सम्बद्ध नहीं होता, जो कि अपने वेतनमानों में लगातार बढ़ोत्तरी करने में सक्षम है। इसलिए हम यह देखते हैं कि समस्या यह नहीं है कि वित्तीय संसाधन उपलब्ध नहीं हैं बल्कि इनका लोगों के एक वर्ग द्वारा शोषण किया जा रहा है। जिन्होंने भारत की समृद्धि का शोषण किया है उनका मुख्य काम अपने शानदार स्तर को बनाए रखना है और वे इस बात की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं देते कि आबादी के 90 प्रतिशत वंचित लोगों का क्या हो रहा है। हम आशा करते हैं कि यदि यह सरकार इस प्रक्रिया को उलट नहीं सकती तो कम से कम इसे ठीक करने का प्रयास अवश्य करेगी। उपलब्ध साधनों से मेरा तात्पर्य वित्तीय संसाधनों यानि अन्य तकनीकी तथा भौतिक संसाधनों के अलावा उपलब्ध संसाधनों के बारे में है कि मुख्य जोर व्यक्तियों पर होना चाहिए जिनके पास कोई वैकल्पिक काम या आजीविका को साधन बिल्कुल ही नहीं है। यही वे व्यक्ति हैं जिनके नामों को काम के अधिकार के अन्तर्गत पंजीकृत किया जाएगा। ग्राम पंचायतों या नगर-पालिकाओं जैसी संस्थाओं में अपने नामों को दर्ज कराएं, जिसमें इस बात का संकेत रहेगा कि वे काम की तलाश में बाजार में हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि वे उपर्युक्त प्रकार के कार्यों में जैसे कृषि में या निर्माण कार्यों में ले लिए जाएंगे, वित्तीय संसाधनों की कुछ मात्रा प्राथमिकता के आधार पर आबंटित करनी होगी जिसका तात्पर्य यह है कि वर्तमान सुविधाप्राप्त ग्रुपों की मांगों पर दृढ़ता से अंकुश लगाना होगा और सुविधा प्राप्त ग्रुपों में जो लोग बिल्कुल चोटी पर हैं, वास्तव में अतिरिक्त संसाधन जुटाने के लिए उनके ऊपर और कड़ाई से कर लगाने चाहिए। इसलिए अंत में मैं यह कहना चाहूंगा कि तकनीकी तथा वित्तीय, दोनों ही दृष्टियों से काम के अधिकार का प्रस्ताव संभावित है और निःसन्देह यह वांछनीय है।

प्रश्न : हाल ही में राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक के उद्घाटन भाषण में प्रधानमंत्री ने कहा था कि प्रगति के साथ-साथ जीवन-स्तर में सुधार होना चाहिए। इसके लिए उन्होंने कहा कि कुछ संस्थागत सुधारों की तत्काल आवश्यकता है। उनके अनुसार इनमें ग्राम पंचायतों को योजना, प्रशासन तथा वित्तीय अधिकार को हस्तांतरित किया जाना शामिल है। यह प्रस्ताव उतना आसान नहीं है जितना कि यह लग रहा है क्योंकि इससे केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के विभागों की भूमिका में परिवर्तन की आवश्यकता होगी। आपकी राय में कितनी जल्दी इस उद्देश्य को हासिल किया जा सकता है?

श्री जैन : वास्तव में, यह उतना आसान नहीं है जितना कि लगता है लेकिन आपको इतना तो मानना ही होगा कि चाहे वह प्रधानमंत्री हों अथवा अन्य मंत्री या योजना आयोग के सदस्य या राज्यों के मुख्यमंत्री हों, इस मामले में हाथ पर हाथ धरे नहीं रह सकते। हम इसे आसान नहीं मान रहे हैं। हम जानते हैं कि यह कठिन काम है और इस कठिनाई का जवाब वर्तमान स्थिति में परिवर्तन करने के हमारे संकल्प हैं। आप इस संकल्प को जैसे चाहें वैसे माप सकते हैं। हमने योजना की प्रथम एक दो वर्षों के अन्दर लोकतांत्रिक प्रकृति की विकेन्द्रीकृत संस्थाओं की व्यवस्था बनाई है या नहीं। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है सबसे निचले स्तर पर इस प्रकार के संस्थागत आधार की उपलब्धता केन्द्रीय तथा राज्य सरकार के विभागों की वर्तमान भूमिका में किसी प्रकार परिवर्तन लाने की एक अनिवार्य शर्त है। सबसे निचले स्तर पर इस प्रकार की संस्था तैयार किए बगैर हमारा असफल होना स्वाभाविक है। यदि हम केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के विभागों से यह कहें कि वे अपने कुछ कार्यों, कुछ वित्तीय संसाधनों और अपने हाथों में इस समय केन्द्रित निर्णय करने की कुछ क्षमताओं को कम करके उन्हें निचले स्तर की संस्थाओं को दे दें तो इसमें हमारी विफलता ही होगी क्योंकि ये विभाग कहेंगे कि वे इन कार्यों तथा अधिकारों और संसाधनों को किसे सौंपे। इसलिए आप देखेंगे कि सर्वप्रथम हमने ऐसी संस्थाएं तैयार करने के काम को प्राथमिकता दी है। केन्द्रीय सरकार द्वारा आयोजित मुख्यमंत्रियों की हाल की बैठक में प्रधानमंत्री और उपप्रधानमंत्री को विधेयक के मूल तत्व पर

आम सहमति प्राप्त हुई कि विकेन्द्रीकरण से सम्बद्ध प्रावधान को संवैधानिक संशोधन में शामिल किया जाएगा। इनमें पंचायतें तथा नगर पालिकाएं और ऐसे अन्य मॉडल विधेयक शामिल हैं जिन पर राज्य विधान मण्डल बहस करेंगे तथा पारित करेंगे। आगामी 12 से 18 महीनों के दौरान केन्द्रीय सरकार तथा योजना आयोग का मुख्य जोर इस बात पर होगा कि एक ओर सभी राजनीतिक दलों का सहयोग और स्वीकृति प्राप्त करने के लिए सभी राज्यों से सहयोग लिया जाए, दूसरी ओर राज्य सरकारें इन विधेयकों को कानून बनाएं। मैं यह भी स्पष्ट करना चाहूंगा कि इन विधायी प्रावधानों में ग्राम तथा कस्बे के स्तर पर विकेन्द्रित संस्थाओं के लिए अनिवार्य चुनाव शामिल हैं। प्रशासनिक पुनर्निर्माण भी विचाराधीन है जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि स्थानीय योजना तथा सम्बद्ध प्रशासनिक पक्ष और वित्तीय अधिकारों से सम्बद्ध कार्यों को सुनिश्चित किया जा सके और ग्राम पंचायतों को अथवा जिला पंचायतों को या नगर पालिकाओं को इन कार्यों से सम्बद्ध अधिकार सौंप दिए जाएं। इन संस्थागत प्रबंधों का प्रधानमंत्री की उस बात पर प्रमुख असर पड़ेगा जो उन्होंने कही थी कि जीवन स्तर में सुधार और प्रगति दोनों साथ-साथ होनी चाहिए। जब किसी ग्राम पंचायत को योजना तैयार करने तथा उस पर अमल करने का कार्य सौंपा जाएगा तो जैसा कि अनुभव से ज्ञात है, निश्चय ही वे सबसे ज्यादा प्राथमिकता कृषि उत्पादन में सुधार लाने और ग्राम में अन्य सम्बद्ध गतिविधियों को प्राथमिकता देंगे। दूसरी ओर समूचे भारत में ग्रामीण आबादी जीवन स्तर पर दबाव डालने वाली कम से कम तीन बातों का सुधार लाने के लिए उत्सुक है। उदाहरण के लिए, शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य संरक्षण तथा पेय जल की उपलब्धता। इन प्राथमिकताओं के बारे में योजना आयोग को गांव के लोगों को सलाह देने की आवश्यकता नहीं है। ये प्राथमिकताएं उनके जीवन और उनके चिन्तन के तरीके की मूलभूत बातें हैं। हमारा कार्य ऐसी दशाएं तथा संस्थागत स्थिति पैदा करना है जिससे लोग केन्द्रीय तथा राज्य स्तरों पर प्रशासन की हमारी वर्तमान अत्यधिक केन्द्रित प्रणाली से कम से कम रुकावट के आधार पर पूरा कर सकें।

प्रश्न : अब हम भूमि सुधार पर विचार करते हैं। प्रधानमंत्री के अनुसार कृषि की ओर अधिक उत्पादकता के लिए भूमि सुधार पूर्व शर्त है। इस उद्देश्य से सरकार ने सभी भूमि सुधार कानूनों को संविधान की नौवीं अनुसूची में शामिल किया है। प्रधानमंत्री की राय में इससे भूमि सुधारों पर न केवल तेजी से अमल करने में सहायता मिलेगी बल्कि मुकदमेबाजी कम करने में भी मदद मिलेगी। ऐसा करने के बाद सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में निहित स्वार्थों से कैसे लड़ने जा रही है?

श्री जैन : भूमि सुधारों के अलावा प्रधानमंत्री ने तथा आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र ने भूमि दस्तावेज के प्रमुख महत्व की ओर ध्यान दिया है क्योंकि जहां पर भूमि सुधारों का काम हो गया है और इस सम्बंध में जहां मुकदमें नहीं हैं वहां भी नए आबंटियों के स्वामित्व के अधिकार बहुत अनिश्चित और अस्थिर हैं। क्योंकि देश के अनेक भागों में भूमि के दस्तावेज की विश्वसनीय, ईमानदारी से पूर्ण तथा निष्पक्ष प्रणाली का अभाव है। दो वर्ष पहले योजना आयोग ने देश में भूमि दस्तावेज के क्रमबद्ध अध्ययन का काम हाथ में लिया था। यह अध्ययन गोखले आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थान के प्रोफेसर डी. सी. वधवा ने किया था। इसमें भूमि दस्तावेज की हमारी कुल पद्धति के सुधार के बारे में यदि मौलिक नहीं तो कुछ अभिनव सुझाव अवश्य दिए गए तथा इसे जमीन का गारण्टी अधिकार दिया गया, चाहे यह ग्रामीण क्षेत्रों की जमीन का था या शहरी इलाकों की जमीन का था। हम इसे उच्च प्राथमिकता दे रहे हैं क्योंकि सुदृढ़ और ईमानदारी से पूर्ण भूमि दस्तावेज प्रणाली के बिना भूमि सुधार, विशेषकर भूमिहीनों के लिए नई जायदाद और प्रतिष्ठा प्राप्त करने का सामाजिक उद्देश्य निष्फल हो जाएगा। ग्रामीण क्षेत्रों में निहित स्वार्थों से लड़ाई की समस्या बनी ही रहेगी। अभी तक हम अफसरशाहों के विचार पर निर्भर करते रहे हैं कि सामाजिक दृष्टिकोण से भूमि-सुधारों में दिलचस्पी रखने वालों से, राजनीतिक दलों से या निहित स्वार्थों से वे लड़ते रहे हैं लेकिन अनुभवों से यह सिद्ध है कि कुछ दुर्लभ उदाहरणों को छोड़कर न तो अफसरशाही और न ही राजनीतिक दल इन आकांक्षाओं को पूरा कर सके हैं? इसलिए मुख्यमंत्रियों के हाल के सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने जो यह सुझाव दिया कि ग्राम तथा अन्य स्तरों पर समितियां कायम की जाएंगी जिनमें भूमिहीनों का बहुमत रहेगा और जो भूमि सुधारों के लाभ भोगी बनने के इच्छुक हैं। स्वर्गीय श्री देवराज अर्स के मुख्यमंत्रित्व के अधीन कर्नाटक के अनुभवों से पता चला है कि जहां पर ऐसी समितियों की स्थापना की गई थी वहां भूमि सुधारों का काम तेजी से हुआ क्योंकि वहां भूमिहीन लोग निहित स्वार्थों की ताकतों के खिलाफ मुकाबले के लिए दृढ़ संकल्प थे। ऐसी परिस्थितियों में अफसरशाही का कुछ हिस्सा भी उनके समर्थन में जुट पड़ा। हमारा यह भी विश्वास है कि पंचायतों के समय-समय पर चुनाव कराए जाने से आज के गांवों को और अधिकार मिलेंगे तथा उनकी दबी हुई आवाजें और मुखर होंगी। चुनाव प्रक्रिया क्रांतिकारी भले ही न हो परन्तु सामाजिक परिवर्तन के रूप में निहित स्वार्थों के वर्तमान दमघोंटू आधिपत्य को समाप्त करने के लिए यह पर्याप्त क्रांतिकारी है।

यदि हमने अब से लगभग चालीस वर्ष पहले पूरी ईमानदारी से पंचायती राज प्रणाली को अपना लिया होता तो अब तक निहित स्वार्थों का आधिपत्य देश के कुछ हिस्सों में पर्याप्त कमजोर पड़ गया होता या बिल्कुल ही समाप्त हो गया होता। हम इसे पिछले वर्षों में नहीं कर सके लेकिन ऐसा कोई कारण नहीं कि आज इसकी शुरुआत करने में हम कोई देरी करें और इसकी प्रक्रिया में और तेजी लाने तथा निहित स्वार्थी तत्वों के खिलाफ गरीब लोगों को उनके संघर्ष में और अतिरिक्त शक्ति का योगदान करने में हम आगे न बढ़ें।

अनुवाद : रामबिहारी विश्वकर्मा

सामाजिक-आर्थिक दल द्वारा शिक्षा के बारे में विचार-विमर्श

योजना आयोग के सदस्य प्रोफेसर रजनी कोठारी ने कहा है कि एक ओर तो 'सबके लिए शिक्षा' की लोकतांत्रिक आवश्यकता और दूसरी ओर सरकारी तथा अन्य नौकरियों के लिए योग्य बनाने वाली शिक्षा की औपनिवेशिक विरासत के बीच बुनियादी अन्तर्विरोध ने आजादी के समय से लेकर अब तक शिक्षा के विकास को अवरुद्ध किया है। इस अन्तर्विरोध को दूर किया जाना चाहिए ताकि हम प्राथमिक शिक्षा और साक्षरता के माध्यम से देश के नागरिकों के लिए 'कार्य के अधिकार' और 'सूचना के अधिकार'' को वास्तविक बना सकें।

आठवीं पंचवर्षीय योजना तैयार करने के संबंध में शिक्षा पर सामाजिक-आर्थिक दल की बैठक में परिचर्चा की शुरुआत करते हुए श्री रजनी कोठारी ने कहा कि हमारा मुख्य रूप से उद्देश्य केन्द्रीकृत नौकरशाही प्रणाली से हटकर भागीदारी पर आधारित विकेन्द्रीकृत निर्णय-प्रणाली की तरफ बढ़ना है। कार्यात्मक और परिचालन संबंधी मुद्दे कार्यान्वयन कार्य नीतियों, लक्ष्य, तिथियों और वित्त व्यवस्था से जुड़े हुए हैं। उन्होंने यह भी बताया कि वार्षिक योजना 1990-91 को तैयार करने के बारे में आयोजित बैठकों में विचार-विमर्श के दौरान तथा राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में राज्यों को यह परामर्श दिया गया था कि वे अपने-अपने राज्य में एक ऐसे जिले को निश्चित करें जिसमें सौ प्रतिशत साक्षरता हासिल की जा सके।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय में राज्य मंत्री श्री चिमन भाई मेहता ने विकेन्द्रीकरण की नीति का स्वागत किया लेकिन साथ ही इस बारे में सचेत भी किया कि वास्तविकताओं की अनदेखी न की जाए।

बैठक में निम्नलिखित बातों पर आम सहमति थी:

1. अगले पांच वर्षों में शैक्षिक विकास योजना में मुख्य जोर प्राथमिक शिक्षा को सार्वजनिक बनाने और प्रौढ़ निरक्षरता को समाप्त करने पर दिया जाना चाहिए।
2. शिक्षक-प्रशिक्षण, शिक्षण-सामग्रियों और पाठ्य-पुस्तकों का स्तर ऊंचा उठाकर प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार किया जाना चाहिए।
3. स्वास्थ्य, महिला और बाल विकास तथा पोषण पर समुचित ध्यान देकर शिक्षा का अधिकतम प्रसार किया जाना चाहिए।
4. शिक्षा को नौकरशाही से मुक्त किया जाना चाहिए। व्यवसायिक शिक्षा की कमियों का पता लगाकर शिक्षा और कार्य जगत में बेहतर सामंजस्य स्थापित किया जाना चाहिए।
5. सभी कार्यक्रमों में समानता के पहलू को इसके सभी आयामों जैसे क्षेत्रीय (पिछड़े राज्य/जिले/खण्डों), सामाजिक (अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यकों और महिलाओं) और शारीरिक (विकलांग बच्चे) में पूरी तरह से लागू किया जाना चाहिए।
6. 'पड़ोस में स्कूल' के विचार के कार्यान्वयन में आने वाली समस्याओं को स्वीकार किया गया है और यह महसूस किया गया है कि ऐसे स्कूल चलाने की दिशा में शुरुआत की जानी चाहिए।
7. प्राथमिक शिक्षा/साक्षरता के लिए मातृ-भाषा के महत्व पर बल दिया गया है।
8. जहां तक उच्च शिक्षा का संबंध है, आर्थिक, औद्योगिक और वैज्ञानिक विकास और अनुसंधान के लिए आवश्यक जन-शक्ति के सृजन में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार किया गया है। लेकिन यह महसूस किया गया है कि इसके लिए दिये जाने वाले वित्तीय अनुदान में कमी की जानी चाहिए।

बैठक में एक मुख्य सुझाव यह दिया गया कि प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में मुख्यमंत्रियों की एक समिति गठित की जानी चाहिए जो सावधिक आधार पर प्राथमिकता वाले कार्यक्रमों की निगरानी करें ताकि इन कार्यक्रमों को उनके महत्व के अनुसार शीघ्र पूरा किया जाए। □

ग्रामोत्थान पर विशेष जोर

जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए 'दृष्टिकोण पत्र' राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा स्वीकृत कर लिया गया है। संभावना है कि राष्ट्रीय विकास परिषद की अगली बैठक में जो अभी निश्चित होनी है में, इसके कुछ विस्तृत परिणाम भी सोच लिये जाएंगे और इस प्रकार आठवीं पंचवर्षीय योजना का निर्माण का कार्य प्रारंभ मान लेना चाहिए। इस योजना की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों के लिए यह तय हुआ है कि उसे उतना ही धन दिया जाये, जितना देश के शेष विकास के लिए दिया जाये। वैसे तो यह अजीब-सी बात लगती है कि जिस देश की अधिकांश जनता गांवों में रहती हो, उसके लिए कहा जाये कि पहली बार उसे योजना राशि में आधी राशि मिलेगी परन्तु वर्तमान अर्थव्यवस्था में, जहां अन्न के अतिरिक्त अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उद्योगों का सहारा लेना पड़ता है, उद्योग मुख्यतया नगरों के इर्द-गिर्द होते हैं। यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि आज जहां भी आधुनिक उद्योग खड़ा किया जाता है, वह स्थल पहले भले ही गांव रहा हो, नगर में परिवर्तित हो जाता है। जहां किसी समय अन्न उपजा करता था, वहां कारखाने खड़े हो जाते हैं, कर्मचारियों-अधिकारियों के आवास बन जाते हैं, बाजार निकल आते हैं, स्कूल और कालेज खुल जाते हैं, बैलगाड़ियों की जगह मोटर-कारें, बसें, ट्रक, स्कूटर और साइकिलें दौड़ने लगती हैं। लेकिन यह जो खर्च होता है, इसे गांव पर हुआ खर्च नहीं कह सकते, क्योंकि इस व्यवस्था के कारण गांव, गांव नहीं रह जाते।

हमारे आयोजन में गांव को हमेशा ही महत्व दिया गया है। पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि पर जोर था और उस समय जो बड़े-बड़े कार्यक्रम अपनाये गये, उनमें भाखड़ा नांगल जैसी परियोजनाएं थीं जिनमें नदियों पर बांध बनाकर उनसे सिंचाई की व्यवस्था थी। भारत में बाद में जो हरित क्रांति हुई उसमें भाखड़ा नहर तथा ऐसी अन्य नहरों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। लेकिन वहां के बिजली घरों में जो बिजली पैदा होती थी, वह किसान को अगर अपने पम्पसैट चलाने के लिए मिलती तो उससे अधिक पंजाब, हरियाणा और दिल्ली के नगरों को अपनी बिजली की खपत पूरी करने के लिए मिलती थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में बड़े-बड़े कारखानों के निर्माण पर जोर दिया गया। जिसके फलस्वरूप भिलाई, राउरकेला, दुर्गापुर जैसे स्थानों पर इस्पात कारखाने खड़े किये गये और इसके बाद कारखानों की संख्या बढ़ती गयी। उनको चलाने के लिए नये-नये बिजलीघर बनाने पड़े, कुछ उनमें पनबिजली घर थे, कुछ ताप बिजलीघर थे और कुछ अणु-शक्ति चालित बिजलीघर भी थे। साथ ही रेल, सड़क, जल और वायु मार्ग के परिवहन साधनों का निर्माण और बढ़ा। यद्यपि ये सारी सुविधाएं ग्रामीण जनता के लिए भी उपलब्ध थीं और ग्रामीण जनता को उनका लाभ भी होता था क्योंकि उनकी उपज दूर-दूर जाकर उन्हें लाभप्रद मूल्य प्रदान करती थी और उनकी जरूरत की चीजें वाजिब मूल्यों पर उनके दरवाजे तक पहुंचाती थीं। फिर भी इस प्रकार के खर्च को गांव के ऊपर होने वाला खर्च न गिना जाता था और न गिना जाना चाहिए। क्योंकि इन सुविधाओं का लाभ ज्यादा से ज्यादा वे लोग उठाते थे जिनके पास अधिक से अधिक अनुपात में पैसा था। चूंकि गांव के लोगों की औसत आमदनी शहर के लोगों से हमेशा ही कम रही थी, इसलिए उन सुविधाओं का वे लाभ नहीं उठा सके। गांव में अगर अस्पताल खुले तो या तो डाक्टर नहीं पहुंचे या दवाइयां नहीं थीं। स्कूल खुले तो इमारतें नहीं थीं, अध्यापक नहीं थे और दोनों भी थे और छात्र शिक्षा भी प्राप्त करते थे, परन्तु स्कूल से बाहर जाने के बाद उनको रोजगार के अवसर नहीं मिलते थे और शिक्षा कुछ ऐसी हो गयी थी कि उन्हें गांव में बैठकर अपने खेतीबाड़ी करना या ग्रामीण उद्योग खोलने के लिए प्रोत्साहित नहीं करती थी। इसलिए एक तो शिक्षा पर जितना व्यय होता था या चिकित्सा पर जितना व्यय होता था, उसका अधिकांश भाग नगरों में ही खर्च होता था। लेकिन गांव में भी जो खर्च होता था उससे वह फल प्राप्त नहीं होता था जो होना चाहिए था। फलतः गांव उजड़ने लगे, वहां के युवक-युवतियां रोजगार की तलाश में शहरों की ओर बढ़ते रहे, जहां उन्हें बेकारी और भूख ही उपलब्ध होती थी। दूसरी ओर गांवों को जिन बलिष्ठ और योग्य हाथों की आवश्यकता थी, उनसे वे वंचित होते गये। इस सारे परिप्रेक्ष्य को बदलने का जिम्मा लिया नये योजना

आयोग ने, जिसने मई 1990 में 1990-1995 तक की आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए अपना दृष्टिकोण पत्र जारी किया। इस पत्र में कई अध्यायों में ग्रामों के विकास की चर्चा है। ग्रामीण विकास नाम का एक अध्याय कृषि पर है, एक पर्यावरण पर है परन्तु मजे की बात यह है कि इस योजना का दृष्टिकोण ग्रामों के प्रति उसकी चिन्ता को प्रकट करने के लिए केवल इन्हीं भागों तक सीमित नहीं है। इसलिए हम इन भागों की चर्चा तो करेंगे ही, परन्तु साथ में यह देखने की कोशिश भी करेंगे कि किस प्रकार योजना आयोग ने जब सामाजिक विकास की चर्चा की है, विकेन्द्रीकरण की चर्चा की है, पर्यावरण या औद्योगीकरण की चर्चा की है तो उसमें भी किस प्रकार ग्रामों को एक लक्ष्य के रूप में प्रकट किया है।

दृष्टिकोण पत्र में योजना के लक्ष्य को निर्धारित करते हुए कहा गया है—"हमारा आधारभूत लक्ष्य यह है कि इस बात की व्यवस्था की जाये कि योजना का केन्द्र-बिन्दु मामूली आदमी की आवश्यकताओं और उनके जीवन की गुणवत्ता पर आधारित हो, तब भी जब योजना त्वरित सर्वांगीण विकास अर्थव्यवस्था का वैविध्य और आधारभूत ढांचे को सम्पुष्ट करने का प्रयास कर रही हो। विशेषतया राज्य को अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत पर्याप्त रोजगार उत्पन्न करने और हरेक के, विशेषतया गरीबों के जीवन-स्तर का एक आवश्यक स्तर निश्चित करने की प्राथमिक जिम्मेदारी स्वीकार करनी होगी।"

आगे चलकर काम के अधिकार के बारे में चर्चा करते हुए आयोग ने लिखा है—"जहां तक काम करने की बात है, समस्या मुख्यतया ग्रामीण क्षेत्रों में कम रोजगार और रोजगार के अभाव की है।" आगे चलकर ग्रामीण विकास की चर्चा करते हुए आयोग ने लिखा है—"नागरिक क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में जिनमें देश की जनसंख्या का तीन-चौथाई बसता है, प्रति व्यक्ति आय और खपत का स्तर बहुत कम है और यही बात शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन तथा अन्य आवश्यक सेवाओं तक पहुंच की है। सरकार ने इसलिए यह प्रतिबद्धता स्वीकार की है कि ग्रामीण विकास पर और अधिक जोर दिया जायेगा। ग्रामीण पुनर्निर्माण के लिए यह अत्यन्त महत्व का है कि खेती सम्बन्धी रिश्तों का पुनर्निर्धाण हो। भूमि सम्बन्धी कानूनों का पुनः निरीक्षण करने तथा उन्हें नये प्रकार से बनाने के लिए कदम उठाये जायें और उनका परिपालन प्रभावकारी बनाया जाये।"

ग्रामीण सुधारों के क्षेत्र में आयोग ने जिन बातों पर पुनर्ध्यान देने की आवश्यकता बतायी है, उनमें भूमि सीमा और अतिरिक्त भूमि को भूमिहीनों को बांटने पर जोर दिया है। वैसे भूमि सम्बन्धी अन्य सम्बन्धों पर भी उनकी दृष्टि में फिर से गौर करना जरूरी है। भूमिहीनों को दी जाने वाली जमीन के बारे में आयोग का विचार है कि उनको जो जमीन दी जाये, उसका पहले इतना विकास किया जाये कि वह जोत के लिए उपयोगी हो और स्वामियों को सामूहिक तौर पर विभिन्न गतिविधियों द्वारा जोत बढ़ाने के लिए उत्साहित किया जाये। आयोग की यह भी राय है कि जहां तक आदिवासी क्षेत्रों की धरती का सवाल है, इस बात का प्रतिबन्ध होना चाहिए कि वह भूमि गैर-आदिवासियों को न बेची जायेगी और न हस्तांतरित की जायेगी।

आयोग ने यह भी बताया है कि ग्रामीण जनता को लाभ देने वाली परियोजनाओं के विकास परिव्यय को काफी मात्रा में बढ़ाया जाये और लक्ष्य पचास प्रतिशत होना चाहिए। उन्होंने स्पष्ट किया है कि ग्रामीण आबादी को लाभप्रद योजनाएं कृषि, सिंचाई, ग्रामीण उद्योग, ग्रामीण विद्यालय, अस्पताल और सड़कें ही नहीं, बल्कि वे पूंजीनिवेश भी है जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था में योगदान दिया जा सके। जैसे कि उर्वरकों, कीटनाशकों, डीजल-तेल और बिजली तथा परिवहन और अन्य आधारभूत ढांचों में वह पूंजीनिवेश जो ग्रामीण उत्पाद को बिक्री करने तथा कृषि के लिए आवश्यक तत्वों के वितरण में सहायक हो। आयोग ने यह भी लिखा है कि यद्यपि इसकी गणना करने में कठिनाइयां हैं, किन सेवाओं में जो पूंजी लगेगी, उसमें कितने से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को लाभ होगा। परन्तु यह आवश्यक है कि इस बात की गारंटी की जाये कि योजना की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप इस कार्य के लिए अनुपातिक दृष्टि से व्यय निश्चित किया जाये और वर्तमान स्तर से पूंजीनिवेश को काफी बढ़ाया जाये। इस बात की भी परवाह करनी चाहिए कि इस प्रकार के कार्यों से ग्रामीण क्षेत्रों में, जो आपस में असमानता है, वह न बढ़ जाये या ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में जो असमानता है, उसमें वृद्धि हो।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि योजना आयोग का दृष्टिकोण व्यापक है और केवल ग्रामीण विकास में वन बढ़ाने को ही ग्रामों की कल्याण योजना की इतिश्री नहीं माना जाता। यहां यह उल्लेख करने में कोई दिक्कत नहीं है कि सातवीं पंचवर्षीय योजना में भी ग्रामीण विकास का लक्ष्य रखा गया था उसके प्राक्कथन में कहा गया था—"कृषि हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। इससे हमारे देश के सर्वाधिक लोगों का भरण-पोषण होता है और इस क्षेत्र में सबसे अधिक उत्पादक रोजगार पैदा किया जा सकता है। सफल औद्योगीकरण के लिए आवश्यक है कि हमारी कृषि का उत्पादन और तीव्र हो, जिससे कि कच्चा माल और बढ़ते हुए बाजार उपलब्ध हों। हमारी कृषि रणनीति ने

पिछले दशक में महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त की है और हमें सातवीं योजना में इस पर और अधिक जोर देना चाहिए। योजना में कृषि के विकास की एक व्यापक रणनीति है, इसका लक्ष्य है कृषि उत्पादन की विकास दर में चार प्रतिशत की वृद्धि। हमें अपनी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में संस्थागत परिवर्तन लाने हैं जिनमें भूमि विकास सम्मिलित है। हमारी रणनीति का एक विशेष पहलू यह है कि हरित क्रांति को पूर्वी क्षेत्रों और बारानी क्षेत्रों तक फैलायें। इससे हमारे विकास में जो क्षेत्रीय असंतुलन आ गया है, वह कम होगा और उससे गरीबी दूर करने में योगदान प्राप्त होगा।''

यहां हम देखते हैं कि दृष्टिकोण पत्र में पिछली योजना के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण दृष्टि-भेद है। जब सातवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य उत्पादन दर का विकास था क्योंकि उससे औद्योगीकरण को भी सहायता मिलती थी, नये योजना आयोग की यह नीति नहीं है। एक तो उन्होंने साफ-साफ कहा है कि हमारा उद्देश्य केवल उत्पादन दर को बढ़ाना नहीं है बल्कि अधिक से अधिक लोगों को रोजगार देना और उनके जीवन स्तर को उठाना है। आयोग की दृष्टि में यद्यपि कुल मिलाकर विकास दर में काफी वृद्धि हुई है और उसने अपने लक्ष्य प्रायः प्राप्त कर लिये हैं परन्तु विकास के जो स्वरूप सामने आये हैं, उनसे चिन्ता होती है।

योजना आयोग के दृष्टिकोण पत्र में इस बात पर चिन्ता प्रकट की गयी है कि सकल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि क्षेत्र का अंशदान कम हुआ है परन्तु जो लोग कृषि पर आधारित हैं, उनकी संख्या में कोई विशेष कमी नहीं हुई है। जो कमी हुई है वह बहुत मामूली है। इसका अर्थ यह है कि कृषि और गैर-कृषि क्षेत्रों के उत्पादन और उनकी आय में जो असमानता थी, वह और बढ़ गयी है और ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र का द्वंद्व और अधिक परिभाषित हो गया है। देश के विभिन्न भागों में और विभिन्न सामाजिक समूहों में जैसे मजदूरी पर काम करने वाले श्रमिकों और सम्पत्ति स्वामियों, संगठित और असंगठित क्षेत्र में काम करने वालों और स्त्री तथा पुरुषों के बीच की असमानताएं बढ़ती जा रही हैं। काम करने वालों की संख्या जिस मात्रा में बढ़ी है, उस मात्रा में रोजगार नहीं बढ़ा है और देहातों में और शहरी क्षेत्रों में बहुत से मजदूरों को न्यूनतम वेतन भी नहीं मिलता। परम्परागत कला-कौशल के उद्योगों में रोजगार के साधन कम होते जा रहे हैं। योजना आयोग को इस बात पर भी चिन्ता है कि जो आर्थिक विकास हुआ है, उसके कारण पर्यावरण की उपेक्षा हुई है या अवनति हुई है और प्राकृतिक साधनों का अनियंत्रित शोषण हुआ है। इसलिए आयोग को इन सभी क्षेत्रों को ध्यान में रखकर विकास के सम्बन्ध में एक नयी दृष्टि अपनानी पड़ी है और इस दृष्टि में यह कोशिश की गयी है कि ग्रामों की जो उपेक्षा की गयी है, उसे दूर किया जाये।

ऐसा नहीं है कि सातवीं पंचवर्षीय योजना का निर्धारण करते समय ये समस्याएं सामने नहीं थीं। सातवीं पंचवर्षीय योजना के प्रथम खण्ड में कृषि परिदृश्य की चर्चा करते हुए कहा गया था—''जबकि भारत की कृषि ने योजना के साढ़े तीन दशकों में बड़े लम्बे डग भरे हैं, देश में उत्पादन और विकास एक जैसा नहीं हुआ है। कृषि विकास के जो विभिन्न नमूने और गतियां रही हैं, विशेषतया खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि से क्षेत्रीय असमानताएं बढ़ी हैं। मुख्य फसलों में दालों और तिलहनों का उत्पादन बढ़ती हुई आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं है। कृषि विकास की परिदृश्य योजना का उद्देश्य खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता कायम रखना और दालों, तिलहनों तथा धागों के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना है। उसके अन्य उद्देश्य हैं रोजगार के अवसरों को बढ़ाना और पर्यावरण की रक्षा के उपाय करना, जिससे भूमि, जल और अन्य प्राकृतिक साधनों की गुणवत्ता में कमी नहीं आये।''

जैसा कि हम लिख चुके हैं दृष्टिकोण पत्र में एक तो साफ-साफ ग्रामीण विकास नाम से आयोजन के लक्ष्य निर्धारित किये हैं और इस बात पर जोर दिया है कि लक्ष्य पचास प्रतिशत धन को ग्रामीण जनता के हित में व्यय करना है। पिछली पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास पर और गरीबी उन्मूलन योजनाओं पर जो व्यय किया गया, उसकी आयोग ने अनदेखी नहीं की। पत्र के 24वें परिच्छेद में यह कहा गया है कि सार्वजनिक साधनों का काफी बड़ा अंश आज भी ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों पर व्यय हो रहा है। परन्तु उनका असर और उनकी उपयोगिता इसलिए कम हो जाती है कि कार्यक्रम टुकड़ों-टुकड़ों में बंटे हुए हैं, एक-दूसरे का विरोध होता है और कभी-कभी दो जगह एक ही काम होता है। विशेष क्षेत्रों की आवश्यकताओं और योग्यताओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नहीं चलाये जाते और केन्द्रीय तथा राज्य की नौकरशाहियों पर ही पूरा भरोसा किया जाता है। यह भी होता है कि इन कार्यक्रमों को राजनीतिक लाभ के लिए इस्तेमाल किया जाता है और कुछ शक्तिशाली सम्पन्न वर्ग उन्हें अपने काम के लिए इस्तेमाल करते हैं। इन प्रवृत्तियों को बदलना है, केवल पर्याप्त वित्तीय साधन ही नहीं चाहिए बल्कि ये कार्यक्रम किस प्रकार बनाए जायें, उनका आयोजन और कार्यान्वयन हो, इसके बारे में आधारभूत पुनर्विचार की आवश्यकता है। आयोग ने यह सुझाव दिया है कि आयोजन के क्षेत्र में विकेन्द्रीकरण होना चाहिए और छोटी सिंचाई योजनाओं धरती और जल के संरक्षण, स्थानीय बाढ़ को रोकने के प्रयासों,

प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य, पेय जल और आवास का काम स्थानीय सरकारों की चुनी हुई संस्थाओं को सौंप देना चाहिए। इसके फलस्वरूप प्रत्येक गांव या ब्लाक की पंचायत और उनका जिला स्तर का संगठन वित्त के एक बड़े भाग पर सीधा नियंत्रण रख सकेगा और उन्हें इस बात की छूट होगी कि स्थानीय विकास के लिए उस धन को किस काम में लगाया जाये। आयोग का यह भी कहना है कि स्थानीय क्षेत्रीय योजनाओं का उद्देश्य रोजगार बढ़ाना, उत्पादन बढ़ाना तथा विभिन्न आर्थिक गतिविधियों की आय बढ़ाना होगा। पुरुष और महिला कार्यकर्ताओं की योग्यताओं और साधनों का इस उद्देश्य से पूरा उपयोग होना चाहिए और इसका लक्ष्य होना चाहिए की सामाजिक दृष्टि से लाभकारी कार्य की व्यवस्था करना, बजाय इसके कि किसी प्रकार की राहत देना।

कृषि के क्षेत्र में आयोग का यह कहना है कि कृषि की विकास दर में वृद्धि इसलिए आवश्यक है कि हमारी अन्न और रेशे की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके, निर्धन और बेकार लोगों को रोजगार मिल सके। इस दृष्टि से यह सुझाव दिया गया है कि देश में 70 प्रतिशत भूमि ऐसी है जो अभी तक पानी के लिए वर्षा पर आधारित है। वहां पर सिंचाई की सुविधाओं को बढ़ाना है जिससे उत्पादन में वृद्धि हो सके और बारानी क्षेत्रों के लिए सुधरी हुई तकनीकों का विकास करना होगा। इस दृष्टि से कृषि का विकास विभिन्न फसलों और जलवायु वाले क्षेत्रों की आवश्यकता और क्षमता को ध्यान रखकर करना होगा।

ग्रामीण विकास और कृषि सम्बन्धी अध्यायों में गांवों के विकास की योजनाओं का उल्लेख होना आवश्यक है और दृष्टिकोण पत्र में ऐसा किया गया है परन्तु इस पत्र की एक विशेषता यह है कि अन्य अध्यायों में भी ग्रामीण क्षेत्रों का ध्यान बराबर रखा गया है और वह काफी महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए जहां पर शहरी गरीबी और बेरोजगारी की चर्चा की गयी है वहां पर यह कहा गया है कि देहात और शहर के बढ़ते हुए द्वंद्व को कम करने के लिए आव्रजन के कारण उत्पन्न तनाव को आसान करने के लिए और गांवों से कुशल व्यक्तियों की भगदड़ को रोकने के लिए तथा शहरों की आधारभूत सेवाओं की बढ़ती कमियों को ध्यान में रखते हुए यह जरूरी है कि बेकार लोगों को ग्रामीण क्षेत्रों से जाकर महानगरों में बसने से रोकना चाहिए। इसी तरह जब सामाजिक विकास का जिक्र आता है तो महिलाओं पर उचित ध्यान देने की बात कही गयी है और कहा गया है—"आठवीं योजना में महिलाओं की विकेन्द्रीकृत क्षेत्रीय आयोजन और स्थानीय कौशल तथा साधनों को जुटाने की परियोजना में विशेष भूमिका होगी।" उसमें आगे कहा गया है—"ग्रामीण महिलाओं की उत्पादक और सृजनात्मक ऊर्जाओं के विकास के लिए अधिकतम साधन लगाये जायेंगे, जिससे कि वे हमारे समाज के आर्थिक और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण में बराबर की साझीदार हो सकें।" इसी तरह जब अन्य कमजोर वर्गों की समस्याओं का जिक्र किया गया है, चाहे वे बंधुआ मजदूर हों या दलित हों, तो इस बात का जिक्र किया गया है कि दलितों में अधिकांश भूमिहीन हैं। उनमें से जिनके पास जो थोड़ी जमीन है, वे भी प्रायः सूखी है और उसका विकास भी नहीं हुआ है। इसलिए उनके स्वामियों को या तो पूर्णकालिक या कृषिकालिक खेतिहर मजदूर बनने के लिए बाध्य होना पड़ता है। उनके लिए जो न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की गयी है वह बहुत कम होती है और उतनी न्यूनतम मजदूरी भी कभी-कभार ही उन्हें मिलती है। बंधुआ मजदूरी प्रथा इस परम्परा का एक ऐसा उदाहरण है, जो शताब्दियों से चला आ रहा है। दलितों के उद्धार के लिए जो कार्यक्रम बताये गये हैं, उनमें यह कहा गया है कि जिन सूखे खेतों में सिंचाई संभव है तो उनमें बोर वैलों के द्वारा सिंचाई की सुविधा दी जाये, जिससे ये परिवार अपने खेतों पर सघन खेती के द्वारा सम्मान के साथ जीविका अर्जित कर सकें। इसी तरह अनुसूचित जातियों के बारे में जहां चर्चा की गयी है, वहां भी ग्रामीण विकास और वन विकास तथा पर्यावरण की रक्षा और छोटे-छोटे जल-साधनों और जल भण्डारों के निर्माण तथा वन साधनों को प्राप्त करने के उनके अधिकार पर जोर दिया गया है। इसी तरह शिक्षा साधनों की चर्चा करते हुए दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि शिक्षा साधनों और संस्थाओं की मांग और आपूर्ति के बीच में बड़ा अन्तर है। विशेषतौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में जहां स्कूलों में पढ़ाई छोड़कर जाने वाले छात्रों की संख्या बहुत अधिक है। परिणामस्वरूप गांवों में स्कूल तो बन जाते हैं, वहां पर या तो पढ़ाने वाले अध्यापक नहीं होते या पढ़ने वाले छात्र नहीं होते। इसी प्रकार स्वास्थ्य सेवाओं के सुधार का जो कार्यक्रम बनाया गया है उसमें ग्रामीण क्षेत्रों की उपेक्षा नहीं की गयी है। इस बात की शिकायत की गयी है कि जनता द्वारा बहुत अधिक खर्च पर जो डाक्टर तैयार होते हैं, वे ग्रामीण क्षेत्रों में सेवा करने के लिए उपलब्ध नहीं होते। इसलिए डाक्टरी शिक्षा में आधारभूत परिवर्तन की आवश्यकता है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया है कि इस प्रकार के चिकित्सक, कार्य-कुशल व्यक्ति तैयार किये जायें, जो ग्रामीण क्षेत्रों में काम कर सकें। दृष्टिकोण पत्र के 67वें अनुच्छेद में इस बात को जोर देकर कहा गया है कि प्राथमिक शिक्षा सबके लिए सुलभ करना, निरक्षरता उन्मूलन, निरोधक तथा उपचार करने वाली स्वास्थ्य चिन्ता की गुणवत्ता में वृद्धि और ग्रामीण क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा का हमारे कार्यक्रम में केन्द्रीय स्थान होगा। इसी तरह अन्य उपायों के साथ-साथ भूमि सुधारों को भी आवश्यक माना गया है।

जब दृष्टिकोण पत्र में विज्ञान और तकनीक का उल्लेख है तो कहा गया है कि भारत की जनता के कल्याण में सुधार के लिए आवश्यक होगा कि विज्ञान और तकनीक का उनमें पर्याप्त योगदान हो। जो ग्रामीण विकास कार्यक्रम सुझाये गये हैं, वे आंकड़ा प्राप्ति, विश्लेषण, संचार, जीव विज्ञान और विकेन्द्रित गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों तथा अन्य सुधरी हुई तकनीकों से बहुत लाभान्वित हो सकते हैं। इसी तरह पर्यावरण के बारे में भी जहां चर्चा की गयी है, वहां पर वनों के कटाव, पर्यावरण और नदियों के प्रदूषण और धरती की ऊपरी परत की अवनति का जिक्र कर उसे ठीक करने के लिए कहा गया है। इसी संदर्भ में यह भी कहा गया है कि सामाजिक तथा आर्थिक विकास को विशेषतया ग्रामीण क्षेत्रों में कायम रखने के लिए यह आवश्यक है कि हम बचे हुए वनों की रक्षा करें और जैविक साधनों में वृद्धि करें, विशेषतया बंजर भूमि के विकास से। यदि हम वनों और बंजर भूमि की पूर्ण संभावनाओं का निरंतर विकास कर सकें तो उससे काफी लोगों को रोजगार मिलने की संभावनाएं हैं और ये ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनः शक्तिशाली बनाने में एक प्रमुख भूमिका अदा करेगी। वनों के स्थायी प्रबन्ध के लिए एक ऐसे संगठन की आवश्यकता होगी जिसमें जनता की सक्रिय भागीदारी हो। परम्परागत तरीके से अभी तक वन साधनों की व्यवस्था से जनता को दूर रखा गया है और जोर इस बात पर रखा गया है कि वनों पर निगरानी इस प्रकार रखी जाये कि जनता उसमें दखल न दे सके। इसका परिणाम यह हुआ है कि जो उद्देश्य ध्यान में रखे गये थे, उनकी पूर्ति नहीं हुई और लोग नाराज हो गये। आदिवासी जनता के बारे में यह विशेष रूप से सही है क्योंकि वे जंगलों की छोटी उत्पादों पर परम्परागत रूप से निर्भर रहे हैं। पेड़ों की रक्षा में उनका राष्ट्रीय हित है, इसलिए प्रत्येक प्रयास कर ग्रामीण लोगों को इस कार्य में सम्मिलित करना चाहिए।

कुछ ऐसे विषय हैं जो मुख्यतया नगरों के विषय कहे जाते हैं। उद्योग उनमें एक है। उद्योग के सामने अनेकों चुनौतियां हैं। हम आत्मनिर्भर हों या अपने औद्योगिक सामान को निर्यात के लिए तैयार करें और अपनी जरूरत की चीजें बाहर से मंगायें। उद्योग में राष्ट्र का नियंत्रण कम हो या ज्यादा, उदारता यदि बरती जाये तो कहां तक, विदेशी पूंजी को यदि भारत में प्रवेश करने दिया जाये तो किन क्षेत्रों में। ये ऐसे प्रश्न हैं जो राष्ट्रीय नीति के हैं और उसमें साधारणतया शहर और गांव का भेद नहीं किया जाता। योजना आयोग ने भी इन प्रश्नों पर आधुनिक दृष्टि से विचार किया है और औद्योगिकीकरण के मामले में जो खामियां दिखाई दी हैं उन्हें दूर करने के उपाय सुझाये हैं। जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किस प्रकार के सामान की आवश्यकता है और उससे किस तरह बेकारी तथा गरीबी दूर हो सकती है। इसकी चर्चा करते-करते दृष्टिकोण पत्र में इस बात पर जोर दिया गया है कि नीति इस बात की व्यवस्था करे कि कुटीर और छोटे उत्पादकों को उद्योग में लगाने के उपादान लाभकारी शर्तों पर नहीं तो कम से कम बराबर की शर्तों पर प्राप्त हों। साथ ही इस बात के प्रयास किये जायें कि उद्योग को विशेषतौर पर छोटे उद्योगों को ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में ले जाया जाये। इसके लिए एक संतुलित दृष्टि की आवश्यकता होगी और इसमें सबसे पहले गांव और घरेलू उद्योगों को प्रोत्साहन देना होगा। इनमें वे उद्योग हैं जो खादी और ग्रामीण उद्योगों के क्षेत्र में आते हैं, हथकरघे हैं, हस्तशिल्प हैं, रेशम उत्पादन हैं और नारियल रेशे का उत्पादन है, जिसमें स्थानीय साधनों और कौशलों का उपयोग भी हो जाता है, कम पूंजी लगाकर अधिक लाभप्रद रोजगार प्राप्त होता है और लोगों के लिए सबसे कम फेर-बदल या स्थानांतरण होता है।

आयोग ने जब अपना दृष्टिकोण पत्र का सारांश वर्णित किया तो ग्रामीणों की समस्याओं को पीछे नहीं पड़ने दिया। उसकी राय थी कि आठवीं योजना के प्रथम वर्ष में ही लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया पूरी हो और ग्रामीण विकास के दृष्टिकोण में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आये। वह परिवर्तन यह हो कि अभी विकास विभागों द्वारा होता है, अब वह समेकित स्थानीय, क्षेत्रीय आयोजन द्वारा हो और स्थानीय लोकतांत्रिक संगठनों का आयोजन, कार्यान्वयन और साधन का दायित्व सौंपा जाये। साथ ही कृषि को अधिक स्थायी और उत्पादक धंधा बनाना, सिंचाई और अधिक सुविधाओं की वृद्धि करना, बारानी क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाना, ग्रामीण क्षेत्रों को साधन और उपादान प्राप्त करने में अधिक न्यायोचित अवसर देना तथा किसानों को लाभकारी मूल्य देना व ग्रामीण श्रमिकों को उचित मजदूरी देना शामिल है।

55, काका नगर, नई दिल्ली-110003

आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए बेहतर दिशा निर्देश

डा. मैलकम एस. आदिशेषैया

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र के संबंध में दो बातें मुख्य रूप से कही जा सकती हैं। पहली तो यह कि दृष्टिकोण पत्र में विस्तृत दिशा-निर्देशों, मापदण्डों और नीतियों की उचित रूप में शुरुआत की गई है और इनसे संबंधित कार्यक्रमों तथा उपर्युक्त परियोजनाओं के विकास का कार्य राज्यों और स्थानीय स्तर के संस्थानों पर छोड़ दिया गया है। आशा है कि दिशा-निर्देशन मापदण्ड-निर्धारण के इस प्रस्ताव पर राष्ट्रीय योजना बनाते समय ध्यान दिया जायेगा जिसमें योजना के लिए उपलब्धता और क्षेत्रीय तथा अंतर्राज्य वितरण के लिए वित्तीय सीमाएं निर्धारित करनी होंगी। इसमें अंतर्ग्रस्त और योजना के लिए विदेशी व्यापार लेखा, रेलवे, इस्पात और लौह रहित धातु, कच्चा तेल और गैस उत्पादन जैसी राष्ट्रव्यापी बड़ी परियोजनाओं के पुनरीक्षण और अनुमोदन के लिए वित्तीय सीमाएं निर्धारित करनी होंगी।

दृष्टिकोण पत्र के संबंध में दूसरी बात यह है कि इसमें आंकड़ों से दूरी बरती गई है जो कि पूर्व में हम सब के लिए काफी आकर्षक होते थे। ये आंकड़े अर्थव्यवस्था के सम्पूर्ण विकास दर के लक्ष्य, बचत दर, आई. सी. ओ. आर., गरीबी की सीमा रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों की प्रतिशतता, विभिन्न जनसांख्यिकीय आंकड़ों से संबंधित होते थे। इन आंकड़ों में गड़बड़ी की जा सकती है और कुछ मामलों में की भी गई है, जैसे कि तथाकथित गरीबी की सीमा-रेखा पार करने वाले व्यक्तियों की संख्या, जिसे हमेशा स्वीकार भी नहीं किया गया, प्रस्तावित संख्या और वास्तविक उपलब्धि में समय के साथ-साथ अंतर बढ़ा है और इनसे हमारा ध्यान वास्तविकता से दूर हटा है। दृष्टिकोण पत्र के अंत में जो आंकड़े घोषित किये गये हैं वे तदर्थ रूप से लादे गये प्रतीत होते हैं तथा इस पत्र में दी गई नीतियों और दिशा-निर्देशों के अनुरूप नहीं हैं।

विकेन्द्रीकरण

जहां तक ग्रामीण विकास का संबंध है यह देश के 85% भाग, जहां 75% लोग रहते हैं, के विकास और सुधार से जुड़ा हुआ है। इस प्रकार का विकास देश की राजधानी से राष्ट्रीय योजना के माध्यम से अथवा ग्रामीण विकास विभाग या राज्यों की राजधानियों में स्थित इसी प्रकार के किसी संस्थान से आदेश जारी करके नहीं किया जा सकता। यह कार्य स्थानीय निकायों, पंचायतों, पंचायत संघों, पंचायत परिषदों द्वारा योजना बनाने और संबंधित कार्यवाही करने का है। अतः दृष्टिकोण पत्र में दिए गए ये दिशा-निर्देश स्वागत योग्य हैं कि "योजना बनाने और आर्थिक तथा समाज विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की जिम्मेदारी के एक बड़े भाग को स्थानीय सरकार के निर्वाचित प्रतिनिधि संस्थानों को हस्तांतरित कर दिया जाये।" कुछ मुद्दे ऐसे हैं जिन पर और विचार किये जाने की आवश्यकता है जो इस प्रकार हैं:—(i) दृष्टिकोण पत्र के पैरा 7.5 में हस्तांतरण हेतु जो सात विषय प्रस्तावित किये गये हैं उनके अतिरिक्त प्राथमिक शिक्षा में प्रौढ़ शिक्षा को भी जोड़ दिया जाना चाहिये। प्रसूति, बाल-स्वास्थ्य और परिवार कल्याण को स्वास्थ्य में शामिल किया जाना चाहिए तथा ग्रामोद्योग और गरीबी-उन्मूलन कार्यक्रमों को कृषि तथा संबद्ध क्रियाकलापों में सम्मिलित कर लिया जाना चाहिये, (ii) 25 राज्यों में से केवल छः राज्यों में ही निर्वाचित स्थानीय निकाय विद्यमान हैं अतः अन्य राज्यों में निर्वाचन प्रक्रिया में तेजी लाने के साथ-साथ खंड विकास अधिकारियों के माध्यम से अंतरिम व्यवस्था की जानी चाहिये, (iii) चूंकि स्थानीय स्तर पर इस प्रकार की योजना और प्रबंध स्थानीय स्तर के विकास को सुनिश्चित करेगा अतः इस प्रकार के विकास को समेकित करके दृष्टिकोण पत्र के अनुसार इसके लाभों का एक समान वितरण करने के लिए पश्चिम बंगाल और केरल की तरह भूमि सुधार किया जाना चाहिये जो कि स्थानीय चुनावों से पूर्व होना चाहिये। जिससे कि निर्वाचित प्रतिनिधि आय और परिसंपत्तियों के वितरण की दृष्टि से स्थानीय समुदायों के प्रतिनिधि हों, (iv) इस प्रणाली की एक मुख्य बात यह है कि स्थानीय निकायों को कर्मचारी और पर्याप्त वित्तीय स्रोत उपलब्ध कराये जायें। कर्मचारियों के मामले में उनके द्वारा प्रतिरोध किया जायेगा और वित्त के संबंध में राज्य सरकार और राज्य की अफसरशाही द्वारा इसी प्रकार का विरोध होगा। इसका मुकाबला स्थानीय स्तर की सरकार के मामलों में राज्य की सीधी अंतर्ग्रस्तता में भारी कमी करके और राज्य द्वारा स्थानीय निकायों को आवश्यक व्यय और मूलभूत सुविधाएं प्रदान करके करना होगा।

कृषि

ग्रामीण विकास में खाद्य और नकद फसलों का विकास और उसके लिए आवश्यक आदानों—सिंचाई, उर्वरक, बीज और

अन्य संबंधित आदानों—पशु-पालन, डेरी और कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन,—आंतरिक और समुद्री—वनरोपण तथा कृषि उद्योग सम्मिलित हैं। योजना द्वारा आज तक लागू किए गए ग्रामीण विकास के इस बड़े क्षेत्र में व्याप्त गड़बड़ी को ठीक करने की आवश्यकता की ओर दृष्टिकोण पत्र में ध्यान दिलाया गया है। इसके कारण राष्ट्रीय आय में इस क्षेत्र के अंशदान में कमी आई है, जो कि योजना प्रक्रिया के प्रारंभ में 50% से घट कर आज 29% रह गया है। इस क्षेत्र को नया जीवन प्रदान करने के लिए निम्नलिखित की आवश्यकता है:—

(क) वर्षा पर आधारित क्षेत्र का विकास जो कि कृषि क्षेत्र का 70% से अधिक है,

(ख) भूमि और जल का योजनाबद्ध प्रयोग,

(ग) कृषि सुविधाओं का विस्तार और उनमें सुधार,

(घ) प्रयोगशालाओं के अनुसंधान कार्य को कृषि क्षेत्र की आवश्यकताओं से संबद्ध किया जाना,

(ङ) बिक्री के लिए फल-सब्जियां उगाने, उद्यान कृषि, रेशम-कीट पालन, कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन, डेरी और पशु पालन, कृषि संसाधन में निवेश और आदानों को एक-समान महत्व दिया जाना और निर्माण उद्योग के साथ सम्पर्क बनाये रखना,

(च) कृषि निर्यात में वृद्धि जिससे कृषकों की आय में भी वृद्धि होगी और

(छ) अंतिम रूप से सब कुछ कृषि मूल्य नीति पर निर्भर है जिसका उद्देश्य मूल्यों में होने वाले भारी उतार-चढ़ाव को दूर करना और आधुनिक प्रौद्योगिकी को स्वीकार किये जाने और अपनाये जाने के लिए आवश्यक प्रोत्साहन देना है जिससे कि उत्पादन में वृद्धि हो तथा ग्रामीण पूंजी का निर्माण हो सके।

ग्रामीण विकास में निवेश

इस प्रकार कृषि को एक उद्योग का दर्जा दिये जाने के लिए जिसका अर्थव्यवस्था में प्रमुख स्थान हो, दृष्टिकोण पत्र में यह प्रस्ताव दिया गया है कि "ग्रामीण जनसंख्या के लाभार्थ बनाई जाने वाली योजनाओं के विकास परिव्यय के अनुपात में उल्लेखनीय वृद्धि की जाये जिसका लक्ष्य 50% रखा गया है।" इस प्रस्ताव में ग्रामीण विकास परिव्यय में 50% के लक्ष्य तक की वृद्धि करने के लिए अनेक मामलों के संबंध में स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। पहली तो यह कि इसमें केवल केन्द्रीय क्षेत्र का सार्वजनिक परिव्यय ही अंतर्ग्रस्त नहीं है क्योंकि कृषि और ग्रामीण विकास सामान्य रूप से राज्यों का विषय है इसलिए इसका परिकलन करने के लिए राज्यों के परिव्यय पर भी विचार करना होगा। लेकिन राज्यों के इस प्रकार के आंकड़े केवल अंतराल से उपलब्ध हैं। दूसरी बात यह है कि प्रश्नगत परिव्यय में केवल सरकारी—केन्द्रीय और राज्यों का—परिव्यय ही शामिल नहीं होना चाहिए बल्कि इसमें कृषि के अधीन लाये जाने वाले 180 मिलियन एकड़ बंजर भू-क्षेत्र में उनके धीरे-धीरे बढ़ते निवेश के हिस्से को भी शामिल किया जाना चाहिए। इस संबंध में कोई वास्तविक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। तीसरी बात यह है कि इस बारे में कोई सहमति होनी चाहिये कि जिन 13 मदों के संबंध में केन्द्रीय और राज्य सरकारों के सार्वजनिक क्षेत्र के लिए परिव्यय का आवंटन किया गया है उनमें से 50% लक्ष्य का परिकलन करने के लिए मदों को शामिल किया जाये जबकि कृषि, सिंचाई और संबद्ध विषयों जैसी कुछ मदें पूरी तरह से ग्रामीण विकास की श्रेणी में आती हैं। ऊर्जा, परिवहन, संचार और यहां तक कि शिक्षा तथा स्वास्थ्य जैसी मदों के लिए परिव्यय की प्रतिशतता पर सहमति होने में समस्या है जबकि ये सभी मदें ग्रामीण विकास से जुड़ी होनी चाहिए।

पिछली सात पंचवर्षीय योजनाओं के संबंधित आंकड़ों का अध्ययन किया जाये तो यह स्पष्ट होता है कि देश की योजनाओं के कुल परिव्यय में से कृषि और ग्रामीण गतिविधियों के परिव्यय में तेजी से कमी आई है। यह गंभीर बात है और इससे दृष्टिकोण पत्र में कृषि और ग्रामीण निवेश की ओर अपनाये गये रवैये का पता चलता है। इस संबंध में योजना आयोग द्वारा 1990 के प्रारंभ में किये गये एक अध्ययन के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी क्षेत्र परिव्यय के 50% लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राज्यों की (संघ राज्य क्षेत्रों) ग्रामीण क्रियाकलापों संबंधी योजना के परिव्यय को वर्तमान 59% से बढ़ा कर 65% करना होगा और केन्द्रीय क्षेत्र में 32% से बढ़ाकर 35% करना होगा। इससे स्पष्ट होता है कि सातवीं योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के 222, 169.25 करोड़ रुपये के कुल परिव्यय में से ग्रामीण क्रियाकलापों पर 99,521.25 करोड़ रुपये खर्च किये गये थे। इसका अभिप्राय यह हुआ कि 44.8% खर्च किया गया और अब इसे बढ़ाकर 50% किया जाना है।

ग्रामीण विकास, रोजगार और गरीबी उन्मूलन

ग्रामीण विकास के कार्य में कृषि तथा संबद्ध क्रियाकलापों में निवेश किये जाने से लेकर भूमि सुधार तक की गतिविधियों की सब जटिलताएं शामिल हैं जिसमें भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित करने तथा उसको प्रभावी रूप में तेजी से लागू किये जाने, फालतू भूमि का वितरण और उसके विकास के साधन, काश्तकारी को बड़े पैमाने पर नियमित किया जाना, न्यूनतम मजदूरी में संशोधन और वास भूमि क्षेत्र के लागू किये जाने वाले उपबंध शामिल हैं। हाल ही में 66वें संविधान संशोधन द्वारा एक अच्छी शुरुआत की गई है जिसके द्वारा भूमि सुधार संबंधी

सभी पहलुओं को 9वीं अनुसूची के अंतर्गत शामिल कर लिया गया है। इससे बेनामी सौदों का हल हो जाना चाहिए तथा भूमि सुधार बंदोबस्त के मामलों में लगने वाले लम्बे समय में कमी आनी चाहिए। ग्रामीण विकास का दूसरा पहलू यह भी है कि 20 सूत्री कार्यक्रम की कुछ महत्वपूर्ण बातों को शीघ्रता से लागू किया जाए जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ प्रौढ़ शिक्षा और ग्रामीण प्राथमिक शिक्षा, शिशु मृत्यु दर में कमी लाने सहित सभी ग्रामीण लोगों को स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराना शामिल है। तीसरा पहलू समेकित ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों से संबंधित है जिसके (जैसे आई. आर. डी. पी., एन. आर. ई. पी., आर. एल. ई. जी. पी., जिन्हें अब ये जे. आर. वाई., डवाकरा, ट्राइसेम में मिला दिया गया है) के अधीन लगभग 5000 करोड़ रुपये वार्षिक खर्च किये गये हैं। ये सभी कार्यक्रम बेरोजगार और अल्प बेरोजगार लोगों की समस्याओं का मुकाबला करने के लिए राहत कार्यक्रम हैं। इस प्रकार अल्पकालिक राहत प्रयत्न ग्रामीण गरीबों के लिए आवश्यक है जिनके लिए योजनाओं के कार्यान्वयन और प्रबंध को दिल्ली और या राज्य की राजधानियों से हटा कर स्थानीय गांवों या पंचायतों के स्तर पर लाया गया है और उनके द्वारा ही गरीब परिवारों की ठीक तरह से पहचान की जा सकती है और यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि राहत का लाभ उन तक पहुंचे।

रोजगार

ग्रामीण विकास के प्रयत्नों में प्रमुख है लाभप्रद रोजगार पैदा करना—लाभप्रद इसलिए कि गांवों में रोजगार में लगे 70% से अधिक लोगों को या तो पूरे समय के लिए रोजगार नहीं मिलता या बेराजगार होते हैं या बहुत ही कम दरों पर अपनी दक्षता से भिन्न कोई भी काम कर देते हैं।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि पूर्ण-कालिक लाभप्रद रोजगार उपलब्ध कराया जाये जो कि ग्रामीण विकास कार्यक्रम का प्रमुख कार्य है। लाभप्रद रोजगार की आवश्यकता इसलिए है कि श्रमिकों में बढ़ती अनियमितता और इससे जुड़ी कम मजदूरी का मुकाबला किया जा सके। राष्ट्रीय श्रम संस्थान द्वारा असंगठित श्रमिकों के लिए घोषित न्यूनतम मजदूरी, जिसे राज्यों से प्राप्त धन पर चलने वाले सभी गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों द्वारा अपनाया गया है, अलग-अलग राज्यों में 8.50 रुपये से 12.75 रुपये प्रति श्रमिक प्रतिदिन है। संस्थान ने इस बात की ओर भी इंगित किया है कि यदि अधिक दर को भी लिया जाये तो 3600 रुपये वार्षिक होता है जबकि सरकार द्वारा घोषित गरीबी की सीमा रेखा 6400 रुपये वार्षिक निर्धारित की गई है। इसका अर्थ यह हुआ कि केरल के अलावा सभी राज्यों में न्यूनतम मजदूरी श्रमिकों को और उनके परिवारों को गरीबी में रहने को बाध्य करती हैं। इससे भी बुरी बात संस्थान द्वारा यह बतायी गई है कि इस न्यूनतम मजदूरी का भी सभी राज्यों में (केरल के अतिरिक्त) भुगतान नहीं किया जाता है। इसके लिए जो रिकार्ड और रजिस्टर आदि रखे जाने आवश्यक हैं वे भी नहीं रखे जाते तथा भुगतान की गई वास्तविक मजदूरी और सामान के रूप में दी गई मजदूरी कानूनी मजदूरी का लगभग 50% ही होती है। मई, 1990 में पुनर्गठित राष्ट्रीय ग्रामीण श्रमिक आयोग को चाहिये कि वह 1986 में हुए श्रम मंत्रियों के सम्मेलन में दिए गए सुझावों के अनुसार कानूनी तौर पर निर्धारित न्यूनतम मजदूरी कानूनों को राज्यों द्वारा लागू किये जाने में सहायता प्रदान करें। इस सम्मेलन में यह सुझाव भी दिया गया था कि हर दो वर्ष के बाद बढ़ते निर्वाह व्यय को दृष्टि में रखते हुए मजदूरी की दरों में संशोधन किया जाये। दृष्टिकोण पत्र में 8वीं और नवीं योजना के दौरान रोजगार के अवसरों में 3% वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है। इसका अनुमान इस आधार पर लगाया गया है कि श्रमिकों की संख्या में 2% से अधिक की वृद्धि होगी।

दृष्टिकोण पत्र में प्रस्तावित वित्तीय उपायों की शुरुआत ग्रामीण विकास को दी गई नवीन दिशा के परिणामों से होगी और इसमें ही उपलब्ध साधनों का और अधिक कुशलता से उपयोग, कृषि में उर्वरकों के उत्पादन में वृद्धि, ऊर्जा की बचत करने में शीघ्रता, प्रशासन में सुधार तथा राजस्व बजट की गिरती हुई स्थिति को संभालना भी शामिल होगा। ये सामान्य बातें ठोस और अच्छी हैं लेकिन इनमें कुछ विशिष्ट बातें नहीं हैं जो वित्तीय असंतुलन को ठीक कर सकती हैं, जैसे कि (क) योजना अवधि के दौरान केन्द्रीय और राज्य सरकार के अत्यधिक कर्मचारीवृन्द में, (ख) रक्षा संबंधी फिजूलखर्ची की विशिष्ट राशि में और (ग) मध्यम स्तर की सहायक कम्पनियों में कमी की प्रस्तावित वार्षिक प्रतिशतता। आठवीं योजना की उच्च प्राथमिकता अर्थात्—काम का अधिकार जो कि ग्रामीण विकास की कुंजी है को वित्त प्रदान कराने में भी इनका योगदान होगा।

अनुवाद: आर. एस. शर्मा,
922, लक्ष्मीबाई नगर,
नई दिल्ली-110023

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र पर एक नजर

देवकृष्ण व्यास

सात पंचवर्षीय योजनाएं पूरी हो चुकीं और आठवीं पंचवर्षीय योजना को अन्तिम रूप दिया जा रहा है। अफसोस है कि योजनाओं पर अरबों-खरबों रुपया खर्च करने के बाद भी गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता और अस्वस्थता सरकार के लिए चुनौती बनी हुई है। योजना आयोग द्वारा तैयार किए गए आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में पिछली योजनाओं की कमियों और खामियों पर प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही यह आश्वासन भी दिया गया है कि आयोजन प्रक्रिया में आवश्यक सुधार कर समाज परिवर्तन के लक्ष्य को प्राप्त किया जाएगा।

राष्ट्रीय विकास परिषद ने गत 18 और 19 जून को हुई अपनी बैठक में दृष्टिकोण पत्र को स्वीकृति प्रदान कर दी है। केन्द्रीय मंत्रि परिषद ने भी इस पर अपनी मोहर लगा दी है। प्रधानमंत्री ने मुख्यमंत्रियों द्वारा दिए गए सुझावों को ध्यान में रखते हुए आर्थिक नीतियों में आवश्यक परिवर्तन करने का संकेत भी दिया है।

दृष्टिकोण पत्र में अर्थव्यवस्था की जो तसवीर प्रस्तुत की गई है वह वास्तव में चिंताजनक है। यह स्वीकार किया गया है कि प्रति व्यक्ति उत्पादन और आय की दृष्टि से कृषि और गैर-कृषि क्षेत्रों के बीच विषमताएं बढ़ी हैं। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों तथा संगठित और गैर-संगठित क्षेत्रों के बीच आर्थिक असमानता में भी वृद्धि हुई है। समग्र रोजगार में श्रमिक बल की अपेक्षा धीमी गति से बढ़ोतरी हुई है। सरकार की नीतियां परंपरागत शिल्पों तथा उद्योगों के विकास को बढ़ावा देने में असफल रही हैं। कृषि उत्पादन जनसंख्या वृद्धि की गति के साथ नहीं बढ़ रहा है। जनसंख्या संवृद्धि दर में कमी लाने के प्रयास भी विफल रहे हैं।

दृष्टिकोण पत्र के अनुसार घरेलू और सार्वजनिक बचत की स्थिति संतोषजनक नहीं है। बजट घाटे में उत्तरोत्तर वृद्धि होना भी चिन्ता का कारण है। 1989-90 में केन्द्र का घाटा 12,436 करोड़ रुपये तक पहुंच गया। सरकार को अपने चालू खर्च के लिए भारी मात्रा में उधार लेना पड़ा है। सरकारी उद्यमों से वांछित लाभ प्राप्त नहीं हो सका है। भुगतान संतुलन और विदेशी मुद्रा कोष की स्थिति भी चिन्ताजनक बनी हुई है। काले धन के कारण समानान्तर अर्थव्यवस्था पैदा हो गई है। विदेशी ऋण का दबाव भी बढ़ता जा रहा है।

योजना आयोग ने आठवीं पंचवर्षीय योजना में रोजगार को प्राथमिकता देकर निश्चय ही सराहनीय कदम उठाया है। बेरोजगारी हमारे देश की अत्यंत ज्वलन्त समस्या है। गांवों और शहरों में बेरोजगारों की संख्या का निरन्तर बढ़ना समाज और सरकार दोनों के लिए परेशानी का विषय बन गया है। सरकार प्रत्येक व्यक्ति को काम का अधिकार देने के प्रति वचनबद्ध है। दृष्टिकोण पत्र में इस बात पर बल दिया गया है कि विकास देश के सभी क्षेत्रों में और सभी वर्गों के लोगों के बीच समान रूप से हो। ग्रामीण क्षेत्रों से रोजगार की तलाश में हो रहे पलायन को रोकने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में लाभप्रद रोजगार के अधिक अवसर प्रदान किए जाएं। वस्तुतः बेरोजगारी ही गरीबी का मूल कारण है। उत्पादक रोजगार के अधिक से अधिक साधन सुलभ कराके ही गरीबी का उन्मूलन किया जा सकता है।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के जो मुख्य लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं, वे इस प्रकार हैं—(1) सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर 5.5 प्रतिशत प्रति वर्ष, (2) घरेलू बचत दर सकल घरेलू उत्पाद की 20.5 प्रतिशत, (3) वार्षिक रोजगार वृद्धि की दर चालू दशक में 3 प्रतिशत अधिक, (4) निर्यात में मात्रा की दृष्टि से 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष की वृद्धि, (5) कृषि और ग्रामीण विकास के लिए निवेश योग्य 50 प्रतिशत संसाधन निश्चित करना और (6) 1990 के दशक की समाप्ति तक निरक्षरता का निवारण।

योजना आयोग द्वारा निर्धारित ये लक्ष्य निश्चय ही स्वागत योग्य हैं। पर सवाल यह है कि क्या ये लक्ष्य प्राप्त किए जा सकेंगे। 5.5 प्रतिशत की विकास दर अधिक महत्वाकांक्षी नहीं है पर यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि यह विकास दर किस आधार पर निश्चित की गई है। रोजगार में वृद्धि की दर 3 प्रतिशत रखी गई है जो वास्तविक प्रतीत नहीं होती। देखा गया है कि अतीत में जब सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर 5 प्रतिशत से अधिक थी तब भी रोजगार में उस गति से वृद्धि नहीं हुई जिस गति से श्रम शक्ति में वृद्धि हुई। जहां तक निर्यात का प्रश्न है, हाल ही के वर्षों में वह मात्रा की दृष्टि से 11 प्रतिशत बढ़ा है। 12 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य प्राप्त करना कठिन नहीं है। किस्म में सुधार और लागत मूल्य में कमी करके ही भारत के

निर्यात को बढ़ाया जा सकता है। आठवीं योजना में कृषि और ग्रामीण विकास के लिए 50 प्रतिशत संसाधन निश्चित करके योजना आयोग ने सही कदम उठाया है। निरक्षरता निवारण के बारे में दृष्टिकोण पत्र में जो लक्ष्य रखा गया है वह स्वागत योग्य है। अशिक्षा और अज्ञान के कारण ही गरीबी, पिछड़ेपन और अस्वास्थ्य की समस्याएं हैं। केवल लक्ष्य निर्धारित करना ही पर्याप्त नहीं है, ऐसा व्यापक अभियान चलाना होगा जिससे निरक्षरता का कलंक समाप्त हो सके।

भारत कृषि प्रधान देश है और कृषि एवं कृषि उपज पर ही देश की समृद्धि निर्भर करती है। दृष्टिकोण पत्र में कृषि को सिंचाई तथा अन्य सुविधाएं सुलभ कराके उत्पादनकारी और लाभकारी व्यवसाय बनाने पर जो बल दिया गया है वह सर्वथा उचित है। कृषि के आधुनिकीकरण, लाभकारी कृषि मूल्य, भूमि सुधार, सिंचाई सुविधाएं, उन्नत तकनीक आदि उपायों के द्वारा ही कृषि का विकास संभव है। सरकार ने राष्ट्रीय कृषि नीति का एक प्रारूप तैयार किया है। राज्य सरकारों और कृषि विशेषज्ञों से विचार-विमर्श करके इस नीति को शीघ्र अंतिम रूप दिए जाने की आशा है। घोषणा की गई है कि कृषि नीति सम्बंधी संकल्प शीघ्र ही संसद में प्रस्तुत किया जाएगा।

यह संतोष की बात है कि खाद्यान्नों में हमने आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है पर दलहनों और तिलहनों में स्थिति चिन्ताजनक है। इनका उत्पादन बढ़ाने की ओर विशेष ध्यान देना होगा। आयात के कारण विदेशी मुद्रा का संकट बढ़ता जा रहा है। उत्पादकता का औसत बढ़ाकर तथा कृषि क्षेत्र का विस्तार करके ही कृषि का समुचित विकास किया जा सकता है।

योजना आयोग ने कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने की भी रणनीति बनाई है। लाभकारी रोजगार में वृद्धि, संतुलित क्षेत्रीय विकास, तकनीकी सहयोग से उत्पादकता में बढ़ोतरी और चुनिंदा क्षेत्रों में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा की क्षमता प्राप्त करना औद्योगिक नीति के मुख्य उद्देश्य हैं। योजना आयोग ने सुझाव दिया है कि नौकरशाही का नियंत्रण कम करके ही औद्योगिक विकास को गति प्रदान की जा सकती है। दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि ग्रामीण और लघु उद्योगों के विकास की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। उन्नत तकनीकी के द्वारा माल की किस्म में सुधार करने पर बल दिया गया है। आम उपभोक्ता वस्तुओं के लिए श्रम-प्रधान इकाइयों को प्रोत्साहित करने का सुझाव दिया गया है।

औद्योगिक नीति की यह विशेषता है कि इसमें उन उद्योगों के विकास को नियंत्रित करने की बात की गई है जो केवल संपन्न वर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इस नीति के अन्तर्गत केवल वे रुग्ण इकाइयां ही सरकारी सहायता प्राप्त कर सकेंगी जो आधुनिकीकरण के जरिए पुनः चालू होने की स्थिति में होंगी। विदेशी पूंजी को उत्तम प्रौद्योगिकी को लाने के लिए माध्यम के रूप में इस्तेमाल करने की सलाह दी गई है। दृष्टिकोण पत्र के अनुसार सार्वजनिक उद्यमों के शेयरों को कर्मचारियों तथा जनसाधारण को देने से उनके कामकाज में सुधार संभव है।

सार्वजनिक उद्यमों की वर्तमान स्थिति से योजना आयोग संतुष्ट नहीं है। उसने इन उद्यमों को अधिक कुशल बनाने पर बल दिया है। वास्तव में यह चिन्ता का विषय है कि कई उद्यम अभी भी घाटे में चल रहे हैं। इन उद्यमों के घाटे के कारण अर्थव्यवस्था पर भारी बोझ पड़ रहा है। सरकार को यह सोचना होगा कि वह घाटा सहन कर कब तक इन उद्यमों को चलाती रहेगी।

औद्योगिक नीति को लेकर एक विवाद छिड़ गया है। इस आधार पर इसकी आलोचना की जा रही है कि इससे देश विदेशी ऋण में डूब जाएगा और बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रभुत्व बढ़ जाएगा। प्रधानमंत्री, वित्त मंत्री और उद्योग मंत्री ने स्पष्ट कर दिया है कि ये शंकाएं निराधार हैं। केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने औद्योगिक नीति का अनुमोदन करते हुए कहा है कि इससे लघु, मध्यम तथा कृषि उद्योगों को बढ़ावा मिलेगा, उद्योग में निवेश बढ़ेगा और राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के दायरे में खुली प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन मिलेगा। सरकार की ओर से इस आरोप का भी खंडन कर दिया गया है कि औद्योगिक नीति विश्व बैंक अथवा अन्य किसी एजेन्सी के दबाव में बनाई गई है। यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि विदेशी पूंजी का निवेश कुछ सीमित क्षेत्रों में ही होगा और उससे देश के आर्थिक हितों को कोई नुकसान नहीं पहुंचेगा।

दृष्टिकोण पत्र में ऊर्जा की मांग और पूर्ति को ध्यान में रखते हुए दीर्घकालीन नीति बनाने का जो सुझाव दिया गया है वह उचित है। सड़क और रेल परिवहन के विकास के साथ ही ऊर्जा की मांग का बढ़ना स्वाभाविक है। योजना आयोग ने ऊर्जा के संरक्षण और उसकी बचत करने का सुझाव दिया है। देश में उपलब्ध साधन हमारी आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर सकते। विदेशों से तेल और पेट्रोल के आयात के कारण विदेशी मुद्रा पर बोझ पड़ता है। विदेशी मुद्रा की बचत के लिए ही सरकार ने रविवार को पेट्रोल की बिक्री केवल पांच घंटे तक सीमित कर दी है। रविवार को सरकारी वाहनों के इस्तेमाल पर पाबंदी लगाने के बारे में भी विचार किया जा रहा है। केन्द्रीय मंत्रि परिषद ने जनता की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए परिवहन नीति बनाने का जो निर्णय लिया है वह अत्यंत सामयिक है।

दृष्टिकोण पत्र ने मुद्रास्फीति और ऋण का बोझ बढ़ने के कारण अर्थव्यवस्था के लिए उत्पन्न गंभीर संकट की ओर संकेत किया है। वास्तव में, आज हमारी अर्थव्यवस्था चरमरा रही है। केन्द्र सरकार का बजट घाटा अनुमान से बहुत अधिक बढ़ने की आशंका है। महंगाई में निरन्तर वृद्धि होने से जनसाधारण काफी परेशान है। जमाखोरों और व्यापारियों को चेतावनी देने के बाद भी मूल्यों की रोकथाम में सफलता प्राप्त नहीं हो रही है।

काले धन ने भी सरकार की आर्थिक नीतियों को चुनौती दे रखी है। इसे बाहर निकाल कर उत्पादन कार्यों में इस्तेमाल करने का सुझाव कई बार दिया जा चुका है। आशा की जानी चाहिए कि सरकार शीघ्र ही कोई ऐसी योजना बनाएगी जिससे भारी मात्रा में जमा काले धन का राष्ट्रहित में सदुपयोग किया जा सके।

योजना आयोग ने गैर-योजना खर्च में कटौती करने का सुझाव दिया है। केन्द्र सरकार ने इस सुझाव पर अमल शुरू भी कर दिया है। विदेशी मुद्रा की बचत के लिए मंत्रियों की विदेश यात्राओं पर होने वाले खर्च में 20 प्रतिशत की कटौती कर दी गई है। विदेश मंत्रालय के खर्च में 10 प्रतिशत कमी करने के आदेश दे दिए गए हैं। विदेशों में स्थित इंडिया इंवेस्टमेंट सेंटर के छह कार्यालय बंद कर दिए गए हैं। इसके अलावा, सरकार ने कलपुर्जों के आयात में 10 से 15 प्रतिशत की कटौती कर दी है। प्रत्येक मंत्रालय से भी अनावश्यक खर्च में कमी करने के लिए कहा गया है। राज्य सरकारों को भी केन्द्र की तरह मितव्ययिता बरतनी होगी। कर्मचारियों के स्थानांतरण पर रोक लगाई जा सकती है। इससे स्थानांतरण पर दिए जाने वाले भत्ते की काफी बड़ी राशि बचाई जा सकती है। असाधारण परिस्थिति में अथवा महत्वपूर्ण प्रशासकीय कारणों से ही स्थानांतरण किया जाना चाहिए। स्थानांतरण को लेकर व्यापक भ्रष्टाचार की शिकायतें आम तौर पर सुनने को मिलती हैं।

योजना आयोग द्वारा तैयार किए गए दृष्टिकोण पत्र में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें योजना प्रक्रिया के विकेन्द्रीकरण की परिकल्पना की गई है। योजना की प्राथमिकताएं निश्चित करने और कार्यान्वयन में अधिक से अधिक लोगों को भागीदार बनाने की दृष्टि से राज्य, शहरी और ग्रामीण एजेन्सियों को गतिशील बनाने पर बल दिया गया है। ग्रामीण विकास के लिए संसाधनों का एक बड़ा हिस्सा स्थानीय निकायों को उपलब्ध कराने का सुझाव दिया गया है। विकेन्द्रीकरण की इस प्रक्रिया से लोगों में अपने क्षेत्र के विकास के प्रति दिलचस्पी बढ़ेगी।

पिछला अनुभव यह बताता है कि जनसंख्या वृद्धि के कारण हम योजनाओं से अपेक्षित लाभ नहीं उठा सके हैं। अफसोस की बात है कि परिवार नियोजन कार्यक्रमों के बावजूद जनसंख्या वृद्धि 2 प्रतिशत वार्षिक रही है। दृष्टिकोण पत्र का यह मत सही है कि महिलाओं के शिक्षा स्तर को ऊंचा उठाकर ही जनसंख्या को नियंत्रित किया जा सकता है। यह कार्य केवल सरकारी प्रयत्नों से ही नहीं हो सकता। सामाजिक और स्वैच्छिक संस्थाओं को इस सम्बंध में सक्रिय भूमिका अदा करनी होगी।

दृष्टिकोण पत्र में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास और पर्यावरण में सुधार के लिए भी महत्वपूर्ण सुझाव दिए गए हैं। सामान्य शिक्षा के साथ-साथ तकनीकी और व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करने पर बल दिया गया है। स्वास्थ्य शिक्षा पद्धति के ढांचे में भी परिवर्तन की बात कही गई है। अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण के लिए भी योजना आयोग ने कई महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं।

यह कहा जा सकता है कि योजना आयोग ने आठवीं योजना का दृष्टिकोण पत्र बनाने में सूझबूझ का परिचय दिया है। इस महत्वपूर्ण दस्तावेज में जो रूपरेखा निर्धारित की गई है उसी के आधार पर आठवीं पंचवर्षीय योजना तैयार की जाएगी। दृष्टिकोण पत्र से यह जानकारी नहीं मिलती कि किस मद पर कितनी राशि खर्च होगी। योजना पर कुल खर्च कितना होगा इसका भी कोई संकेत नहीं दिया गया है। अनुमान है कि सातवीं योजना से लगभग दुगुनी राशि खर्च होगी।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र और सरकार की आर्थिक नीतियों पर बहस हो इसमें कोई आपत्ति नहीं है। पर देश के विकास से जुड़े सवालों को राजनीति के दलदल में फंसाने और उलझाने की प्रवृत्ति अच्छी नहीं है। पिछले चार दशकों से विकास में आई विकृतियों को दूर करने के लिए सरकार ने कुछ कठोर कदम उठाए हैं। गरीबी, बेरोजगारी और आर्थिक असमानता दूर करने के उद्देश्य से बनाई जा रही आठवीं योजना के लिए साधन जुटाना निस्संदेह अत्यंत कठिन कार्य है। संभव है, सरकार को निकट भविष्य में और सख्त कदम उठाने पड़ें। राज्य सरकारों को भी साधन जुटाने में सहयोग करना होगा। आर्थिक नीतियों से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण मुद्दों पर राष्ट्रीय सहमति बनाकर आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए अनुकूल माहौल बनाने की आवश्यकता है।

सी-31, गुलमोहर पार्क
नई दिल्ली-110049

दृष्टिकोण : योजना की गुणवत्ता पर बल

एस. एम. शाह
पूर्व सलाहकार, योजना आयोग

आठवीं पंचवर्षीय योजना 1990-95 का दृष्टिकोण का नीति पत्र सामाजिक परिवर्तन का द्योतक है। इस प्रकार काम की मात्रा के बजाय उसकी गुणवत्ता पर बल दिया गया है।

देश में हुए विकास के स्वरूप के बारे में दृष्टिकोण पत्र में चिन्ता व्यक्त की गई है। विगत विकास से भेदभाव और असमानताएं बढ़ी हैं। इसलिए दृष्टिकोण यह है कि नीति में परिवर्तनों की ओर ध्यान दिया जाए और विगत में हुई विकृतियों और असफलताओं को ठीक करने के लिए संस्थागत पर्यावरण की आवश्यकता है। भावावेश में इसमें सामाजिक परिवर्तन का आह्वान किया गया है। योजना में रहन-सहन के स्तर पर विशेष ध्यान दिया गया है।

विकास के स्वरूप और उनकी प्रक्रियाएं स्पष्टवादी होनी चाहिए ताकि देश के प्रत्येक नागरिक को पर्याप्त रोजगार मिले, वह अपने परिवार की खाने, पहनने और रहने की कम से कम जरूरतों को पूरा कर सके और साथ ही शिक्षा, स्वास्थ्य, बच्चों की देखभाल और दूसरी सेवाओं का लाभ उठा सके। बाद में, योजना आयोग ने समाज के पिछड़े और समाज से कटे हुए समुदायों—अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गों आदि के बारे में एक सामाजिक नीति का एक संकल्पना पत्र प्रस्तुत करने का विचार बनाया है। इसका आशय महिलाओं के स्तर में सुधार करना है जिसके लिए योजना को उनके अनुकूल बनाने की आवश्यकता है।

मुख्य ध्यान रोजगार की ओर

ग्रामीण विकास के संदर्भ में दृष्टिकोण पत्र के दो मुख्य तत्व रोजगार और योजना का विकेन्द्रीकरण है।

आठवीं योजना का केन्द्र बिन्दु रोजगार रहेगा। मात्रा की दृष्टि से अगले दशक में रोजगार में वार्षिक दर में 3 प्रतिशत की वृद्धि करने का लक्ष्य रखा गया है। इसके लिए वास्तविक मजदूरी दरों और आय स्तरों को ऊंचा करके उत्पादक स्वरूप के रोजगार के अवसरों को बढ़ाना होगा ताकि जनसंख्या में वृद्धि के कारण बढ़ती हुए श्रमिक शक्ति को खपाया जा सके और आज की खुली बेरोजगारी और अल्प रोजगार के स्तर को उत्तरोत्तर कम किया जा सके। गांव और शहरों में अधिकांश मजदूर या तो कानून द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी के अन्तर्गत कवर नहीं होते हैं अथवा उन्हें सौदेबाजी करके ट्रेड यूनियनों द्वारा संरक्षण प्रदान किया जाता है और मजदूरी दर आदि निर्धारित की जाती है।

रोजगार के अवसर सभी को न्यूनतम मजदूरी दर पर उपलब्ध कराये जाने हैं। राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कार्यक्रम को प्रारम्भ करना, सार्वजनिक परिव्ययों का कम से कम आधा भाग ग्रामीण क्षेत्रों के लाभ के लिए आरक्षित करना और श्रम प्रधान तकनीकों का इस्तेमाल करके जन साधारण की खपत के सामान आदि के उत्पादन के लिए ग्रामीण तथा लघु क्षेत्र के उद्योगों का विस्तार करने पर बल देना योजना निर्माताओं की नीति के बारे में उनकी एकाग्रता को दर्शाता है।

काम के अधिकार में पूर्ण रोजगार की नीति निहित है जिसमें एक निर्धारित अवधि में उन सभी लोगों के लिए काम की व्यवस्था की जाती है जो ऐसे काम के इच्छुक हैं अन्यथा उन्हें मुआवजा देना होगा। राज्य को रोजगार की गारंटी देनी चाहिए और ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में न्यूनतम मजदूरी को लागू करना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर रोजगार के लाभकारी अवसर जुटाने से गांवों से शहरों की ओर पलायन को कम किया जा सकता है।

मजदूरी माल मॉडल

हालांकि दृष्टिकोण पत्र में योजना के "मजदूरी माल मॉडल" का स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, इसमें "आधारभूत उपभोक्ता माल" जैसे खाद्यान्न, चीनी, गुड़ और कपड़े के लिए कपास के उत्पादन पर जोर दिया गया है। इसके अतिरिक्त यह दर्शाता है कि पूर्ण रोजगार को प्राप्त करने के लिए निवेश के

ढांचे में आमूलचूल परिवर्तन करने होंगे, इसे अधिक पूंजी/श्रम के बजाय कम पूंजी/श्रम प्रधान कार्यों में बदलना होगा। हथकरघा, हस्तशिल्प, रेशमकीट पालन सहित खादी तथा ग्रामोद्योग, कुटीर और लघु क्षेत्रों में बड़ी संख्या में लोगों को लाभकारी और पूर्ण रोजगार के अवसर मिल सकेंगे।

जनसंख्या में 2 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि दर एक गहरी चिन्ता का विषय है। श्रम प्रधान जनसंख्या की वृद्धि दर तो कहीं अधिक है जो कि प्रति वर्ष 2.5 प्रतिशत है। यदि नवजात शिशुओं की मृत्यु दर को कम करने, जन्म दर में कमी करने आदि को कार्यान्वित करने जैसे—परिवार कल्याण कार्यक्रमों को अमल में लाना है तो महिलाओं के स्तर में सुधार करने की आवश्यकता है।

स्थानीय योजनाएं

रोजगार कार्यक्रम के साथ ''रोजगारोन्मुख क्षेत्र का विकास कार्यक्रम'' जुड़ा हुआ है। शुष्क भूमि पर खेती, विशेष रूप से वाटरशेड परियोजनाओं से जुड़ी हुई खेती की ओर अधिक ध्यान देने से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अधिक अवसर जुटाए जा सकते हैं। स्थानीय कार्यक्रमों का आशय स्थानीय हुनर और कला को सुदृढ़ बनाना और उनको प्रयोग में लाने से है जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष रूप से गरीब लोगों को जीवन भर के लिए काम दे सकता है।

दृष्टिकोण पत्र में स्थानीय क्षेत्रों की समन्वित योजनाओं को विभागवार तैयार करने की वर्तमान प्रणाली से हटकर ग्रामीण विकास की योजनाओं के कार्यान्वयन में भारी तबदीली को स्वीकार किया गया है। इसके लिए स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाओं को पुनर्जीवित करने और योजना बनाने तथा उन्हें लागू करने के लिए वित्तीय और तकनीकी सहायता दिए जाने की आवश्यकता होगी। स्थानीय योजनाओं के लिए जिस संस्थागत ढांचे की परिकल्पना की गई है वह है ''पंचायती राज संस्थाएं।''

दृष्टिकोण पत्र में योजना प्रक्रिया के विकेन्द्रीकरण की परिकल्पना की गई है। ऐसी परिकल्पना 1956 में पंचायती राज के बारे में बलवन्त-राय मेहता समिति ने अपनी रिपोर्ट में की थी कि ऐसा करने से लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की मार्फत कार्यक्रमों की योजना बनाने और उन्हें अमल में लाने में बड़ी संख्या में लोगों को शामिल किया जा सकेगा।

पंचायती राज संस्थाओं को पुनर्जीवित करने से निर्णय लेने और योजना बनाने की प्रक्रिया में एक बड़ा परिवर्तन आ जाएगा। इससे योजनाओं का समन्वित और कारगर ढंग से कार्यान्वयन सुनिश्चित हो सकेगा। अलग-अलग विभागों में ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों की अधिकारियों द्वारा देख-रेख से इन कार्यक्रमों का विखण्डन हुआ है। विकेन्द्रीकृत आयोजना से कार्यक्रमों की अवधारणा, उनके नियोजन और कार्यान्वयन में आधारभूत अभिमुखीकरण होगा।

रोजगार कार्यक्रम को विकेन्द्रीकृत आयोजना की मार्फत कार्यान्वित करने की परिकल्पना की गई है। इसमें कहा गया है कि ''पूर्ण रोजगार'' की नीति को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए इसका विकेन्द्रीकरण करना अनिवार्य है। लघु सिंचाई भूमि तथा नमी संरक्षण, स्थानीय बाढ़ रोकने के कार्य, प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य, पीने के पानी, ग्रामीण आवास आदि जैसे आर्थिक और सामाजिक विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने और उसे लागू करने के उत्तरदायित्व का एक बड़ा हिस्सा स्थानीय स्तर पर सौंपने से वर्तमान कार्यक्रमों की बहुत-सी कमियों को दूर किया जा सकता है।

स्थानीय संस्थाओं को अपनी प्राथमिकताओं के आधार पर योजनाओं के चयन की स्वतंत्रता होनी चाहिए और एक बड़ी धनराशि पर उनका सीधा अधिकार होना चाहिए। बड़े पैमाने पर जो विकास कार्यक्रमों में दोहरापन इस समय देखने में आ रहा है उसे रोका जा सकता है। प्रत्येक स्थानीय क्षेत्र के लोग प्राथमिकताओं के निर्धारण में हिस्सा लेंगे। कार्यक्रमों के कार्यान्वयन पर नजर रखेंगे और सृजित की गई परिसम्पत्तियों के रख-रखाव और प्रबंध को भी संभालेंगे।

सामाजिक नीति

स्थानीय एजेंसियों, पंचायतों द्वारा योजनाओं के कार्यान्वयन से पुरुषों और महिलाओं दोनों के हुनरों और कार्य कुशलताओं का पूर्ण रूप से इस्तेमाल किया जा सकेगा। इस संबंध में सामाजिक तौर पर लाभकारी कार्यों का सृजन करने पर बल दिया जाना चाहिए। स्थानीय आयोजना की प्रक्रिया केवल तभी प्रभावकारी हो सकती है यदि इसे लोगों के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा तैयार किया जाए जो चयन के प्रति उत्तरदायी हैं। महिलाओं और कमजोर वर्गों जैसे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने से यह सुनिश्चित हो सकेगा कि कार्यक्रमों के बारे में जो निर्णय लिए गए हैं उनका जनसंख्या के इन कमजोर वर्गों के साथ सीधा सम्बंध है। ऐसे प्रबंध से महिलाओं तथा बच्चों के लिए तैयार किए गए विभिन्न कार्यक्रमों की प्रभावशीलता में बढ़ोतरी करने में सहायता मिलेगी। इन कार्यक्रमों में शामिल हैं—प्रसूति गृहों, शिशु स्वास्थ्य सेवाओं, समन्वित शिशु विकास कार्यक्रम, प्रौढ़ शिक्षा और पोषाहार कार्यक्रम इसी के क्रम में हैं

जिनका लाभ लक्षित समूह को अधिकाधिक दिया जा सकता है।

स्थायी विकास

स्थानीय आयोजना में ध्यान में रखने का सबसे महत्वपूर्ण पहलू परिस्थिति संतुलन है। कार्यक्रमों के स्थल के निकट होने के कारण स्थानीय आयोजना एजेंसी राज्य अथवा केन्द्र मुख्यालयों में बैठे योजना बनाने वाले अधिकारियों की तुलना में पारिस्थितिक और पर्यावरण संबंधी अपने संरक्षण के मामले में अधिक सजग होगी। पंचायती राज संस्थाएं निश्चित रूप से स्थायी विकास सुनिश्चित करेंगी जो कि भावी पीढ़ी के लिए एक अच्छा प्रयास रहेगा। यह विषय पूरे विश्व में उन लोगों के लिए एक चिन्ता का विषय है जो विकास की प्रक्रिया में लगे हुए हैं। स्थानीय एजेंसियों को स्थायी विकास की बात अपने मन में रखनी होगी क्योंकि इसका सीधा संबंध हमारे रहन-सहन से है। इसलिए वे भावी पीढ़ी के लिए अपने पर्यावरण का संरक्षण करने के लिए अधिक सचेत रहेंगे। योजनाएं स्थायी विकास की आवश्यकताओं के अनुसार होनी चाहिए। परियोजनाओं की पर्यावरण की दृष्टि से कड़ी जांच भी होनी चाहिए। विकास योजनाओं के पारिस्थितिक परिव्यय से एक खुली प्रणाली द्वारा लोगों को जानकारी दी जानी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि स्थानीय आयोजना परियोजनाओं के हस्तांतरण में सहायक होगी। दृष्टिकोण पत्र में समस्त विकास प्रक्रिया को एक विस्तृत परिप्रेक्ष्य में देखा गया है। इसमें ''रहन-सहन के जीवन'' पर चिन्ता व्यक्त की गई है। रहन-सहन का स्तर लोगों की मूल आवश्यकताओं को पूरा करने के प्रति एक वचनबद्धता है। इसमें स्थानीय प्रोत्साहन, आर्थिक आत्मनिर्भरता और स्थानीय संसाधनों का अधिकाधिक प्रयोग निहित है।

दृष्टिकोण पत्र का मानव संसाधन विकास की ओर ध्यान जा रहा है। इसमें मानव संसाधनों के विकास का उल्लेख किया गया है लेकिन रोजगार कार्यक्रमों, लोगों के हुनर का विकास करने की मार्फत मानव संसाधन विकास में अभी काफी कुछ और किया जाना बाकी है। बहुत-सी विकासशील समितियों द्वारा भौतिक ढांचे में निवेश और मानवीय ढांचे के बीच एक बड़ी खाई है। दृष्टिकोण पत्र में मानवीय ढांचे का सुधार करने का संकल्प निहित है। इस मानवीय ढांचे का विकास करने के लिए रोजगार कार्यक्रम एक निश्चित माध्यम है। वास्तव में आने वाले दशक में विकास का मुख्य लक्ष्य मानव विकास है। दृष्टिकोण पत्र में मानव विकास के मुद्दों पर उचित ध्यान दिया गया है। हालांकि यह विषय सीधे तौर पर न लेकर काम के अधिकार अथवा रोजगार की गारंटी और स्थानीय आयोजना के रूप में है जिनमें स्थानीय कार्यों की योजना बनाने और उसे लागू करने में लोगों को शामिल करने की परिकल्पना की गई है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि विकास की गणना इस हिसाब से नहीं लगाई जानी चाहिए कि कितना उत्पादन हुआ है अथवा कितनी सम्पत्ति का सृजन किया गया है बल्कि यह हिसाब इस रूप में लगाया जाना चाहिए कि इन कार्यों से कितना मानव कल्याण हुआ है। स्थायी विकास मानव की प्रगति का रास्ता है जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं पर आकांक्षाओं को पूरा करता है। लेकिन इसमें भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता का कोई आश्वासन नहीं है। स्थायी विकास के लिए हमारे सोचने के तरीके, हमारे रहने के तरीके, हमारे उत्पादन के तरीके, हमारे उपभोग के तरीके और एक दूसरे के बारे में हमारे सोचने के तरीके में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता होगी। स्थायी विकास के लिए हमें राजनैतिक प्रणालियों में तबदीली करने की आवश्यकता है, एक ऐसी प्रणाली की आवश्कयता है जो लोगों की भागीदारी को सुनिश्चित करे। एक ऐसी आर्थिक प्रणाली की आवश्यकता है जो आत्मनिर्भरता और स्थायित्व के आधार पर तकनीकी जानकारी का सृजन कर सके। एक ऐसी सामाजिक प्रणाली की आवश्यकता है जो आपसी तनाव के लिए ठोस समाधान प्रदान कर सके। एक ऐसी उत्पादन प्रणाली की आवश्यकता है जो विकास के लिए एक स्थायी परिस्थितिक आधार प्रदान कर सके। एक ऐसी प्रौद्योगिकीय प्रणाली की आवश्यकता है जिसमें निरन्तर आधार पर नए समाधानों की खोज हो सके और अन्त में एक ऐसी प्रशासनिक प्रणाली की आवश्यकता है जो लोचशील हो और उसमें अपने आपको ठीक करने की क्षमता हो।

अन्त में, स्थायी विकास उन सभी लोगों की मानवीय आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए है जो इस भूमि पर रहते हैं। दृष्टिकोण पत्र स्थायी विकास को कार्यरूप देना चाहता है। मानव संसाधन विकास और स्थायी विकास दोनों दृष्टियों से दृष्टिकोण पत्र में योजना बनाने वालों का आशय आधुनिक विकास के रूप में झलकता है। लेकिन मानव कल्याण अथवा मानव संसाधन विकास और स्थायी विकास के इन लक्ष्यों को आने वाले योजना दस्तावेज में मात्रा के रूप में शामिल कर लिए जाने की आशा ही कर सकते हैं।

अनुवाद—शशि बाला

ग्रामीण विकास की नई संभावनाएं

सुबह सिंह यादव

पुनर्गठित योजना आयोग द्वारा निर्मित आठवीं योजना का दृष्टिकोण जिसे राष्ट्रीय विकास परिषद ने 18-19 जून, 1990 की अपनी बैठक में अनुमोदित किया है, जहां एक ओर अनेक नवोन्मेष विशेषताओं से ओतप्रोत है, वहीं दूसरी ओर इसमें सातवीं योजना में आरम्भ किए गए प्रमुख नीति उपायों को आगे बढ़ाया गया है। आयोग का यह प्रयास रहा है कि आंकड़ों के जाल से न्यूनतम सम्बंध रखा जाये और विकास के मुद्दों तथा राज्यों का विभिन्न समस्याओं के बारे में विगत अनुभव के आधार पर विचार विमर्श द्वारा वास्तविक धरातल पर एक ऐसी योजनाको मूर्त रूप दे जो जनभागिता को प्रत्यक्षत: स्पर्श करे। शायद इसकी पृष्ठभूमि यही रही होगी कि सातवीं योजना में विकास के साथ न्याय का नारा अवश्य दिया गया था, परन्तु विकास तो हुआ लेकिन एक बड़ा जनसमुदाय इसके लाभ से वंचित रह गया अर्थात परिस्त्रवण मशीनरी ने कार्य नहीं किया। इस कारण सामाजिक असन्तुलन को बल मिला। स्वतंत्रोत्तर भारत में शहरी व ग्रामीण आबादी के बीच असन्तुलन बढ़ता चला गया। ऐसी स्थिति में इस असंतुलन को दूर करने के लिए विकास के मार्ग तथा सम्पूर्ण अर्थतंत्र को गांवों की ओर जोड़ने का निर्णय लिया गया।

आठवीं योजना के इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत आधारभूत लक्ष्यों की प्राथमिकताओं में एक प्रमुख परिवर्तन यह है कि सम्पूर्ण योजना संरचना तथा गरीबी उन्मूलन के निर्णायक अस्त्र के रूप में रोजगार संवृद्धि को आरंभिक बिन्दु बनाया गया है। अब तक मिश्रित अर्थव्यवस्था के दिए हुए सामाजिक-आर्थिक ढांचे में गरीबी उन्मूलन की असफलता का एक प्रमुख कारण व्यापक रोजगार सृजन की कमी रही है। इस योजना प्रारूप के प्रमुख लक्ष्य इस प्रकार हैं—

1. योजना में रोजगार पर प्रतिबल देना।
2. क्षेत्र दृष्टिकोण अपनाकर तथा स्थानीय आयोजना एवं विकास के लिए उत्तरदायित्व को स्थानीय एजेन्सी—पंचायती राज संस्थाओं को स्थानान्तरित करके एक वास्तविक सामाजिक रूपान्तरण लाना।
3. आम उपभोग वाली वस्तुओं के संदर्भ में परम्परागत दस्तकारी तथा श्रम गहन तकनीक अपनाना तथा उत्पादन की परम्परागत पद्धतियों को हानि पहुंचाने वाले किसी भी परिवर्तन को अनुमति नहीं देना।
4. सार्वजनिक क्षेत्र की योजना और इसके आकार को निर्णायक न मानकर नीतियों और संस्थागत वातावरण की महत्ता को प्रतिपादित करना।
5. सरकार द्वारा आधारभूत संरचना के अतिरिक्त गरीबी उन्मूलन तथा पर्यावरण पर भी ध्यान केन्द्रित करना।
6. विशेषाधिकार नियंत्रणों को क्रमश: कम करना तथा आंतरिक व विदेशी प्रतिस्पर्द्धा को भी बढ़ावा देना। इस उद्देश्य हेतु गैर लाइसेन्सीकरण के साथ-साथ संरक्षण की प्रभावी दर को कम करना।

ग्रामीण विकास

योजना के दृष्टिकोण में 50% परिव्यय ग्रामीण तथा कृषि क्षेत्र पर खर्च करने का प्रावधान है। इसका एक स्पष्ट औचित्य भी है—स्वतंत्रता के बाद भारत में ग्रामीण आर्थिक परिवेश में परिवर्तन आया है। अर्थव्यवस्था को प्रभावात्मक रूप से प्रबन्धित करने की क्षमता आयी है। कृषि में आधुनिकीकरण तथा संरचनात्मक परिवर्तन भी आया है। लेकिन घरेलू उत्पाद में कृषि का अंश निरन्तर घटता चला गया (अब 33%) जो भारत जैसे देश के लिए, जहां 76.6% जनसंख्या लगभग 6 लाख गांवों में निवास करती है और 65.6% लोग कृषि में संलग्न हैं, कदापि उचित नहीं जान पड़ता। आज की तत्कालीन आवश्यकता के अनुरूप विचारधारा की संकुचित परिधि से बाहर निकल कर व्यवहारिक धरातल पर आर्थिक नीति की अनुपयुक्तता इस दृष्टिकोण के सन्दर्भ में देखने को मिली, विशेषकर ग्रामीण आर्थिक नीतियों के सन्दर्भ में। योजना आयोग द्वारा समाज के उन वर्गों के लिए राहत अभी निर्धारित करना जिन्हें अब तक विकास के लाभ नहीं मिले थे, समाजवाद की ओर एक अनूठी पहल है। इसमें जितना विलम्ब होता उतना ही ग्रामीण क्षेत्र का विकास अवरुद्ध होता और ग्रामीण अंचल वर्ग संघर्ष में उलझता जाता। भूमि सुधारों को संविधान की नवीं सूची में शामिल करके सरकार ने व्यर्थ न्यायालयों में जाने का मार्ग बन्द कर दिया है। इसका अर्थ यह हुआ कि ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक रोजगार सुलभ कराने पर सरकार जोर देगी।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के सम्बंध में योजना दृष्टिकोण सम्यक दिखायी देता है क्योंकि ग्रामीण जीवन में परिवर्तन लाने

में आदान तथा पर्यावरण प्रदान करने की आवश्यकता एक महत्वपूर्ण कारक है। यहां तक कि निर्माण कार्य से सम्बन्धित कई ग्रामोद्योग के माध्यम से ग्रामीण भूमिहीनों के लिए रोजगार सृजन हेतु अच्छे अवसर प्रदान करती है। समस्त अनुसंधान और विकास संगठनों तथा तकनीक संस्थाओं ने मानव-आवास, स्वच्छता और पर्यावरण ऊर्जा आदि ग्रामीण समस्याओं को हल करने के लिए प्रौद्योगिकियों का विकास किया है। आज की आवश्यकता यह है कि एक ऐसी कारगर और उत्तम प्रौद्योगिकी स्थानान्तरण प्रणाली तैयार की जाये जो अनुसंधान और विकास अवस्थापनाओं तथा उनके उपयोग में आने वालों के बीच अधिक प्रभावशाली श्रृंखला प्रदान करें।

भारत में सभी व्यक्ति पर्यावरण की अपेक्षित जानकारी से विज्ञ नहीं हैं, इसलिए उनको स्वच्छ व स्वस्थ जीवन के बारे में शिक्षा प्रदान करना भी समसामयिक माना जा सकता है। ऐसा सामान्य ज्ञान समय पर्यन्त पर्यावरण सुधार व संवर्द्धन के क्षेत्र में अति महत्व का सिद्ध होगा।

कृषि

योजना के दृष्टिकोण पत्र के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में कुल योजना व्यय के आबंटन को 50% तक बढ़ाया है। यदि हम ग्रामीण क्षेत्र में केवल कृषि ग्रामीण विकास ही शामिल करें तो इसका तदनुरूपी पूर्व आवंटन मुश्किल से 25-30% ही था। अब 30% से बढ़ाकर इस व्यय को 50% करना एक लम्बी छलांग है। इसका अर्थ होगा कि सार्वजनिक विनियोग कार्यक्रमों की संवृद्धि दर के बढ़े हुए होने पर विगतकाल से बाह्यगणन करने पर अब बहुत से गैर-ग्रामीण क्षेत्रों के योजना व्यय में कटौती करनी पड़ेगी। यदि ग्रामीण क्षेत्रों को आबंटित 50% व्यय में विद्युतीकरण, यातायात तथा उर्वरक जैसी आधारभूत सुविधाओं जैसी क्रियाएं भी शामिल हैं तो यह 50% पिछली योजना में आबंटित व्यय (लगभग 44%) के निकट ही है और दृष्टिकोण पत्र विनियोग प्रारूप में कोई नया दृष्टिकोण प्रस्तुत नहीं कर रहा है।

यह उल्लेखनीय है कि वर्ष 1989-90 के रबी के मौसम के खाद्यान्नों का कुल उत्पादन 77 मिलियन के नये शीर्ष अथवा पूर्व के वर्ष के 75.1 मिलियन टन से 2.5% अधिक होने की आशा है। खरीफ के 98 मिलियन टन उत्पादन को मिलाकर वर्ष 1989-90 का कुल खाद्यान्न उत्पादन 175 मिलियन टन के संशोधित लक्ष्य तक पहुंच जाता है। सातवीं योजनावधि के अन्तर्गत 1985-86 में कृषिगत उत्पादन में 2.4% की वृद्धि हुई लेकिन 1986-87 व 1987-88 में क्रमशः 3.7 व 2.1% की गिरावट आयी। सातवीं योजना के मध्यावधि मूल्यांकन में कहा गया था कि कृषि क्षेत्र में अकाल की वजह से कृषि आधारित क्षेत्रों को धक्का पहुंच सकता है। साथ में यह भी कहा गया था कि खादी व ग्रामोद्योग क्षेत्र में भी सातवीं योजना में लक्ष्य पूरे नहीं होंगे। जहां तक अकाल का प्रश्न है, कृषि क्षेत्र ने तो अपने आपको संभाले रखा लेकिन कृषि आधारित क्षेत्र, अत्यंत लघु व लघु क्षेत्र में जड़ता देखी गयी। सातवीं योजना के कृषि उत्पादन के लक्ष्य व उपलब्धियों को सारणी-1 में दर्शाया गया है।

इसके तदनुरूप आठवीं योजना में सुधार हेतु निम्न कुछ बातों पर ध्यान देना होगा—

(1) शुष्क भूमि खेती को बढ़ावा देना होगा। देश में कृषि योग्य 143 मिलियन हैक्टेयर भूमि में से 105 हैक्टेयर भूमि वर्षा से होने वाली उस कृषि के अन्तर्गत होती है जिससे देश को 42% अनाज, 75% दालें तथा कपास मूंगफली जैसा कच्चा माल प्राप्त होता है। यदि हम सन् 2000 तक 113 मिलियन हैक्टेयर सिंचाई का लक्ष्य प्राप्त कर भी लें तो हमारे पास 45.7% क्षेत्र वर्षा पर आधारित कृषि के लिए होगा। भारत में वर्षा के वितरण को ध्यान में रखते हुए वर्षा पर आधारित कृषि का विकास राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा तथा क्षेत्रीय एवं सामाजिक असंतुलनों को ठीक करने के लिए होगा।

(2) लघु सिंचाई योजनाओं द्वारा सिंचाई संभाव्य का विकास करना होगा भारत में सिंचाई का पूर्ण विकास होने पर भी 55 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र लघु सिंचाई योजनाओं से होगा। इस संभाव्य को बाद में अधिक परिमार्जित मूल्यांकनों से बढ़ाया जा सकता है। ऐसा व्यवस्था उपयोग का इष्टतम उपभोग करके किया जा सकता है। चूंकि सातवीं योजना में लघु सिंचाई योजना कोई खास उत्साहवर्द्धक नहीं रही (जैसा कि सारणी 2 से स्पष्ट है) इसलिए आठवीं योजना में संस्थागत साख के माध्यम से इसे आगे बढ़ाया जा सकता है।

(3) पड़त भूमि को उत्पादक भूमि में परिवर्तित करने का कार्य आठवीं योजना की एक बड़ी चुनौती होगी। अधिकृत अनुमानों के अनुसार देश में 150 से 175 मिलियन हैक्टेयर के बीच पड़त भूमि है जो कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 329 मिलियन हैक्टेयर का आधा है। योजना के दौरान आयोग को राष्ट्रीय नियोजन के ढांचे में भू-प्रयोग योजना का महत्व सुनिश्चित करना होगा। उत्पादकता बढ़ाने तथा कृषि योग्य वर्तमान भूमि, जंगलों पर वर्तमान दबाव कम करने हेतु पड़त भूमि प्रबंध आठवीं योजना तथा वित्तीय साधनों के आबंटन की सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए।

(4) फसल बीमा योजना हेतु बजट में अनिवार्य प्रावधानों को सुनिश्चित करना होगा।

(5) आवश्यक कृषि पड़तों, प्रशिक्षण उपकरणों के लिए आधुनिक तकनीक प्रावधानों तथा एक संगठित विपणन की व्यवस्था आगामी पांच वर्षों का मुख्य ध्यानाकर्षण बिन्दु होना चाहिए।

(6) संभाव्य जुड़वा योजना (पी एल पी) के अन्तर्गत कृषि आधारित उद्योगों के लिए विशिष्ट मूल्यांकन द्वारा साख की आवश्यकता का पता लगाना होगा। अब इस दिशा में खाद्य प्रसाधन उद्योग पर ध्यान देना आवश्यक होगा। भारत में अभी तक खाद्य उत्पादन का मुश्किल से 1.5% भाग ही प्रसोधित खाद्य में परिवर्तित किया जाता है। यह उद्योग ही वह उभरता, लुभावना एवं उच्च वृद्धि वाला बाजार है जहां टाटा, लिप्टन, गोदरेज, ब्रितानिया जैसी कम्पनियों ने प्रवेश किया है। 1977-78 की तुलना में इस उद्योग में 1988-89 में 228 प्रतिशत की हुई वृद्धि इसके भावी विकास को मार्ग को स्पष्टत: रूप से दर्शा रही है।

(7) ऊर्जा के गैर परम्परागत स्रोत के रूप में बायोगैस प्रौद्योगिकी को विकसित करने की महती आवश्यकता है। इससे वन सम्पदा की बचत होगी और पारिस्थितिकी संतुलन में अप्रत्यक्ष रूप से सहायता मिलेगी। भारत में तुलनात्मक रूप से रासायनिक खाद की कमी है, इसलिए आठवीं योजना में लगभग 1000 मिलियन किलो कैलोरीज ऊर्जा की पूर्ति के लिए (जो अब 873 मिलियन कैलोरीज है) बायोगैस प्रौद्योगिकी का सहारा लेना पड़ेगा। इस दिशा में सर्वाधिक आवश्यकता शोध व विकास की है।

विकेन्द्रीकरण

आठवीं योजना का लक्ष्य जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण है। यद्यपि पिछली सरकार ने अन्तिम दिनों में कुछ पहल की थी, पर वर्तमान सरकार की कृतसंकल्पता से इस ओर अधिक आशा बंधी है क्योंकि अब विभागवार स्कीमों की वर्तमान प्रणाली के स्थान पर एकीकृत स्थानीय क्षेत्र आयोजन को अपनाकर ग्रामीण विकास के प्रति दृष्टिकोण में एक प्रमुख परिवर्तन को स्वीकार किया गया है। लेकिन इस परिवर्तन के अन्तर्गत ग्राम अथवा पंचायत स्तर पर आर्थिक क्रियाकलापों में रोजगार उत्पादन तथा आय वृद्धि को सुनिश्चित करने से है। स्थानीय आयोजन की प्रक्रिया प्रभावी हो सकती है। लोहिया के 'चौखम्भा सिद्धान्त' की परिकल्पना के अनुसार अब ग्रामीण विकास के सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण के अन्तर्गत गांव साख योजनाएं बनने लगी हैं। इन साख योजनाओं का आने वाले समय में 'संभाव्य जुड़वा योजना' से समन्वयन करके गांवों में खुशहाली लाई जा सकती है। विकेन्द्रित नियोजन प्रणाली की सफलता के लिए योजना के निर्माण, स्वीकृति, क्रियान्वयन, मूल्यांकन का कार्य विभिन्न क्षेत्रीय स्थानीय एजेन्सियों व ग्राम पंचायतों को सौंपना होगा। इस हेतु अब उर्वरक पृष्ठभूमि भी बन चुकी है। यह नीचे से नियोजन है। देश में ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत व सहकारी समितियां, खण्ड स्तर पर पंचायत समितियां, जिला स्तर पर जिला परिषद् व विकास समिति तथा राज्य स्तर पर विकास विभाग व नियोजन मण्डल तथा केन्द्रीय स्तर पर राष्ट्रीय विकास परिषद एवं योजना आयोग है। विभिन्न कार्यक्रमों को विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न स्तरों पर संचालित करने, समन्वय करने तथा निरीक्षण करने का दायित्व इन संगठनों पर है। योजना प्रारूप पर गम्भीरता से विचार करने पर लगता है कि इस दिशा में यह एक सफल योजना होगी क्योंकि अब हम गरीबी उन्मूलन तथा सम्पूर्ण विकास को सहभागिता की विधि से हल करने के रास्ते पर चल रहे हैं। केवल अकेली सरकार या वित्तीय संस्था अथवा स्वैच्छिक एजेन्सी सम्पूर्ण ग्रामीण रूपान्तरण नहीं कर सकती। इस प्रशंसनीय सामूहिक दायित्व के निर्वाह में सभी को सामने आना होगा। इस सम्बंध में स्वयं सहायक समूह प्रभावी ग्रामीण विकास के लिए अवसर प्रदान करते हैं जिसे कभी भी नहीं चूकना चाहिए।

लघु उद्योग

विकेन्द्रीकरण की श्रृंखला में आठवीं योजना का दृष्टिकोण लघु उद्योग क्षेत्र एवं ग्रामीण औद्योगीकरण की दिशा में एक लम्बी छलांग है। रोजगार में वृद्धि करके कार्य के अधिकार को मूर्त रूप देने का यह क्षेत्र उत्तम माध्यम माना जा सकता है। वस्तुत: रोजगार को आधारभूत उद्देश्य बनाना, जिसके चारों ओर योजना को निर्मित किया जाना है, लघु उद्योग क्षेत्र की नीति तथा व्यूह रचना पर आधारित है। इस महत्वपूर्ण परिवर्तन के क्रम में लघु उद्योग, सहायक इकाइयों तथा अत्यंत छोटे उद्योगों में पूंजी निवेश को बढ़ाकर क्रमश: 60 लाख, 75 लाख व 5 लाख कर दिया है। पहले यह क्रमश: 35 लाख, 45 लाख व 2 लाख था। यह स्वीकार करना होगा कि सार्वजनिक क्षेत्र की योजना पर बल कम करना तथा सरकार की भूमिका में प्रस्तावित परिवर्तन भी न केवल साहसिक है, अपितु एक ऐसा अत्यावश्यक कार्य है जिसे परम्परागत आयोजनों द्वारा टाला जाता रहा। यह भी स्वागत योग्य है कि नये योजना आयोग ने घरेलू उद्योगों के नियंत्रण तथा संरक्षण के सम्बंध में उदारीकरण का समर्थन करने तथा इसे आगे बढ़ाने को ठीक

समझा। योजनाकाल में ग्रामीण व लघु उद्योगों के विकास पर सार्वजनिक क्षेत्र में किये गये व्यय उत्साहवर्धक रहे हैं। सातवीं योजना में ग्रामीण व लघु उद्योग क्षेत्र में उत्पादन 1984-85 में 65730 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 1989-90 में 100100 करोड़ रुपये, रोजगार की मात्रा 3.15 करोड़ व्यक्तियों से बढ़ाकर 4 करोड़ व्यक्ति तथा निर्यात की राशि 4558 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 7444 करोड़ रुपये तक पहुंचने के लक्ष्य रखे गए थे। इस प्रकार उत्पादन में वार्षिक वृद्धि दर 8.8% तथा रोजगार में वार्षिक वृद्धि दर 10.2% निर्धारित की गयी।

ग्रामीण साख

ग्रामीण विकास में साख एक अनन्य एवं निर्णायक घटक है। 'साख के माध्यम से विकास' का दर्शन 1980 की शताब्दी की विलक्षणता रही है। राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना, विभिन्न गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को संवारना तथा साख के क्षेत्र में सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण जैसी मौन क्रान्ति के अभ्युदय ने आठवीं योजना को इस क्षेत्र में नये प्राण फूंकने के अवसर प्रदान कर दिए हैं। फिर सरकार के 'काम का अधिकार' को मूल अधिकारों में शामिल करने की प्रतिबद्धता ने तो इस विषय में परिचर्चा के नये द्वार खोल दिए। सातवीं योजना के मध्यावधि मूल्यांकन के अनुसार समन्वित ग्रामीण विकास, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम हेतु केन्द्रीय क्षेत्र में क्रमशः 2642.99 करोड़ रुपये, 2487.47 करोड़ रुपये तथा 1743.78 करोड़ रुपये आबंटित किए गए थे। इतनी राशि के ये कोष गरीबी की संस्कृति को परिवर्तित करने तथा सकारात्मक प्रभाव डालने में कुछ सीमा तक ही सफल हुए अर्थात उन गरीब परिवारों के जीवन स्तर में पर्याप्त सुधार नहीं कर पाये जो लगातार संचयी असमानताओं से पीड़ित रहे हैं, यद्यपि साख संवितरण की मात्रा काफी रही है (जैसा कि सारणी 3 से स्पष्ट है)।

अब प्रश्न यह उठता है कि आठवीं योजना के दृष्टिकोण में अपनाई गयी व्यूह रचना कहां तक व्यवहार्य है। यदि यह व्यूह रचना रोजगार सृजन तथा आस्तियों का सृजन करते हुए ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबों की आवश्यकताओं को संतुष्ट करती है तो यह सफल कही जा सकती है। लेकिन इस संदर्भ में यह ध्यान रखना आवश्यक होगा कि 1988 के अन्त तक रोजगार विनिमालयों की चालू पूंजी में 10 करोड़ बेरोजगार व्यक्ति निबंधित हैं। इन्हें न्यूनतम मजदूरी पर भी नियोजित करने पर प्रति वर्ष 66000 करोड़ रुपये खर्च करने होंगे। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए इस संदर्भ में वित्तीय ढांचे में ग्रामीण साख हेतु निम्न कुछ बातों पर ध्यान देना है—

सारणी-3

कृषि साख का संवितरण

(करोड़ रुपये में)

	1985-86	1986-87 (अस्थायी)	1987-88 (अस्थायी)	1988-89 (अस्थायी)	1989-90 (अस्थायी)
सहकारी					
अल्पावधि	2747	2824	3320	4153	4494
मध्यावधि	394	531	547	422	392
दीर्घावधि	543	560	691	867	893
योग	3684	3915	4558	5442	5779
वाणिज्यिक बैंक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अल्पावधि व अवधि ऋण	3110	3796	3934	6310	7515
कुल योग	6794	7711	8492	11752	13294

(1) सम्भाव्य जुड़वा योजना हेतु नाबार्ड का निर्णय अन्तिम होना चाहिए ताकि योजनाबद्ध सुधार का अनुवर्तन, मूल्यांकन नियमित हो सके अर्थात आधारभूत नियोजन नाबार्ड के अधिकार क्षेत्र में होना चाहिए।

(2) स्थानीय साधन सघनता व लोगों की आकांक्षाओं के अनुरूप साख की मांग को आंका जाना चाहिए।

(3) ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सर्वाधिक अस्थिरता उत्पन्न करने वाले कारक बार-बार आने वाले अकाल व सूखा हैं। इस समस्या से निपटने के लिए वर्तमान राहत व्यवस्था ने स्फीतिकारक दिशाएं उत्पन्न कर दी हैं तथा किसी प्रकार की स्थाई दीर्घकालीन आस्तियों का निर्माण नहीं हो पाया। अतः राहत कोषों को योजनाबद्ध तरीके से आधारित संरचना के लिए प्रयोग करना चाहिए।

(4) राज्य सरकारों को न केवल साख संवितरण के लिए आग्रह करना चाहिए अपितु अपने बजट में आधार संरचना विकसित करने पर ध्यान देना चाहिए—सामान्य रूप से भी और योजना विशेष के अनुरूप भी। निम्न आधार संरचना की वजह से गांवों की साख खपत क्षमता भी कम है। अतः बजटीय साधनों के माध्यम से आधार संरचना को विकसित करना होगा।

(5) अनुदान राशि को मियादी जमा के रूप में रखा जाये। इस पर ब्याज का भी लाभ होगा। इस समस्त राशि को ऋण की अन्तिम किश्त/किश्तों के भुगतान में प्रयुक्त करना चाहिए।

(6) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लक्ष्यों को सम्भाव्य जुड़वा योजना (पी एल पी) से रेखांकित किया जाना होगा। सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण के अंतर्गत कार्यान्वयन योग्य

सारणी 1
सातवीं योजना में कृषि उत्पादन के लक्ष्य एवं उपलब्धियां

(मिलियन टन में)

क्र. सं.	फसलें	1985-86		1986-87		1987-88		1988-89		1989-90	
		लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य	उपलब्धियां
	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1.	चावल	63.50	63.83	65.00	60.56	64.65	56.86	67.95	70.67	72.50	70.5–71.2
2.	गेहूं	49.20	47.05	49.00	44.32	50.51	46.17	52.32	53.99	54.00	52.5–53.8
3.	मोटे अनाज	37.00	26.20	32.00	26.83	32 32.5	26.36	33.00	31.89	33.75	33.0–33.5
4.	दालें	13.50	13.36	14.00	11.71	14-14.5	10.96	13.30	13.70	14.75	14.0–14.5
5.	कुल खाद्यान्न	159.20	150.44	160.00	143.42	160.163	140.35	166.57	170.25	175.00	170.00–173.0
6.	तिलहन	13.60	10.83	14.80	11.27	14.15	12.65	15.66	17.89	16.50	16.0
7.	कपास	8.50 8.60	8.73	8.80	6.91	8.30	6.38	9.78	8.69	10.00	9.5
8.	जूट व मेस्टा*	8.65	12.65	8.50	8.62	8.60	6.78	9.20	7.70	9.50	7.85
9.	गन्ना	101.00	170.65	185.190	186.09	180.185	196.74	195.00	204.63	212.00	205.0

* एक गाठ 180 किलो ग्राम

सारणी 2
सिंचाई सम्भाव्य का विकास एवं इसका उपयोग

(मिलियन हैक्टेयर में)

क्र. सं.	सिंचाई (अतिरिक्त क्षेत्र)	1984-85 सातवीं योजना (मान्य आधार वर्ष)	1985-90 लक्ष्य	1985-86		1986-87		1987-88		1988-89		1989-90
				लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य	उपलब्धियां	लक्ष्य
1.	बड़ी व मध्यम सिंचाई											
	सम्भाव्य	30.01	4.30	0.63	0.51	0.69	0.46	0.70	0.68	0.97	0.69	0.82
	उपयोग	25.33	3.90	0.62	0.49	0.58	0.66	0.64	0.53	0.74	0.53	0.63
2.	लघु सिंचाई											
	सम्भाव्य	37.52	8.60	1.70	1.52	1.73	1.63	1.68	1.62	2.87	1.72	1.95
	उपयोग	35.25	7.00	1.30	1.32	1.26	1.36	1.41	1.41	1.69	1.55	1.74
3.	कुल											
	सम्भाव्य	67.53*	12.90	2.33	2.03	2.42	2.09	2.33	2.30	2.84	2.41	2.77
	उपयोग	60.58*	10.90	1.92	1.81	1.84	2.02	2.05	1.94	2.43	2.08	2.37

*संचयी सार

साख योजनाओं को भी सम्भाव्य जुड़वा योजनाओं से ही सम्बल प्राप्त होगा।

उपरोक्त विश्लेषण से योजना का समीक्षात्मक स्वरूप सामने आ जाता है जो इस बात का द्योतक है कि ग्रामीण विकास हेतु योजना में साहसिक व महत्वाकांक्षी प्रावधान तो हैं, पर इस दृष्टिकोण पत्र के कुछ अंशों में आर्थिक तर्क से विलग हुई अवास्तविकता ठोस आर्थिक सोच पर आधारित सुविचारित नुस्खे के मध्य अजीब संयोग प्रस्तुत करती है। ऐसी स्थिति में यदि आयोग चाहे तो निम्न वैकल्पिक व्यूह रचना पर भी ध्यान दे सकता है।

(अ) मजदूरी वस्तुओं की विपुल वृद्धि को संभव एवं निश्चित करने के लिए सस्ती दरों पर उपलब्ध कराना।

(ब) परम्परागत उद्योगों और उनकी वृद्धि में सहायक तकनीक को संरक्षण देना।

(स) संरक्षण को अधिक फैलाने की अपेक्षा उन सभी उपायों को जो लघु क्षेत्रों में सहायक हों, जारी रखना।

(द) वास्तविक मजदूरी तथा रोजगार स्तर के सम्बन्ध को ध्यान में रखना ताकि आय में वृद्धि रोजगार वृद्धि के अनुपात में ही हो। यह वैकल्पिक नीति आपसी बातचीत के आधार पर तय की जानी चाहिए।

इन कुछ उपायों को शामिल करने से आठवीं योजना वास्तविक रूप से ग्रामीण विकास कर पायेगी।

आयोजना अधिकारी बैंक ऑफ बड़ौदा
राजस्थान अंचल जयपुर, राजस्थान

वास्तविकताओं पर मौन है यह पत्र

भारत डोगरा

गरीबी के खिलाफ छेड़ा गया हमारा महासमर हमें मुख्य रूप से गांवों में ही लड़ना पड़ेगा। यही कारण है कि हमारी आयोजना के ग्रामीण विकास पक्ष की ओर विद्वानों और अन्य सम्बन्धित लोगों का विशेष ध्यान अपेक्षित है, चाहे आयोजना के अन्य क्षेत्रों के लिए कितना ही अधिक आबंटन क्यों न किया गया हो।

आठवीं योजना के लिए तैयार किये गये दृष्टिकोण पत्र का बड़ी उत्सुकता के साथ इंतजार किया जा रहा था। इसके कई कारण हैं। एक तो यह कि यह पत्र केन्द्र में नई सरकार आने के बाद तैयार किया गया है, जिससे लोगों को कई नये परिवर्तनों की उम्मीदें हैं। साथ ही योजना आयोग का भी पुनर्गठन हुआ और इसमें ऐसे जाने माने व्यक्ति भी शामिल किये गये जो इन परिवर्तनों के प्रबल समर्थक रहे हैं। इससे भी इस दृष्टिकोण पत्र से लोगों की अपेक्षाएं बढ़ीं। देखना यह है कि योजना आयोग द्वारा जारी और राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा स्वीकृत इस दृष्टिकोण पत्र से लोगों की अपेक्षाएं किस हद तक पूरी हुई हैं।

इस दृष्टिकोण पत्र की कुछ हलकों में थोड़ी आलोचना भी हुई है। यदि हम इस आलोचना पर नजर डालें तो पाएंगे कि यह आलोचना पत्र में वर्णित चीजों की उतनी नहीं हैं जितनी उन चीजों की जिनका जिक्र दृष्टिकोण पत्र में नहीं है। दृष्टिकोण पत्र में कुछ मुद्दों पर विशेष जोर दिया गया है जैसे—समानता, विकेन्द्रीकरण और रोजगार के साधनों में वृद्धि। इनसे किसी को भी असहमति नहीं हो सकती। लेकिन कुछ लोगों का कहना है कि इस पत्र में इन मुद्दों के विभिन्न पहलुओं का विस्तार से और विशिष्ट रूप से वर्णन नहीं किया गया, ताकि वे लोग भी संतुष्ट हो सकें जिनको इस पत्र से अत्यधिक उम्मीदें थीं। इस शंका का समाधान यह है कि आखिर यह दृष्टिकोण पत्र ही है और अधिक विवरण योजना के विस्तृत दस्तावेज में देखने को मिलेगा। यहां एक प्रश्न यह भी उठता है कि दृष्टिकोण पत्र का कार्यक्षेत्र क्या होना चाहिए।

दृष्टिकोण पत्र के कार्यक्षेत्र के बारे में विवाद हो सकता है मगर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पिछले कुछ समय से योजना के उद्देश्यों और उपलब्धियों को लेकर काफी संशय और अविश्वास है। योजना के दृष्टिकोण पत्र में कहा कुछ जाता है और उपलब्धियां कुछ और होती हैं। दृष्टिकोण पत्र में असमानता समाप्त करने की बात की जाती है, लेकिन हम पाते हैं कि असमानता बढ़ रही है। कहा जाता है कि गरीबों की जरूरतों पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाएगा, लेकिन होता यह है कि अमीर उपभोक्ताओं की आवश्यकता पूर्ति के लिए अधिक साधन लगा दिये जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में जिनमें संदेह और अविश्वास उपजता हो, अच्छा यह रहता कि इस दृष्टिकोण पत्र में मुख्य मुद्दों के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं का विशिष्ट एवं विस्तृत विवरण होता, विशेष रूप से समानता के मुद्दे का।

समानता और विकेन्द्रीकरण के मुद्दों का जिक्र करते हुए इस बात का भी उल्लेख किया जा सकता था कि पिछली पंचवर्षीय योजनाओं में भी उल्लेखित इन उद्देश्यों की पूर्ति क्यों नहीं हो पाई और यह कि आठवीं योजना में इन उद्देश्यों के रास्ते की बाधाओं को हटाने के लिए क्या प्रावधान किये गये हैं ताकि इस बार भी हम इस दिशा में असफल न रहें। वे कौन से वर्ग हैं जो हमें इन उद्देश्यों में सफल नहीं होने देते? क्या इन वर्गों की ताकत समाप्त करना संभव हो सका है? यदि नहीं तो इन ताकतों को प्रभावहीन करने के लिए कौन-कौन से कदम उठाये जा रहे हैं जिससे लोगों से किये हुए वायदे पूरे हो सकें। इस तरह के बेबाक वर्णन से एक तरह की ऋणात्मक तस्वीर तो प्रस्तुत होती, लेकिन वास्तव में इससे लोगों में सरकार और योजना आयोग की सदस्यता के प्रति विश्वास ही बढ़ता।

इसी प्रकार दृष्टिकोण पत्र में किसी महत्वपूर्ण उद्देश्य या अन्य किसी विषय की चर्चा करते समय, लोगों द्वारा इस बारे में प्रकट किये गये संदेहों और आपत्तियों आदि का उल्लेख करना भी बेहतर होता। ऐसा करने के बाद दृष्टिकोण पत्र तैयार करने वाले यह भी बता सकते थे कि इस तरह के संदेह या आपत्तियां कैसे आधारहीन हैं, या यह कि इन संदेहों और आपत्तियों को आधारहीन बनाने के लिए कौन-कौन से कदम उठाए जा रहे हैं। ऐसा करने से भी लोगों के मन में यह विश्वास पैदा होता कि योजना बनाने वाले समस्याओं का सामना जागरूकता से करना चाहते हैं।

लेकिन दुर्भाग्यवश बहुत से कठिन और असुविधापूर्ण प्रश्नों का स्वतंत्र, बेबाक और दृढ़तापूर्वक सामना न करके, दृष्टिकोण पत्र, संबंधित लोगों का विश्वास बढ़ाने और उनकी अपेक्षाओं को पूरा करने में असफल रहा है।

आइए, अब हम देखें कि इस पत्र में ग्रामीण विकास की

कितनी चर्चा की गई है ताकि इसके ग्रामीण विकास पक्ष और इसकी संभावित कमियों का अध्ययन किया जा सके। ग्रामीण विकास के संदर्भ में दृष्टिकोण पत्र में दो मुख्य बातें कही गई हैं—

1. ग्रामीण विकास पर अधिक जोर दिया जाएगा और ग्रामीण विकास के लिए अधिक साधनों का आबंटन किया जाएगा। पत्र में इस बात का जिक्र है कि ग्रामीण जनसंख्या के लाभ के लिए अधिक निवेश किया जायेगा। इस मुद्दे की विस्तार से चर्चा की जानी चाहिए थी, साथ ही इस बात की भी कि किन मदों पर अधिक निवेश करने से कमजोर तबकों को अधिक मदद मिलेगी।

2. दृष्टिकोण पत्र इस बात पर जोर देता है कि ग्रामीण विकास समतावादी होना चाहिए। समानता लोगों के बीच और विभिन्न क्षेत्रों के बीच, दोनों में, होनी चाहिए। इस उद्देश्य के लिए भूमि सुधारों को सही ढंग से लागू किया जाना चाहिए। आदिवासियों की भूमि का गैर-आदिवासियों को हस्तांतरण या बिक्री पर प्रतिबन्ध होना चाहिए। पिछड़े इलाकों और वर्षा पर आधारित तथा सूखे इलाकों में होने वाली खेती की जरूरतों को उच्च प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

यहां भी हम पाते हैं कि कई असुविधापूर्ण लेकिन अति महत्वपूर्ण मुद्दों को छोड़ दिया गया है। भूमि सुधारों को तेजी से और प्रभावशाली ढंग से लागू करने की नीतियां आखिर क्यों सफल नहीं हुई? इस दिशा में सरकारी प्रतिबद्धता के बावजूद क्षेत्रीय असंतुलन में वृद्धि क्यों हुई? और सरकार इस असफलता के अनुभव को ठीक करने के लिए स्पष्ट रूप से क्या करना चाहती है?

आठवीं योजना में ग्रामीण विकास की चर्चा करने के बाद दृष्टिकोण पत्र में एक संक्षिप्त अनुच्छेद में इस बात की चर्चा की गई है कि क्यों ग्रामीण विकास और निर्धनता उन्मूलन की विभिन्न योजनाएं अपने उद्देश्यों में पूरी तरह सफल नहीं हो सकीं। दस्तावेज कहता है, "उनका प्रभाव और प्रभाविता, कार्यक्रमों के फैले होने, उनमें अन्तर्विरोध और अति व्याप्ति, विशेष प्रदेशों की आवश्यकताओं और क्षमताओं के साथ कार्यक्रम जोड़ने में असफलता; केन्द्रीय और राज्य अधिकारी तंत्र पर ही भरोसा; राजनैतिक संरक्षण के साधन के रूप में इन कार्यक्रमों का प्रयोग; संस्थापित विशिष्ट वर्गों द्वारा उनका पूर्वक्रय, व्यापक रूप से प्रकट हो जाने के कारण गंभीर रूप से प्रभावित होती है।"

दृष्टिकोण पत्र के अनुसार शायद इन सभी समस्याओं का हल विकेन्द्रीकरण ही है। मगर पत्र में वह बात स्पष्ट नहीं होती कि इस पूरी व्यवस्था पर काबिज निहित स्वार्थों से विकेन्द्रीकरण के जरिये कैसे निपटा जायेगा।

विकेन्द्रीकरण पर काफी उम्मीदें लगाते हुए दस्तावेज कहता है, "मौजूदा कार्यक्रमों की बहुत-सी खामियों को स्थानीय सरकार की निर्वाचित प्रतिनिधि संस्थाओं को आर्थिक तथा सामाजिक विकास कार्यक्रमों (लघु सिंचाई, मृदा तथा नमी संरक्षण, स्थानीय बाढ़ रोकथाम निर्माण कार्य, प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल और आवास) की योजना बनाने एवं क्रियान्वयन करने सम्बन्धी जिम्मेदारी का एक बड़ा भाग अंतरित करके दूर किया जा सकता है। आवश्यक वित्तीय संसाधन तथा स्टाफ को उनके कार्यक्षेत्र के अधीन लाया जाना चाहिए। प्रत्येक गांव अथवा ब्लाक पंचायत और जिला स्तर की संस्था का काफी मात्रा में वित्त पर नियंत्रण रहेगा और उन्हें यह निर्णय लेने की आजादी और छूट रहेगी कि स्थानीय विकास के लिए इनका सर्वोत्तम उपयोग कैसे किया जाये।"

एक अन्य स्थान पर पत्र में कहा गया है, "अन्ततः स्थानीय क्षेत्र योजना की प्रक्रिया तभी प्रभावी हो सकती है, यदि यह काम जनता के प्रति उत्तरदायी निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा किया जाये। इसलिए पंचायती राज संस्थाओं को पुनः कार्यशक्ति प्रदान करना और उनके लिए आवधिक चुनावों को अनिवार्य बनाया जाना अत्यधिक महत्वपूर्ण है।"

दृष्टिकोण पत्र जोर देता है, "यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि ग्रामीण विकास के लिए संसाधनों का एक बड़ा हिस्सा स्थानीय निकायों को उदार नीति से उपलब्ध कराया जाये जिससे कि वे खुद जुटाये गये संसाधनों के साथ योजनाबद्ध ढंग से आयोजना तथा क्षेत्रीय विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित कर सकें।"

यह सब उन गांवों के लिए तो ठीक है जहां असमानताएं बहुत अधिक नहीं हैं और जहां के सामाजिक-आर्थिक ताने-बाने पर मुठ्ठी भर शक्तिशाली व्यक्तियों अथवा परिवारों का नियंत्रण नहीं है। मगर भारत के अधिकतर गांवों में सच्चाइयां कुछ और ही हैं। वहां विषम असमानता है, सामाजिक-आर्थिक उत्पीड़न है और कुछ परिवारों का पूरे गांव के सामाजिक-आर्थिक जीवन पर नियंत्रण है। ग्राम पंचायतों आदि के चुनावों के समय भी यही हाल देखने को मिलता है। इन पंचायतों में शोषक वर्ग के लोगों का ही प्रभुत्व रहता है। पिछले कुछ समय में यह भी देखा गया है कि इन चुनावों में अवांछनीय और असामाजिक तत्वों की मदद ली गई। खंड और जिला स्तर पर भी इस तरह की प्रवृत्ति जोर पकड़ती जा रही है।

अतः सबसे पहले इन कमियों को दूर करना चाहिए। भूमि सुधारों को अधिक प्रभावशाली ढंग से लागू किया जाना चाहिए, असमानता और शोषण को सफलतापूर्वक समाप्त किया जाना चाहिए; कुछ लोगों के सामाजिक-आर्थिक प्रभुत्व

को समाप्त किया जाना चाहिए और पंचायतों को असामाजिक एवं अवांछनीय लोगों के प्रभाव से मुक्त किया जाना चाहिए। तभी हमारे गांव विकेन्द्रीकरण के अनुभव के लिए तैयार हो सकेंगे। नहीं तो हम जाने-अनजाने में अपना प्रशासनिक तंत्र और संसाधन गलत हाथों में सौंप देंगे। यदि ऐसा हुआ तो परिणामों की कल्पना करना सरल है।

अतः पंचायती राज तथा विकेन्द्रीकरण जैसी चीजों से पहले एक जन आन्दोलन चलाया जाना चाहिए, जिसे विभिन्न सरकारी उपायों का समर्थन प्राप्त हो ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में शक्ति संतुलन कमजोर तबकों के पक्ष में झुकाया जा सके और शोषकों की पकड़ ढीली पड़ सके। आश्चर्य है कि इस बात का जिक्र तक दृष्टिकोण पत्र में नहीं है। कम से कम स्पष्ट रूप से तो बिल्कुल नहीं। दस्तावेज ऐसा कहता लगता है जैसे वर्तमान परिस्थितियों में ही विकेन्द्रीकरण के जरिये उन बाधाओं को दूर किया जा सकता है जो पिछले ग्रामीण विकास कार्यक्रमों और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के मार्ग में उपस्थित थीं। सच्चाई को लगभग नजर-अंदाज करते हुए पत्र कहता है, "कार्यक्रमों के क्रियान्वयन पर नजर रख सकने तथा सृजित परिसम्पत्तियों का रख-रखाव कर सकने में प्रत्येक स्थानीय क्षेत्र के लोग, विशेषकर औरतें प्राथमिकताओं के निर्धारण में भाग ले सकेंगी।"

समन्वित क्षेत्र आयोजन का अर्थ है कि भूमि ही नहीं अपितु सम्बंधित क्षेत्र में उपलब्ध घरेलू पशु, वन उत्पादन, लघु खनिज जैसे साधनों के प्रयोगों का, और सड़कों, रेलवे लाइनों जैसे जन लाभ के निर्माण कार्यों की संभावनाओं का, गरीबी उन्मूलन के लिए समन्वित रूप से परीक्षण किया जाये। लेकिन देश के अधिकांश क्षेत्रों में इन सब कार्यों में कुछ अमीर लोगों का ही प्रभुत्व है—चाहे भू-स्वामित्व हो या खानों तथा खदानों का पट्टा हो और चाहे वन उत्पादों, जानवरों की खालों आदि का व्यापार या ठेका। अतः जब तक इन निहित स्वार्थों से टक्कर न ली जाये और इन्हें परास्त न कर दिया जाये, तब तक हम समन्वित क्षेत्र आयोजना के लक्ष्य को कैसे प्राप्त कर सकते हैं? इस बारे में दृष्टिकोण पत्र जनशक्ति को स्पष्ट रूप से दिशा प्रदान नहीं करता। लगता है कि दस्तावेज का मानना है कि वर्तमान परिस्थितियों में ही इस तरह की आयोजना संभव और सफल हो सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आठवीं योजना के लिए तैयार किया गया यह दृष्टिकोण पत्र ग्रामीण विकास से सम्बंधित कई असुविधापूर्ण लेकिन महत्वपूर्ण प्रश्नों को नजर अंदाज करके अनुत्तरित छोड़ देता है।

अनुवाद: अर्चना सक्सेना,
जी-212, प्रीत विहार, दिल्ली-110092

छटपटाते काम

सत्यपाल चुघ

मैं चाहे कर चुका
जाने या अनजाने
कितने ही
चमकते-दमकते काम
पर ये चुके काम भी
मुझे नहीं छोड़ते
और और जकड़ते
छटपटाते
रहते सर पर सवार
बार बार मांगते
दुनियादारी दाम
व्यापारी सम्मान
और कुछ न पूछो
अन्तर की तिजोरी से संचित
अरमानों भरे गुमानों की
जो गाहे-बगाहे
वक्त-बेवक्त
खुलते-उछलते रहते हैं
यों भी मुझे
ऐसी चाट पड़ी है
इनके चर्वित चर्वण की
प्रतिदानमयी जुगाली की
कि आत्म की आनंदक
हरियाली रहे चाट

20 स्टाफ क्वाटर्स
किरोड़ीमल कॉलेज, दिल्ली-110007

आठवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास तथा गरीबी उन्मूलन

डा. गिरिजा प्रसाद दूबे

आठवीं योजना का दृष्टिकोण पत्र तैयार हो चुका है। इसकी स्वीकृति भी विकास परिषद की 18-19 जून की बैठकों में कर दी गई है। इस योजना के प्रमुख उद्देश्य होंगे :

1. संघीय ढांचे का सुदृढ़ीकरण,
2. अधिकार का विकेन्द्रीकरण,
3. जनता की सहभागिता,
4. ग्रामीण क्षेत्र का विकास,
5. आर्थिक क्रिया-कलापों में स्त्रियों की भूमिका पर जोर, तथा
6. रोजगार के अधिक अवसरों का सृजन।

इसके अतिरिक्त भी दृष्टिकोण पत्र में अनेक बातें रखी गयीं हैं जिनमें सबसे प्रमुख बात जिसकी चर्चा आजकल सबसे अधिक हो रही है वह है आठवीं योजना राशि का 50 प्रतिशत ग्रामीण विकास एवं गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम पर व्यय किया जाना। इस पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

नयी सरकार ने सत्ता में आने के बाद अपनी नीतियों एवं वायदे पूरे करने के लिए योजना आयोग का पुनर्गठन करना आवश्यक समझा। नये सदस्यों को ग्रामीण विकास पर नये सिरे से विचार कर आठवीं योजना का दृष्टिकोण पत्र तैयार करने की जिम्मेदारी दी गयी। इस योजना के दृष्टिकोण पत्र की प्रमुख विशेषता में यह बताया गया है कि सातवीं योजना का संदेश न्याय के साथ विकास था, विकास हुआ भी परन्तु इसके लाभ से एक बहुत बड़ा वर्ग वंचित रह गया। अब योजना आयोग ने इस प्रवृत्ति को बदलने का दृष्टिकोण अपनाया है। अब उद्देश्य विकास को जनसामान्य तक पहुंचाने का है। आयोग का प्रयास है कि समाज के आर्थिक आधार को ही इस प्रकार विस्तृत किया जाय जिससे लोगों की क्रय शक्ति में वृद्धि के साथ जीवन-स्तर में भी सुधार हो।

वर्तमान सरकार की सोच यह है कि आज भी भारत की अर्थव्यवस्था मूल रूप से ग्रामीण है और इसलिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था को ही विकसित किया जाना चाहिए। यह कोई नयी बात नहीं है। गांधी, लोहिया और जयप्रकाश सरीखे सभी नेता गांवों को विकसित करने के पक्षधर थे। गांधीजी भारत को गांवों का देश मानते थे। वह ग्रामीण स्वराज की बात करते थे और गांवों को इस प्रकार विकसित करना चाह रहे थे जिससे कि हर गांव प्रत्येक दृष्टि से एक आत्मनिर्भर इकाई बन सके। नेहरू जी ने भी ग्रामीण विकास को योजनाओं का प्रमुख मुद्दा बनाया। परन्तु वह कृषि और ग्रामीण विकास के साथ-साथ उद्योगों को भी विकसित करने के पक्ष में थे। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि, ग्रामीण विकास और सिंचाई सुविधाओं के विस्तार पर कुल योजना व्यय का 37 प्रतिशत व्यय किया गया था। पुनः दूसरी योजना में औद्योगीकरण के औचित्य को ध्यान में रखकर कृषि के स्थान पर उद्योगों की स्थापना पर विशेष बल दिया गया। बाद की योजनाओं में कृषि विकास पर पर्याप्त ध्यान देने की बात तो स्वीकार की गयी परन्तु इस क्षेत्र के लिए वास्तविक योजना परिव्यय प्रथम पंचवर्षीय योजनाओं की अपेक्षा कम होता गया। वर्ष 1988-89 में यह घटकर कुल व्यय का केवल 20.3 प्रतिशत ही रह गया।

नयी सरकार की आर्थिक नीति ग्रामीण विकास, कृषि-क्षेत्र एवं गरीबी उन्मूलन पर परिव्यय की दृष्टि से अधिक गांधीवादी मानी जा सकती है। परन्तु एक दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्र पर 50 प्रतिशत व्यय किया जाना युक्तिपूर्ण नहीं लगता। कुल योजना का यदि 50 प्रतिशत ग्रामीण विकास पर व्यय कर दिया गया तो योजना के अन्य मदों का क्या होगा? क्योंकि यदि योजना आयोग कुल राशि का 50 प्रतिशत निजी क्षेत्र पर खर्च करता है फिर सार्वजनिक क्षेत्र का पूरा भाग उद्योगों पर खर्च न होकर ग्रामीण क्षेत्रों पर ही हो जायेगा। सार्वजनिक उद्योग समाजवाद के लिए अनिवार्य हैं।

इससे इतना तो निष्कर्ष निकाला ही जा सकता है कि सरकार सार्वजनिक क्षेत्र की योजना राशि का 50 प्रतिशत सीधे कृषि क्षेत्र पर व्यय नहीं करेगी। वह केवल अप्रत्यक्ष रूप से कृषि तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए लाभकारी बातें ही कर सकती है। हाल ही में योजना आयोग ने यह संकेत दिया है कि सार्वजनिक क्षेत्र की योजना राशि का 10 प्रतिशत सीधे कृषि क्षेत्र पर खर्च किया जायेगा। यहां यह जानना जरूरी है कि पिछली सरकार द्वारा तैयार किए गए आठवीं योजना के आधार पत्र में कृषि पर प्रत्यक्ष रूप से 8 प्रतिशत खर्च करने का प्रावधान था। अतः यह स्पष्ट है कि नई सरकार द्वारा इस मद पर कुल मिलाकर 2 प्रतिशत ही अधिक खर्च किया जायेगा। यहां नई सरकार की

सीमाएं स्पष्ट हैं। उसे स्वयं भी अपने वायदों को पूरा करने की बात को घुमा-फिरा कर न कह कर अपनी सीमाओं को स्पष्ट करना चाहिए।

गांवों में, किसानों के अतिरिक्त भूमिहीन कृषकों और कृषक मजदूरों और ग्रामीण बेरोजगारों की बहुत बड़ी संख्या है। यह संख्या किसानों की संख्या से कई गुनी है। यदि सरकार को केवल किसानों की ही चिंता है तो इससे कम ही लोगों का लाभ होगा। किसानों में भी कई श्रेणियां हैं जिनकी अपनी अलग-अलग समस्याएं हैं। बड़े किसानों की संख्या यद्यपि छोटी है फिर भी गांवों में वे अधिक प्रभावशाली होते हैं। सरकारी सहायता का बड़ा अंश इनकी ही जेब में चला जाता है। वैसे किसान भी अपनी समस्याओं से बहुत परेशान हैं। बिजली, उर्वरक और दवाबों पर सरकारी छूट के बावजूद कठिन परिश्रम के बाद उन्हें उचित मूल्य नहीं मिलता। सरकार उचित मूल्य देने की बात तो करती है परन्तु औद्योगिक उत्पादों की भांति कृषि उत्पादों का मूल्य निर्धारण नहीं किया जाता है। सरकार भी सोचती है कि बेचने वाले तो कम हैं खरीदने वालों की संख्या बहुत अधिक है। इसका परिणाम भोगता है किसान। वह अपने उत्पादन के लिए खुले आकाश में प्रचण्ड जाड़ा, गर्मी और वर्षा की मार तो सहता ही है प्राकृतिक प्रकोपों के दुष्परिणाम भी सबसे अधिक उसी को भुगतने पड़ते हैं।

आज देश के अधिकांश भागों में सरकारी नीति के चलते एक और बड़ी समस्या से किसान जूझ रहा है। वह है कृषि मजदूरों की समस्या। सरकार ने काम के घण्टे और निम्नतम मजदूरी नकद रुपये में निर्धारित कर दी है। ये मजदूर रुपये तो सरकार द्वारा निर्धारित मांगते हैं परन्तु काम के घण्टे कम चाहते हैं। ऐसी स्थिति में किसान मजदूरों का बोझ नहीं सहन कर पा रहा है, जिसका परिणाम उत्पादन पर पड़ना अवश्यम्भावी है। कृषि को उद्योग घोषित किये बिना कृषकों की समस्या बढ़ती ही जायेगी। इसे उद्योग का दर्जा और सुविधाएं प्राप्त होने से न केवल किसानों की समस्या सुलझ सकती है बल्कि कृषि से जुड़े कृषि मजदूरों और ग्रामीण बेरोजगारों का भी भविष्य सुधारा जा सकता है।

आठवीं योजना के कृषि और ग्रामीण विकास सम्बन्धी उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सिंचाई, भूमि विकास, जल-प्रबन्ध एवं संरक्षण हेतु भारी पूंजी निवेश की आवश्यकता पड़ेगी। विकास परिषद के उद्घाटन भाषण में प्रधानमंत्री ने कहा कि 'आठवीं योजना' में निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भारी पूंजी निवेश और कठोर परिश्रम की जरूरत होगी। यदि ऐसा नहीं किया गया तो विकास की दर बढ़ाना संभव नहीं हो सकेगा। बचत दर को बढ़ाकर ही सकल राष्ट्रीय उत्पाद की दर 5.5 प्रतिशत बढ़ा सकते हैं। ...केन्द्र और राज्य सरकारों का राजस्व बढ़ाना ही पड़ेगा पर यह करों की दर बढ़ाकर नहीं बल्कि कर का आधार व्यापक कर और करों की बेहतर वसूली एवं भुगतान से करना होगा। ऐसी स्थिति में किसानों के 10,000 रुपये तक के ऋणों की माफी की बात औचित्यपूर्ण नहीं लगती है। खाद्यान्न, उर्वरक और बिजली पर कुछ प्रतिशत सहायता देने में सरकार पर वैसे ही काफी बोझ पड़ता है। इस प्रकार की माफी की घोषणाओं से किसानों में आत्मनिर्भरता की कमी आयेगी और इसके दुष्परिणाम भी होंगे।

पिछले अनुभव

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व से ही हम ग्रामीण विकास की बात करते आ रहे हैं। स्वतंत्रता के कुछ समय बाद ही, 1 अप्रैल 1951 से पंचवर्षीय योजनाएं प्रारंभ की गयीं। इन योजनाओं के साथ ही समय-समय पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम और समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम जैसी कई योजनाएं आरंभ की गईं, जिनका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास रहा है। परन्तु पिछले इकतालीस वर्षों के अनुभव और अनेक अध्ययनों से यह निष्कर्ष प्राप्त हो चुका है कि अब तक चली आ रही आर्थिक नीति, विकास योजना और विभिन्न कार्यक्रम देश में गरीबी उन्मूलन में बहुत सफल नहीं रहे। वैज्ञानिक, तकनीकी एवं औद्योगिक समृद्धि का समुचित लाभ अभी तक समस्त ग्रामवासियों को नहीं मिल पाया है। इन सारी योजनाओं का पूरा लाभ ग्रामवासियों के स्थान पर बिचौलियों, सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों की जेब में चला जा रहा है। आज भी गरीबी रेखा से नीचे जीवन बिता रहे लोगों की संख्या गांवों में 40 प्रतिशत से अधिक है।

ग्रामीण विकास के विभिन्न सहायता कार्यक्रमों में क्या और किस प्रकार की, कैसे और किसकी सहायता की जाय इसका ध्यान नहीं रखा गया। पश्चिम बंगाल के नाडिया जिले के चक्रदार खण्ड के चार चुने गांवों के अध्ययन में यह पाया गया कि जिन लोगों को ठेला, रिक्शा, सवारी रिक्शा, बैलगाड़ी, मछली पकड़ने का सामान, बाल्टी बनाने, छतरी मरम्मत और सिलाई मशीन की सहायता दी गयी उनकी आर्थिक स्थिति में तो कुछ सुधार हुआ परन्तु जिन्हें बैल, बकरी, बत्तख, आदि दी गयी परन्तु उनके लिए चारे का प्रबन्ध नहीं किया गया, वे सब चारे और चिकित्सा के अभाव में मर गये। कुछ ने अपनी सहायता राशि को पारिवारिक सदस्यों के इलाज, शादी और अन्तिम संस्कार में लगा दिया। इन लोगों को सहायता राशि

पंचायत समिति के माध्यम से दी गयी थी परन्तु इसके उपयोग के बारे में कोई जांच या देख-रेख न तो पंचायत समिति ने की न ही जिला ग्रामीण विकास एजेन्सी ने।

भूमि सुधार योजनाएं पूरे देश में राज्यों की परिस्थितियों के अनुसार लागू की गयी हैं। परन्तु उनका क्रियान्वयन विभिन्न राज्यों में अच्छी प्रकार से नहीं किया गया। जहां-जहां ठीक से लागू किया गया उन राज्यों में एक उत्तर प्रदेश भी है। यहां के भूमि सुधार कार्यक्रम की स्थिति एक अध्ययन के उदाहरण से आंकी जा सकती है। उत्तर प्रदेश के बांदा जिले के मणिपुर विकास खण्ड के अध्ययन में यह पाया गया कि भूमिहीनों को खेती के लिए ऐसी कंकरीली-पथरीली भूमि प्रदान की गयी जिस पर वे खेती नहीं कर पाये। जमींदारों की सीमा-निर्धारण से निकाली जमीन के अनेक बेनामी पट्टों की शिकायतें भी पायी गयीं।

जब 1952 में महात्मा गांधी के जन्मदिन पर सामुदायिक विकास योजना को प्रारम्भ किया गया तो उसके विषय में नेहरू जी की यह परिकल्पना थी कि यह कार्यक्रम देश के भाग्य को पलट देगा। परन्तु इसकी असफलता को अनेक समितियों ने स्वीकार किया। गांधीजी के ग्राम स्वराज की कल्पना को परिपूर्ण करने के लिए नेहरूजी ने भारत के स्वशासन की प्राचीन संस्था पंचायत को पुनर्गठित किया और पंचायत राज कानून को पूरे देश में लागू करने के लिए अनुरोध किया। उनका सोचना था कि ग्राम पंचायत के माध्यम से गांव के सभी लोग मिलकर अपनी समस्याओं का निराकरण करेंगे और ग्रामीण विकास की योजनाएं भी उन्हीं के माध्यम से जन-सहयोग के आधार पर चलेंगी। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को भी पंचायतों के माध्यम से चलाने की व्यवस्था की गयी थी परन्तु इससे इच्छित परिणाम नहीं मिल सका। इसका कारण यह था कि पंचायतें भी जन-सामान्य का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकीं। पंचायत राज संस्थाओं में भी जिले की दबदबे वाली जातियां हावी रहती हैं। अशोक मेहता समिति (1978) और पटेल समिति (महाराष्ट्र, 1986) ने भी इस बात को स्वीकार किया है। यही कारण था कि कर्नाटक और पश्चिमी बंगाल जैसे कुछ राज्यों को छोड़ सभी जगह पंचायत राज जैसी महत्वपूर्ण संस्था की उपेक्षा प्रारम्भ कर दी गयी।

आवश्यकता है अनुभवों से लाभान्वित होने की

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि गांवों के बहुमुखी विकास और कृषि व्यवस्था को बेहतर बनाने तथा गरीबी निवारण के लिए अनेक कार्यक्रम चलाये गये परन्तु दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति, व्यापक प्रबन्ध और मूल्यांकन के अभाव में वे सफल नहीं हो सके। जिनके लिए वे कार्यक्रम बने थे उन्हें उनका लाभ नहीं मिल सका। बिचौलिये इसका बहुत बड़ा हिस्सा हड़प ले गये। इसका जिक्र अभी हाल ही में सम्पन्न (जून 18, 19, 1990) **विकास परिषद के उद्घाटन भाषण में प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने भी किया है।** प्रसन्नता की बात है कि पंचायतों को भी वे अधिकार सम्पन्न करना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि 'पुरानी विकृतियों को दूर करने के लिए यह जरूरी है कि विकास योजनाओं का लाभ बिचौलियों को नहीं बल्कि उन लोगों को मिले जिनके लिए योजनाएं बनी हैं। इसलिए राष्ट्रीय मोर्चा सरकार पंचायतों को नियोजन, प्रशासनिक और वित्तीय अधिकार देने के लिए प्रतिबद्ध है।' परन्तु ध्यान रहे कि अभी थोड़े ही समय पहले विशेषकर उत्तर भारत में सम्पन्न पंचायतों, स्थानीय निकायों, जिला-परिषदों और महानगरों के अध्यक्षों के चुनाव में हिंसा और धन बल का प्रयोग किया गया। हमें इन सब का भी उपाय करना होगा। सभी क्षेत्रों में सन्तुलित विकास की प्रक्रिया के न अपनाये जाने और भूमि सुधार कानून का सही ढंग से लागू न किये जाने से ग्रामीणों के बीच आर्थिक और क्षेत्रीय विषमता की वृद्धि से इन्कार नहीं किया जा सकता है। इन दोनों प्रकार की विषमताओं से निपटने के लिए अलग योजनाएं बनानी पड़ेंगी और उनका क्रियान्वयन भी सही परिप्रेक्ष्य में सुनिश्चित करना पड़ेगा। क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप योजनाओं और व्यक्तियों तथा उनकी परिस्थितियों के अनुरूप सहायता की बात स्वीकार करनी पड़ेगी। आशा है कि नयी सरकार पिछली योजनाओं के अनुभवों से ग्रामीण विकास की नयी योजनाओं एवं विशेषकर नयी पंचवर्षीय योजना (आठवीं योजना) के निर्माण एवं कार्यान्वयन में सबक लेगी तथा कृषि को उद्योग का दर्जा प्रदान करने पर भी विचार करेगी।

32, अध्यापक निवास,
काशी विद्यापीठ, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

● ● ● ● ● ● ● ● ● ●

आठवीं योजना की दिशा

डा. गिरीश मिश्र

देश में राजनीतिक सत्ता परिवर्तन के साथ-साथ यह रेखांकित करने का भी प्रयास किया जा रहा है कि आर्थिक-सामाजिक विकास की दिशा और मार्ग में आधारभूत परिवर्तन होने जा रहा है। यह 18-19 जून, 1990 को हुई राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में पारित आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र से स्पष्ट है।

इस दस्तावेज में अनेक नयी बातें कही गयी हैं और प्रस्थापनाएं रखी गई हैं। उदाहरण के लिए यह प्रस्थापना ही लें कि 1989 के दौरान हुए लोकसभा के चुनाव भारतीय जनता की महान-जनतांत्रिक चेतना के सूचक हैं और उसने जिन लोगों को सत्ता सौंपी उनसे अपेक्षा की गई कि वे राष्ट्रीय नियोजन के चौखटे के अंदर विकास का एक वैकल्पिक माडल लायेंगे। इस प्रस्थापना के पहले भाग से शायद ही कोई असहमत होगा परन्तु आखिरी हिस्से पर पूर्ण सहमति संभव नहीं लगती। अनेक अर्थशास्त्री योजना आयोग से भिन्न मत वाले हो सकते हैं जैसा कि तत्काल चल रही राष्ट्रीय बहस से स्पष्ट है।

जो भी हो, इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि दूसरी योजना के दृष्टिकोण पत्र के बाद आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में ही कुछ दम-खम है क्योंकि उसने कई नये मुद्दे उठाये हैं और अनेक पुरानी मान्यताओं के आगे प्रश्न चिह्न लगाये हैं।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में जोर देकर कहा गया है कि राष्ट्रीय नियोजन तो रहना चाहिए मगर विकास का मार्ग बदलना होगा। अब तक देश विकास के जिस मार्ग पर चला है उससे अनेक महत्वपूर्ण उपलब्धियां प्राप्त हुई। परन्तु साथ ही असंतुलन और असमानताएं भी बढ़ी हैं तथा समाज के कई हिस्से यह समझते हैं कि उनके साथ न्याय नहीं हुआ है और उनका उत्पीड़न हो रहा है। इस कारण निराशा बढ़ी है जिसकी अनेक प्रकार से अभिव्यक्ति होती है।

जरूरत यह है कि बेरोजगारी, निरक्षरता, बीमारी, गरीब एवं कमजोर वर्ग के लोगों के जीवन स्तर में गिरावट पर ध्यान देकर असंतोष तथा अशांति के मूल-कारणों को समाप्त किया जाये। सिर्फ एक न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था का निर्माण ही आवश्यक नहीं है। आम लोगों को यह अहसास भी होना चाहिए कि वह न्यायपूर्ण है।

अब तक हमारे देश में "सामाजिक न्याय सहित विकास" के सूत्र को अपनाया गया है। किन्तु दृष्टिकोण पत्र में इसे नाकाफी माना है। विकास के ढांचों और प्रक्रियाओं को इस प्रकार चलाना चाहिए कि हरेक को पर्याप्त रोजगार, न्यूनतम वांछित मात्रा में भोजन, कपड़ा और आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं आदि निश्चित रूप से प्राप्त हों। सार्थक विकास उसी को कहा जा सकता है जो लोगों की दक्षताओं, शक्तियों और क्षमताओं को उत्पादक कार्यों में लगाये तथा उन्हें एहसास कराये कि वे वस्तुओं और सेवाओं के सृजन में हिस्सेदार हैं। इसी के अभाव का परिणाम है कि चार दशकों के नियोजन के बावजूद पूर्ण रोजगार और प्रत्येक को कमोबेश न्यूनतम जीवन-स्तर देने के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सका है। दृष्टिकोण पत्र 1990 के दशक में अपनी रणनीति उन लक्ष्यों को प्राप्त करने की ओर उन्मुख करेगा।

दृष्टिकोण पत्र की एक अन्य महत्वपूर्ण प्रस्थापना यह है कि आर्थिक वृद्धि की दर विकास का एक मात्र सूचक नहीं हो सकती। पिछले दशक के दौरान आर्थिक वृद्धि की दर में काफी बढ़ोतरी हुई और उसके निर्धारित लक्ष्य को लगभग पूरा कर लिया गया। परन्तु इसके बावजूद अनेक समस्याएं ज्यों की त्यों रहीं और आम आदमी की स्थिति में वांछित सुधार नहीं हुए। इसका मुख्य कारण था कि जिन वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन बढ़ा वे उच्च आय वर्ग वालों के हिस्से आ गई और उत्पादन वृद्धि के साथ-साथ रोजगार के अवसर नहीं बढ़े। कुल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि क्षेत्र के सापेक्ष योगदान में तो कमी आयी किन्तु कृषि क्षेत्र पर रोजगार के लिए निर्भर लोगों की संख्या में उसी अनुपात में कमी नहीं आयी। कहने का मतलब

यह है कि औद्योगिक क्षेत्र और सेवाओं के क्षेत्र में जिस अनुपात में उत्पादन बढ़ा उसी अनुपात में रोजगार के अवसर नहीं बढ़े। फलस्वरूप कृषि और गैर कृषि क्षेत्रों के बीच प्रति व्यक्ति आय में विषमता बढ़ी।

इसके साथ ही देश के विभिन्न भागों के बीच क्षेत्रीय असंतुलन बढ़ा। उदाहरण के लिए पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पूर्वी उत्तर प्रदेश के गांवों के किसानों और मजदूरों की आर्थिक स्थिति के बीच खाई बढ़ी। एक ही गांव के अन्दर विभिन्न वर्गों के बीच असमानताएं बढ़ीं।

पिछले दशक के दौरान कुल उत्पादन तो बढ़ा परन्तु आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की पैदावार जनसंख्या वृद्धि की तुलना में धीमी गति से बढ़ी। नतीजा यह हुआ कि अनाज, चीनी, गुड़, सूती कपड़े आदि की प्रति व्यक्ति उपलब्धि में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ। उन वस्तुओं और सेवाओं का ही उत्पादन तेजी से बढ़ा जिनकी मांग शहरी और अपेक्षाकृत संभ्रान्त जनता करती है। इस प्रकार पिछले दशक के दौरान उत्पादन का ढांचा अल्पसंख्यक उच्च वर्ग की आवश्यकताओं को पूरा करने की ओर ही उन्मुख रहा।

जैसा कि ऊपर कह चुके हैं, रोजगार के अवसर आर्थिक संवृद्धि की तुलना में काफी धीमी गति से बढ़े। परिणामस्वरूप रोजगार पाने के इच्छुक अधिकतर लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं कराये जा सके। बेरोजगारों की फौज का आकार बढ़ा और अर्ध-बेरोजगारों की संख्या बढ़ी तथा इस कारण गैर-संगठित क्षेत्रों में जहां न ट्रेड यूनियनें सक्रिय हैं और न मजदूर एकजुट हैं, वहां न्यूनतम मजदूरी संबंधी कानूनों के बावजूद वास्तविक मजदूरी नाममात्र ही बढ़ सकी। परम्परागत हस्तशिल्पों और उद्योगों का विनाश तेजी से हुआ जिससे अनेक लोगों के आय के स्रोत छिन गये।

जहां तक कृषि क्षेत्र में क्रांति का प्रश्न है वह कुछ खास इलाकों तक ही सीमित रही। देश के अनेक भागों में कृषि उत्पादन-जनसंख्या वृद्धि की दर के अनुरूप नहीं बढ़ा। दृष्टिकोण पत्र में रेखांकित किया गया है कि तमाम कोशिशों और प्रचारों के बावजूद जनसंख्या वृद्धि की दर में विशेष कमी नहीं आ सकी। इसलिए यह देखना होगा कि जनसंख्या नीति में क्या खामी रही।

दृष्टिकोण पत्र का जोर है कि आठवीं योजना में प्राथमिकताओं, प्रक्रियाओं और कार्यान्वयन के तंत्र में परिवर्तन किया जाये जिससे उपर्युक्त दोषों को दूर किया जा सके। नियोजन और विकास की प्रक्रिया में आम लोगों को शामिल करना बहुत ही आवश्यक है।

विकास की प्रक्रिया को चलाने और तेज करने के लिए संसाधनों की आवश्यकता है। तत्काल संसाधनों को जुटाना काफी कठिन काम है। देश के अन्दर बचत की कुल दर में आशानुकल वृद्धि नहीं हो सकती है। राजस्व खाते में न सिर्फ घाटा रहा है बल्कि घाटे की राशि बढ़ती जा रही है। सरल शब्दों में कहें तो सरकार अपना रोजमर्रा का खर्च भी अपनी आय में पूरा नहीं कर पा रही है। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम अपने संसाधनों का कुशलतापूर्वक इस्तेमाल नहीं कर सके हैं और न ही संसाधनों को अन्यत्र निवेश के लिए दे पाये हैं। कई उद्यम घाटे में चल रहे हैं।

संसाधनों की स्थिति कितनी गंभीर है यह इस बात से स्पष्ट है कि सातवीं योजना के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र का 16.5 प्रतिशत परिव्यय घाटे की वित्त व्यवस्था के जरिए जुटाना पड़ा जबकि आरंभ में केवल 7.8 प्रतिशत परिव्यय ही इस स्रोत के जरिए पूरा करना था।

सार्वजनिक कार्यक्रमों पर व्यय की जाने वाली रकमों का एक बड़ा भाग बिचौलिए हड़प लेते हैं। इसके साथ ही काले धन के आधार पर एक बहुत बड़ी समानान्तर अर्थव्यवस्था चल रही है जिससे संसाधनों की स्थिति कठिन होती ही है साथ ही उत्पादन का ढांचा भी विद्रुप हो जाता है तथा नियोजन का प्रभाव कम हो जाता है।

विदेशी ऋण का बोझ दुगने से भी अधिक बढ़ गया है। रियायती ऋणों का परिणाम घटता जा रहा है। व्यवसायिक बैंकों से ऋण लेने के लिए मजबूर होना पड़ रहा है। इस प्रकार के ऋण के ऊपर ब्याज की दर काफी ऊंची है और शर्तें काफी सख्त। आठवीं योजना के दौरान स्थिति को संभाला नहीं गया तो देश कर्ज के जाल में फंस सकता है। कीमतों में लगातार वृद्धि को देखते हुए, घाटे की वित्त व्यवस्था का सहारा पहले की तरह नहीं लिया जा सकता।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र ने स्वीकार किया है कि आने वाले कुछ वर्षों के दौरान विकास की प्रक्रिया, संसाधनों को जुटाने के उपायों, उत्पादन के ढांचे आदि में कोई बहुत बड़े परिवर्तन संभव नहीं हो पायेंगे। इसलिए आर्थिक प्राथमिकताओं और सरकारी व्यय ढांचे में परिवर्तन करने पर ही जोर दिया जाएगा। सरकारी व्यय की उत्पादकता को बढ़ाने पर बल रहेगा। उत्पादन और रोजगार के वर्तमान ढांचे में बदलाव लाने के लिए नये निवेशों की प्राथमिकताओं को बदला

जायेगा। इसके साथ ही विभिन्न क्षेत्रों और वर्गों के बीच आय के वितरण की असमानताओं को दूर करने के लिए प्रत्यक्ष कदम उठाये जायेंगे।

आठवीं योजना का मूल उद्देश्य आम लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करना होगा। साथ ही अर्थव्यवस्था का पूरी तरह से विकास तथा उसमें विविधता लाना और आधारभूत ढांचे को मजबूत बनाना भी योजना का लक्ष्य रहेगा। विशेष रूप से सरकार को पर्याप्त मात्रा में रोजगार के अवसर बढ़ाने तथा प्रत्येक नागरिक को एक न्यूनतम जीवन स्तर प्रदान करने की जिम्मेदारी लेनी होगी। "काम का अधिकार" नियोजन को नयी दिशा की ओर उन्मुख करने में प्रमुख भूमिका अदा करेगा। इसका मुख्य उद्देश्य पूर्ण रोजगार की रणनीति को आरम्भ करना है। इसके दो पहलू बतलाये गये हैं। पहला सरकार रोजगार की गारंटी देगी और दूसरा ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में न्यूनतम मजदूरी सुनिश्चित की जाएगी। इसके लिए यह कोशिश की जायेगी कि आर्थिक वृद्धि का इस प्रकार विस्तार हो कि उसके दायरे में सभी वर्ग और सभी क्षेत्र आ जायें और उसके परिणाम स्वरूप न सिर्फ श्रमशक्ति में होने वाली वृद्धि को बल्कि पहले से आ रहे बेरोजगारों को भी रोजगार के अवसर प्रदान किये जा सकें। इसी प्रकार अर्धबेरोजगारों को उनकी क्षमता के अनुसार पूर्णकालिक रोजगार प्रदान किये जायें।

ध्यान से देखने पर स्पष्ट हो जायेगा कि समस्या ग्रामीण विकास और ग्रामीण रोजगार की है। शहरों में दीखने वाली बेरोजगारी बहुत कुछ गांवों से भारी संख्या में लोगों के शहरों की ओर रोटी की खोज में भागने के कारण है। यदि गांवों का इस प्रकार से विकास हो कि वहां लाभकारी रोजगार के अवसर प्रचुर मात्रा में उत्पन्न हों तथा शिक्षा, स्वास्थ्य आदि की सुविधाएं दी जायें तो वहां से शहरों की ओर पलायन नहीं होगा।

दृष्टिकोण पत्र का कहना है कि इसके लिए पूंजी सघन निवेश के बदले श्रम सघन निवेश पर जोर देना होगा। ग्रामीण विकास और रोजगार की बात करते समय दृष्टिकोण पत्र ने इस बात पर जोर दिया है कि इस दिशा में प्रगति की पूर्वशर्त कृषि भूमि संबंधों को पुनर्गठित करना है। ऐसा किये बिना ग्रामीण जीवन में परिवर्तन लाने का कार्य आगे नहीं बढ़ सकता। यह वचन दिया गया है कि आठवीं योजना के दौरान भूमि संबंधी कानूनों की समीक्षा की जायेगी और उनको पूर्ण रूपेण कार्यान्वित किया जायेगा। संविधान की नौवीं अनुसूची में भूमि सुधार संबंधी कानूनों को शामिल करके उन्हें न्यायालयों के हस्तक्षेप से परे रखना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

भूमि हदबंदी कानूनों को ठीक से लागू किया जायेगा और उनके फलस्वरूप प्राप्त जमीन को गरीबों के बीच बांटा जायेगा। बांटी जाने वाली जमीन को जहां भी आवश्यक होगा, वहां खेती के योग्य बनाया जायेगा। समूह के आधार पर गरीब किसानों को खेती करने तथा उससे सम्बद्ध कार्यों में लगने के लिए प्रोत्साहित किया जायेगा। इसका उद्देश्य उनकी खेती-बाड़ी को लाभकर बनाना है।

आठवीं योजना में कुल सार्वजनिक परिव्यय का 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र पर खर्च किया जायेगा। जहां तक संभव होगा, ग्रामीण विकास संबंधी कार्यक्रमों के नियोजन और कार्यान्वयन की जिम्मेदारी स्थानीय लोगों को ही सौंप दी जायेगी। इस उद्देश्य से स्थानीय शासन के चुने हुए प्रतिनिधि संस्थानों को स्थापित किया जायेगा। गांवों और प्रखंडों में पंचायती संस्थान और जिला स्तर पर सम्बद्ध संस्थानों के मातहत आवश्यक वित्तीय संसाधन और कर्मचारी रखे जायेंगे।

कृषि के विकास पर जोर देने का यह मतलब नहीं है कि औद्योगीकरण पर ध्यान नहीं दिया जायेगा। इसके विपरीत तेज गति से औद्योगीकरण योजना का एक प्रमुख उद्देश्य बना रहेगा।

लघु उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जायेगा जिससे रोजगार के अवसर बढ़ें। सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका को कारगर बनाने की बात है जिसके जरिए सरकार निजी क्षेत्र में विकास की प्रक्रिया को प्रभावित कर सके।

परिणामत्मक दृष्टि से बचत की दर राष्ट्रीय आय वर्तमान 20.5 प्रतिशत से बढ़ाकर 22 प्रतिशत करना होगा। सरकार के खर्च में अनुशासन रखना होगा। गैर विकास व्यय को यथासंभव कम किया जायेगा। यदि यह सब हो और देश के बाहर से प्राप्त संसाधन राष्ट्रीय आय का 1.5 प्रतिशत हो तो आठवीं योजना के दौरान विकास की दर को 5.5 प्रतिशत प्रति वर्ष किया जा सकता है।

एम-112, साकेत,
नई दिल्ली-110017

●●●●●

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कायाकल्प का सार्थक प्रयास

एन. श्रीधरन

भारत सरकार ने कुछ समय पूर्व आठवीं पंचवर्षीय योजना (1990-95) का दृष्टिकोण पत्र जारी किया। इसका उद्देश्य अनेक उपायों से समाज में बदलाव लाना है। पिछली योजना में इन उपायों पर ध्यान नहीं दिया गया था। पहली बार मात्र लक्ष्य निर्धारण की बजाय योजनाओं के वास्तविक क्रियान्वयन पर जोर दिया गया है। आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र की जो दिशा है उससे नियोजन प्रक्रिया के उद्देश्यों, प्राथमिकताओं तथा तरीकों पर दूरगामी प्रभाव होंगे।

प्रमुख उद्देश्य

प्रारंभ से ही भारत की पंचवर्षीय योजनाओं का उद्देश्य तेज वृद्धि दर तथा आय के समतापूर्ण वितरण द्वारा लोगों का जीवन स्तर सुधारना रहा है। तेंदुलकर ने कहा है "समानता और जीवन-स्तर में सुधार की योजना-नीतियों को मोटे तौर से तीन चरणों में बांटा जा सकता है। पहले चरण में मुख्य जोर बुनियादी ढांचे में सुधार तथा भारी उद्योगों के जरिए वृद्धि पर जोर दिया गया। उम्मीद यह की गयी थी कि तेज वृद्धि से अपने आप ही समता और आत्म-निर्भरता आ जाएगी।" दूसरे चरण में एक नयी धारणा 'गरीबी निवारण' जोड़ी गयी और सीधे लक्ष्य केन्द्रित कार्यक्रम शुरू किये गये। यह धारणा इसलिए जोड़ी गयी कि विशेषज्ञ इस बात पर एक मत थे कि पिछली योजनाओं से हुए विकास के लाभ समाज के कम आय वाले और कमजोर वर्गों तक समुचित रूप से नहीं पहुंच पाये। तीसरे चरण में छठी योजना के प्रारंभ से यह महसूस किया गया कि केवल वृद्धि या समता और गरीबी निवारण कार्यक्रम कारगर नहीं होंगे बल्कि इनका समुचित समन्वय जरूरी है। पिछले चरणों से होते हुए हम इस नये चरण तक पहुंचे जिसमें मुख्य जोर रोजगार और जीवन की बेहतरी पर दिया गया। आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि वृद्धी ऐसी हो कि उससे हर एक को जल्दी से जल्दी समुचित काम, जीने का उचित न्यूनतम स्तर और सामाजिक सुविधाएं मिलें। इस बात पर भी बल दिया गया है कि विकास के लाभ उन क्षेत्रों तक भी पहुंचें जहां वे अब तक नहीं पहुंच पाये हैं।

आय, रोजगार यहां तक कि बुनियादी उपभोक्ता वस्तुओं की उपलब्धता के मामले में भी गांवों और शहरों के बीच बढ़ते अंतर को देखते हुए दृष्टिकोण पत्र में दिशा पुर्ननिर्धारित की गयी है और पहली बार ग्रामीण विकास को बिल्कुल नये तरीके से प्राथमिकता दी गयी है। दृष्टिकोण पत्र में समस्याओं के समाधान के लिए समन्वित तरीका अपनाया गया है, जो पिछली योजनाओं में नहीं अपनाया गया था। इस समन्वित दृष्टिकोण से यह स्पष्ट होता है कि गांवों के लोगों को शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन और अन्य आवश्यक सेवाओं में बहुत कम हिस्सा मिला है। यह भी महसूस किया गया है कि गांवों में आमूल बदलाव लाने के लिए कृषि संबंधों को नया स्वरूप दिया जाना चाहिए। भूमि सुधार कानूनों को संविधान की नौंवी सूची में शामिल किया जाना सही दिशा में उठाया गया कदम है लेकिन इसी दिशा में सावधानी के साथ और बहुत कुछ किया जाना और सफलता का समय-समय पर आकलन जरूरी है। कृषि संबंधों में बदलाव लाने के लिए मात्र राजनीतिक इच्छा-शक्ति पर्याप्त नहीं है, बल्कि सार्थक परिणाम पाने के लिए व्यक्तिगत इच्छा शक्ति के साथ-साथ सामुदायिक भागीदारी भी जरूरी है।

कुल निवेश का 50 प्रतिशत तक हिस्सा ग्रामीण विकास पर लगाने की बात कही गयी है। केवल कृषि तथा सिंचाई के लिए ही पैसा खर्च किये जाने का उद्देश्य नहीं है, बल्कि गांवों की समूची अर्थव्यवस्था तथा बुनियादी ढांचे के विकास के लिए धन लगाए जाने का लक्ष्य रखा गया है ताकि विभिन्न आदानों (इनपुट्स) का बेहतर वितरण हो सके और ग्रामीण उत्पादों की बिक्री व्यवस्था में सुधार हो सके। ग्रामीण क्षेत्र के अंतर्गत वर्तमान विषमताओं को देखते हुए दृष्टिकोण पत्र में ग्रामीण क्षेत्र में तथा गांवों और शहरों के बीच असमानताओं को और बढ़ने से रोकने पर बल दिया गया है। इसी तरह निर्धन तथा विकास से अछूते क्षेत्रों को धन तथा तकनीकी सहायता में प्राथमिकता देना भी स्वागत-योग्य कदम है।

दृष्टिकोण पत्र की एक महत्वपूर्ण विशेषता विकेन्द्रीकरण प्रक्रिया और समन्वित क्षेत्र योजना है। पिछली योजनाओं में भी

यह बात काफी कही गयी पर अमल में ज्यादा नहीं लायी गयी। अब हमें देखना है अलग-अलग योजनाओं पर ध्यान देने के स्थान पर समन्वित क्षेत्र दृष्टिकोण कैसे लाया जाता है। योजना बनाने तथा लागू करने की जिम्मेदारी निर्वाचित प्रतिनिधियों को सौंपने की नीति भी तभी सफल होगी, जब इन प्रतिनिधियों के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण की व्यवस्था होगी। खंड तथा जिला स्तर पर प्रशिक्षण की व्यवस्था को विकेन्द्रित करने से स्थानीय स्तर पर प्रबन्ध क्षमता सुधरेगी। स्थानीय प्रतिनिधियों का चुनाव भी राजनीतिक नहीं बल्कि गैर-पार्टी आधार पर होना चाहिए। इससे प्रशासन के सबसे निचले स्तर पर राजनीतिक पक्षपात समाप्त हो सकेगा। गांवों की महिलाओं को प्राथमिकताओं के निर्धारण में साझीदारी बनाना अच्छा कदम है पर गांवों के वर्तमान सामाजिक ढांचे में क्या महिलाएं यह चुनौती स्वीकार कर सकेंगी और सामाजिक परिवर्तन में अग्रणी भूमिका निभा सकेंगी। यह आगे देखा जाना है।

आठवीं योजना में गांवों तथा नगरों के संबंध निर्धारित करने के लिए बनी समिति (आठ के दशक के मध्य में यह समिति बनी थी) की सिफारिशों को लागू करने की बात कही गयी है। पहली बार गांवों तथा शहरों के बीच बुनियादी ढांचे तथा आर्थिक संपर्कों के आधार पर निश्चित साझीदारी जैसी बात कही गयी है और गांवों के स्तर तक आर्थिक विविधता लाने पर जोर दिया गया है। पहली योजना के प्रारंभ में भी यह बात कही गयी थी पर लागू नहीं की जा सकी थी। गांव तथा शहर के बीच संपर्क और निरंतरता की बात सुनने में अच्छी लगती है पर यह कैसे अमल में लायी जा सकेगी, यह आने वाला समय ही बताएगा।

गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका

छठी योजना के प्रारंभ से ग्रामीण विकास में स्वयंसेवी संस्थाओं (गैर-सरकारी संगठनों) की भूमिका को मान्यता दी जाने लगी है। लेकिन पैसा देने वाली वित्तीय संस्थाएं इन्हें अप्रभावी तथा अव्यावहारिक ही मानती हैं। सबसे निचले स्तर पर इन संगठनों को सक्रिय बनाने में कई बाधाएं खास तौर से वित्तीय बाधाएं दूर करनी जरूरी हैं। कई बार इन संगठनों को महीनों, यहां तक कि सालों तक वित्तीय सहायता नहीं मिल पाती। इन संगठनों में दलाल भी हैं जो इनको मिलने वाले धन का काफी हिस्सा हड़प जाते हैं। पैसा देने वाली एजेंसियों और गैर-सरकारी संगठनों को एक उच्च स्तरीय समिति के प्रति जवाब देह बनाया जाना चाहिए जो ग्रामीण विकास मंत्री की अध्यक्षता में गठित हो या ऐसी ही कोई और केन्द्रीय समिति बनायी जाए। संसाधनों के हस्तांतरण में पिछड़े क्षेत्रों/जिलों को प्राथमिकता देना और सामाजिक विकास संबंधी आंकड़ों में गरीबी और बेरोजगारी को उचित महत्व देने की बात अच्छी है। साथ ही इससे यह बात भी साबित होती है कि केन्द्र तथा राज्यों के बीच धन के वितरण की व्यवस्था बदलनी जरूरी है ताकि सबसे निचले स्तर तक संसाधनों का वितरण हो सके।

कृषि के बारे में दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि ग्रामीण विकास कार्यक्रम को नया रूप देने से कृषि का ज्यादा संतुलित विकास हो सकेगा। योजना बनाने में समान जलवायु वाले कृषि क्षेत्रों की धारणा के उपयोग से क्षेत्रीय असामानताएं काफी कम हो सकेंगी। व्यवसायिक बैंकों द्वारा सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण (सर्विस एरिया एप्रोच) अपनाये जाने के साथ-साथ आठवीं योजना में समन्वित क्षेत्रीय विकास की जिस नीति की बात कही गयी है, उससे ऋणों का उचित उपयोग हो सकेगा तथा भुगतान की स्थिति में भी काफी सुधार आएगा। आठवीं योजना में कुछ चुने हुए क्षेत्रों में सामूहिक ऋण योजनाएं चलाने के प्रयास भी किये जा सकते हैं, जैसा बांग्ला देश के ग्रामीण बैंक कर रहे हैं। स्थानीय स्तर पर फालतू खर्च कम करने और धन का उचित वितरण करने के लिए दृष्टिकोण पत्र में "सामाजिक लेखा-परीक्षण" (सोशिल आडिट) की बात कही गयी है। इसकी सफलता आम लोगों के सहयोग पर निर्भर करेगी।

ग्रामीण महिलाओं के लिए अधिकतम संसाधन

विभिन्न क्षेत्रों के आधार पर विकेन्द्रीकृत योजना और स्थानीय शिल्पों तथा संसाधनों के विकास में महिलाओं की विशेष भूमिका है। दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है, "ग्रामीण महिलाओं को उत्पादक तथा रचनात्मक क्षमताओं के विकास के लिए अधिक से अधिक संसाधन मुहैया कराये जाएंगे ताकि महिलाएं हमारे समाज के सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन में बराबर की भागीदार बन सकें।" यह कथन स्वागत योग्य है और इसके साथ ही बकाया जमीन को गरीब परिवारों की केवल महिला सदस्यों के ही नाम करने से महिलाओं का आर्थिक स्तर सुधारने की दिशा में महत्वपूर्ण काम होगा। देश के दो तिहाई के करीब बंधुआ मजदूर अनुसूचित जातियों के हैं और अमानवीय स्थिति में जी रहे हैं। दृष्टिकोण पत्र में इन लोगों के लिए अनेक आर्थिक कार्यक्रम चलाने की बात कही गयी है जैसे सिंचाई के कुएं खुदवाना, गहन खेती की व्यवस्था तथा इन लोगों के लिए शिल्प-कौशल में सुधार आदि। अनुसूचित जनजातियों के लिए विकास योजना में सामाजिक सेवाएं मुहैया कराना, वैज्ञानिक तरीके से संसाधनों के संरक्षण में मदद देना, फसल के लिए पानी जुटाने की छोटी-छोटी परियोजनाएं चलाना, वनोत्पादों पर आदिवासियों के पारंपरिक अधिकार उन्हें दिलाना और उनके पारंपरिक सामुदायिक संगठनों को मजबूत बनाना जैसे उपायों का प्रावधान किया गया है।

शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सामाजिक सेवाओं के महत्व को देखते हुए दृष्टिकोण पत्र में इन क्षेत्रों के कुछ बुनियादी मुद्दों को सुलझाने का संकल्प लिया गया है। उदाहरण के लिए योजना में सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य रखा गया है और यह लक्ष्य मात्र सफेदपोशों की संख्या बढ़ाने का नहीं है बल्कि तकनीकी तथा व्यावसायिक पक्षों पर ज्यादा जोर दिया गया है। गांवों के जल स्रोतों के उचित संरक्षण और पोषण तथा स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार और सुधार की योजनाएं भी स्वागत योग्य हैं।

विज्ञान और टेक्नोलाजी की भूमिका

दृष्टिकोण-पत्र में विज्ञान और टेक्नोलाजी की भूमिका की सावधानी से विस्तृत समीक्षा की गयी है। दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि टेक्नोलाजी को योजना के हर क्षेत्र में एक अंग के रूप में मूल रूप से शामिल किया जाएगा। गांवों के लिए जिला स्तर पर विज्ञान और टेक्नोलाजी परिषदें बनाये जाने की बात कही गयी है। इन परिषदों में निम्न बातों पर मुख्य रूप से जोर दिया जाएगा : (क) स्थानीय प्रकृति की समस्याओं के समाधान के लिए अनुसंधान और विकास (ख) स्थानीय जरूरतों के अनुरूप टेक्नोलाजी अपनाना और शोध संस्थानों में ऐसी टेक्नोलाजी उपलब्ध कराना (ग) निर्देशन केन्द्रों के जरिए इन टेक्नोलाजी का प्रदर्शन (घ) इन टेक्नोलाजी के इस्तेमाल और इनमें सुधार लाने के लिए प्रशिक्षण देना। दुर्भाग्य से गैर-सरकारी और स्वयंसेवी संगठनों की इस क्षेत्र में भूमिका को दृष्टिकोण पत्र में उचित महत्व नहीं दिया गया है। संभवतः इसके पीछे यह विचार रहा होगा कि स्थानीय स्वायत्तशासी संस्थाएं गैर-सरकारी संगठनों की तुलना में बेहतर तरीके से वैज्ञानिक जानकारी दे सकेंगी। दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि वनों का संरक्षण और बायोमास संसाधनों के विकास से ग्रामीण क्षेत्रों की पर्यावरण प्रबन्ध में आम लोगों की भागीदारी की बात कही गयी है, लेकिन इसमें वैकल्पिक संसाधनों, खास तौर से ऊर्जा संसाधनों के विकास के बारे में कुछ नहीं कहा गया है जिन पर गांवों के लोग निर्भर करते हैं।

यह जनता की योजना है

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि योजना आर्थिक अनुमानों का खेल भर नहीं है बल्कि व्यापक बेरोजगारी, गरीबी तथा सामाजिक तथा आर्थिक असमानताओं से जुड़ी समस्याओं को सुलझाने का प्रयास है। महत्वपूर्ण यह नहीं है कि अगले दशक में रोजगार दिलाने में तीन प्रतिशत वार्षिक और सकल घरेलू उत्पाद में 5.5 प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि का लक्ष्य प्राप्त होगा या नहीं बल्कि जरूरी यह है कि प्रस्तावित योजना नीति सफल होगी या नहीं। निश्चय ही पुनर्गठित योजना आयोग के दृष्टिकोण पत्र में एकदम नयापन है और योजनाकारों की नहीं, जनता की योजना बनाने का प्रयास किया गया है। धन के आबंटन की जो नीति बनायी गयी है, उसे सही तरीके से लागू करने पर निश्चय ही गांवों के लोगों को रोजगार के पर्याप्त अवसर, अच्छा जीवन-स्तर और बेहतर जिंदगी मिल सकेगी और इस तरह ग्रामीण समाज में आमूल परिवर्तन हो सकेगा।

अनुवाद : सीमा भट्ट,
98 पी, सेक्टर 4,
पुष्प विहार,
नई दिल्ली-17

लेखकों के लिए

रचना और अन्य प्रकाशनार्थ सामग्री भेजने वालों से अनुरोध है कि रचना भेजते समय वे कृपया इन बातों का ध्यान रखें:—

रचना संक्षिप्त एवं उसकी प्रस्तुति रोचक होनी चाहिए। इसमें उपलब्ध करायी गयी जानकारी अप्रकाशित और प्रमाणित होनी चाहिए।

रचना दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप की हुई हो जो सात-आठ पृष्ठों से अधिक की नहीं होनी चाहिए। विषय प्रतिपादन में उपशीर्षकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

रचना के साथ ब्लैक एंड व्हाइट फोटो भी आमंत्रित हैं।

ग्रामीण विकास के लिए वांछित तैयारी

ईश्वर लाल पं. वैश्य

आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए नई राष्ट्रीय मोर्चा सरकार की नीतियों के अनुरूप नया दृष्टिकोण पत्र (अप्रोच पेपर) लोकसभा के बाद राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा भी स्वीकार किया जा चुका है। अब तदनुसार आठवीं योजना तैयार की जानी है। दृष्टिकोण पत्र की प्रस्तावना में कहा गया है–'आयोजना के चार दशकों के बाद भी पूर्ण रोजगार और प्रत्येक के लिए जीवन-यापन के साधारण न्यूनतम स्तर को सुनिश्चित करने के कार्य को पूरा नहीं किया जा सका है। इन मूल कार्यों को पूरा कर लेना नब्बे के दशक में विकास कार्यनीति का मुख्य विषय होगा।' इस उद्देश्य से प्रेरित होकर सम्पूर्ण योजना के पचास प्रतिशत साधन ग्रामीण विकास तथा गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों पर खर्च किए जाने हैं। वस्तुतः ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन आपस में अन्योन्याश्रित विषय हैं क्योंकि विकास के परिणामस्वरूप गरीबी का उन्मूलन क्रमशः लेकिन निश्चित ही होगा। शहरों में दिखने वाली गरीबी में भी अधिकांशतः तो गांवों से पलायन कर रोजगार की तलाश में शहरों में आने वाले लोग हैं और इस शहरी समस्या का समाधान ग्रामीण क्षेत्रों में लाभप्रद रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करने से हो जाएगा।

हमारे गांवों का मुख्य धन्धा एवं जीविकोपार्जन का साधन कृषि है। कृषि का मुख्य आधार भूमि है और उसके विकास के लिए राज्य की भू-प्रबंध व्यवस्था मुख्यतः जिम्मेदार है। अतः किसी भी आयोजन के पहले हमारा ध्यान उस ओर जाना चाहिए।

आजादी के तत्काल बाद जब सर्वोच्च न्यायालय ने केन्द्र-सरकार के भूमि-सुधार सम्बन्धी कानूनों को असंवैधानिक घोषित कर दिया था तब संविधान में प्रथम संशोधन पेश करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने लोकसभा में कहा था–"भू-क्रांति राष्ट्रीय कांग्रेस का एक वायदा था। हम सौ फीसदी उस वायदे को पूरा करने के लिए वचनबद्ध हैं और कोई कानूनी या संवैधानिक अड़चनें इस विषय में हमारा मार्ग नहीं रोक सकती। यह सभी को स्पष्ट हो जाना चाहिए।" उसी प्रकार 10 सितम्बर 1953 को देशी राज्यों की परिषद को उन्होंने लिखा था–"कोई भी सरकार सिर्फ भूदान-आन्दोलन के भरोसे भूमि-सुधार कार्यक्रम के प्रति अपनी जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकती।" इस प्रकार असंदिग्ध शब्दों में पंडित नेहरू ने हमारे देश में भू-प्रबंध संशोधन की अनिवार्यता और उसमें तेजी लाने की आवश्यकता को आजादी के प्रारम्भिक वर्षों में ही दी थी।

अब से लगभग चालीस वर्ष गुजर चुके हैं और इस दौरान देश में सात पंचवर्षीय योजनाएं भी क्रियान्वित की जा चुकी हैं। लेकिन 1985में आलसोल्स कालेज, आक्सफोर्ड में राधाकृष्णन-स्मारक व्याख्यान माला में बोलते हुए हमारे तत्कालीन प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार कौंसिल के अध्यक्ष प्रो. सुखमय चक्रवर्ती ने कहा था–"यद्यपि भारत में भूमि सुधारों को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है, लेकिन व्यवहार में इस प्रश्न को प्रायः टाला जाता रहा है। और वे नहीं मानते कि भूमि वितरण सम्बन्धी कोई बड़ा कार्यक्रम इस समय सरकार के सामने है।" प्रो. चक्रवर्ती ने भूमि-सुधार हेतु पचास के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में भी जब समय अनुकूल था, सरकार की इस विषय उदासीनता और असफलताओं को स्वीकार किया था।

योजना आयोग द्वारा ग्रामीण सुधारों के लिए नियुक्त कार्यकारी दल ने 1973 में स्पष्ट कहा था कि भूमि-सुधारों के क्षेत्र में हमारे देश में नीति एवं कानून तथा कानून एवं उसकी क्रियान्विति के बीच सार्वजनिक क्षेत्र के सिद्धांत एवं व्यवहार के बीच तथा घोषणाओं एवं उनके आचरण के बीच के फर्क ने हमारे राजनीतिक संकल्प की कमजोरी को स्पष्टतः उजागर कर दिया है। अन्य रिपोर्ट में आगे यह भी कहा गया है कि–"स्पष्ट निर्णय और असन्दिग्ध राजनीतिक संकल्प द्वारा अन्य सभी कठिनाइयों से निपटा जा सकता था। लेकिन ऐसे संकल्प के अभाव में छोटी-छोटी कठिनाइयां भी पर्वत जैसी बड़ी लगने लगी।"

अधिक पीछे क्यों जाएं? राष्ट्रीय मोर्चा सरकार आने के कुछ ही दिनों पहले राजीव सरकार के जमाने में तैयार किए गए आठवीं पंचवर्षीय योजना हेतु योजना आयोग द्वारा भूमि सुधार सम्बन्धी प्रस्तावित प्रपत्र में समस्याओं का सिर्फ औपचारिक उल्लेख ही किया गया था। नए सुझावों की बात तो दूर रही। इसमें राज्य सरकारों की भूमि परिसीमन-कानून के क्रियान्वित करने एवं भूमि के न्यायिक वितरण में प्राप्त असफलताओं के कारणों पर ही न तो प्रकाश डाला गया था और न ही उनकी रचनात्मक आलोचना को लेकर उसकी कोई चर्चा ही की गई थी। उसमें सिर्फ कुछ सैद्धांतिक वास्तविकताओं का उल्लेख ही किया गया था। सिर्फ पुरानी बातों को पुनः नए शब्दों में रख

दिया गया था। जो होना चाहिए—उसका उल्लेख था। लेकिन क्या और कैसे किया जाएगा इसकी कोई योजना उसमें नहीं थी। कोई ठोस कार्यक्रम प्रस्तावित नहीं किया गया था।

कृषि जगत की एक जानी मानी हस्ती और कभी योजना आयोग के सदस्य रहे श्री त्रिलोक सिंह ने लगभग साल भर पहले ही कहा था—"भूमि सुधारों विषयक विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा पारित कानूनों के क्रियान्वीकरण में अभी तक प्राप्त असफलता भारत की राजनीति एवं आर्थिक प्रणाली के विरुद्ध एक भयंकर कलंक है और देश को इसके लिए भारी आर्थिक एवं सामाजिक कीमत चुकानी पड़ रही है।"

सरकारी आंकड़ों के अनुसार भूमि-परिसीमन कानून बनाने के बाद जून, 1987 तक सिर्फ 76.4 लाख एकड़ भूमि को अतिरिक्त (सरप्लस) घोषित किया जा सका था और उसमें से सिर्फ 59.7 लाख एकड़ भूमि का ही कब्जा लिया जा सका था और पुनर्वितरण उसमें से सिर्फ 44.1 लाख एकड़ का ही किया जा सका है। इस पुनर्वितरण में भी तीस प्रतिशत भूमि तो सिर्फ केरल एवं पश्चिम बंगाल जैसे दो छोटे—राज्यों की है। हकीकत तो यह है कि देश में 4.20 करोड़ एकड़ कृषि योग्य एवं करीब छः करोड़ एकड़ परती बंजर भूमि पुनर्वितरण के लिए प्राप्त की जा सकती थी लेकिन हमारी पंचवर्षीय योजनाओं के विवरणों में इस असफलता को छिपाने के लिए एक के बाद एक नए-नए बहाने बनाए जाते रहे। सातवीं योजना के पत्र में कहा गया था कि भूमि सुधार कार्यक्रम को किसी भी प्रकार पूर्ण हुआ नहीं माना जा सकता और यदि हम गरीबी और असमानता की समस्याओं को सुलझाना चाहते हैं, तो इस कार्यक्रम के क्रियान्वीकरण को आगे बढ़ाना होगा। लेकिन सातवीं योजना के अंत में हम पाते हैं कि भूमि सुधार के कार्यक्रम को एक प्रकार से तिलांजलि दे दी गई और उस दिशा में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ाया जा सका।

अगस्त 1989 में नई दिल्ली में आयोजित किसान एवं कृषि श्रमिक संघ की अखिल भारतीय संयोजन समिति ने एक सम्मेलन में भूमि-परिसीमन कानून के क्षीण क्रियान्वीकरण तथा बंटाई पर काम करने वाले कृषकों के अधिकारों की रक्षा तथा अतिरिक्त एवं परती भूमि को भूमिहीनों में शीघ्र वितरण के प्रश्नों को समुचित प्रचार देने एवं लोगों तथा सरकार का इस ओर ध्यान खींचने के लिए आन्दोलन चलाना तय किया था। उस सम्मेलन में इस विषय में केन्द्र सरकार की असफलता एवं उदासीनता के प्रति भी रोष प्रकट किया गया था। वे आन्दोलन की रणनीति तैयार करते तब तक तो चुनाव आ गये और सरकार भी बदल गई।

पश्चिम बंगाल सरकार ने पिछले दिनों पश्चिम बंगाल में वामपंथी मोर्चा सरकार के बारह वर्ष शीर्षक से प्रकाशित पुस्तक में विस्तारपूर्वक इस बात पर प्रकाश डाला है कि किस प्रकार केन्द्र सरकार भूमि-परिसीमन कानून के शीघ्र क्रियान्वीकरण में अड़गेबाजी और रुकावटें पैदा करती रही हैं। इसके बावजूद भी पूरे देश में पुनर्वितरित भूमि का लगभग बीस प्रतिशत हिस्सा तो अकेले पं. बंगाल का ही है। कुल मिलाकर वहां 18 लाख कृषकों को लाभ हुआ है, जिनमें से दस लाख तो अनुसूचित जातियों एवं जन-जातियों के लोग ही हैं।

संविधान में घोषित उद्देश्यों के बावजूद देश के 6 बड़े राज्यों में अभी तक हल जोतने वाले को भू-स्वामित्व के अधिकार नहीं मिले हैं। इन राज्यों में भू-परिसीमन कानून लागू करने पर भी उसमें इतने छिद्र रखे गए हैं कि वह एक प्रभावहीन और निरर्थक दस्तावेज बन कर रह गया है और भूपति अपनी संतानों के नाम पर भी भू-स्वामित्व के पट्टे बनवा लेने में कामयाब होते रहे हैं। वहां का अनुभव है कि जमींदार उन्मूलन के पश्चात कई गरीब एवं छोटे किसानों को अपनी जमीन बेच कर भूमिहीन हो जाना पड़ा है और भूमि बड़े भूपतियों के हाथों में केन्द्रित होती जा रही है। वहां की सरकारों ने भू-क्रान्ति के स्थान पर यथास्थिति को बनाए रखने के प्रति ही रुचि दिखाई।

पिछले तीस वर्षों के आंकड़े बताते हैं कि हमारे गांवों में कृषि भूमि का स्वामित्व क्रमशः कुछ बड़े भूपतियों के हाथों में केन्द्रित होता जा रहा है और भूमिहीन कृषि श्रमिकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार ही 1971 और 81 के बीच कृषि श्रमिकों की संख्या में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। लघु एवं सीमान्त कृषकों की संख्या में जो वृद्धि हो रही है, वह उनके हाथों में अधिक ज़मीन आने से या कृषकों की संख्या में वास्तविक वृद्धि के कारण नहीं बल्कि पारिवारिक बंटवारे के कारण हो रही है। 1971 और 81 के बीच एक हैक्टेयर से कम भूमि वाले कृषकों की संख्या 36 करोड़ से बढ़कर 56 करोड़ हो गई। दो हैक्टेयर से कम भूमिवाले हमारे 70 प्रतिशत कृषक कुल कृषि योग्य भूमि के सिर्फ 30 प्रतिशत के धारक हैं, लेकिन दस हैक्टेयर से अधिक भूमि के मालिक जो कुल कृषकों में सिर्फ 2.4 प्रतिशत ही है और कुल कृषि भूमि के तीस प्रतिशत पर अपना कब्जा जमाए बैठे हैं। एक तरफ भू-स्वामित्व का केन्द्रीकरण और दूसरी तरफ विकेन्द्रीकरण बढ़ रहा है, जिससे छोटे किसानों के लिए कृषि अनार्थिक व्यवसाय रह गया है।

परिणामतः कृषि और विशेषकर अनाज के उत्पादन के क्षेत्र में 1949-50 से 1964-65 के बीच विकास की जो गति 3.1 प्रतिशत चक्रवृद्धि थी वह 1967-68 से 1984-85 के बीच घट कर 2.6 प्रतिशत रह गई—यद्यपि इस दौरान अधिक उत्पादन

देने वाले बीजों, उर्वरकों, सिंचाई के साधनों आदि में काफी वृद्धि हुई थी। इसका एक मुख्य कारण यह था कि अधिक उत्पादन के ये सभी साधन केवल बड़े किसानों को ही उपलब्ध थे और छोटे किसानों की उन तक पहुंच नहीं थी। वे चाह कर भी उनका लाभ नहीं उठा सकते थे, क्योंकि ऐसा करना उनके आर्थिक सामर्थ्य के बाहर था। दूसरा मुख्य कारण यह था कि विकसित कृषि हमारे यहां सिर्फ 15 प्रतिशत भूमि पर ही होती है और शेष भूमि का उत्पादन तब तक नहीं बढ़ सकता जब तक सूखी खेती अथवा सिर्फ वर्षाधारित खेती को विकसित करने की उपयुक्त तकनीकी खोज नहीं कर ली जाती। दृष्टिकोण पत्र में (पैरा- 35) ठीक ही कहा गया है कि 'उत्पादन में अपेक्षित विस्तार वर्षा सिंचित क्षेत्रों के लिए जो देश का कृषि योग्य क्षेत्र का 70 प्रतिशत भाग है, अत्याधिक ध्यान एवं संसाधनों की व्यवस्था करने की आवश्यकता होगी ताकि उत्पादन वृद्धि की पूर्ण क्षमता प्राप्त हो सके तथा वर्षा सिंचित क्षेत्रों के लिए विशेष रूप से आर्थिक रूप से सक्षम सुधरी हुई तकनीकों के अनवरत प्रवाह को बनाए रखा जा सके।'

हमारा कृषि उत्पादन अब एक ऐसी चरम स्थिति पर पहुंच गया है जिसके आगे विनियोजना अधिक और प्रतिफल का प्रतिशत कम होता जा रहा है। अतएव अब कृषि-विकास के लिए केन्द्रीय योजना बनाने की उतनी जरूरत नहीं है जितनी विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय तौर पर अनुसंधान करने और सूखी खेती को विकसित करने की नई तकनीकें खोजने की। ऐसा प्रखण्ड अथवा जिला-स्तर पर ही हो सकता है जहां स्थानीय किसानों के अनुभवों का भी लाभ मिल सके। दृष्टिकोण पत्र के कालम 36 में वर्णित ध्यान देने योग्य मुद्दों में प्रथम मुद्दा ही यह है—"वर्षा सिंचित कृषि की दृष्टि से विभिन्न अनुसंधान कार्यक्रमों के पुनर्निधारण" की कार्यनीति विकसित करना।

कृषि को विकसित करने एवं उत्पादन बढ़ाने के लिए दृष्टिकोण पत्र में एक कार्यनीति तो तय की गई है लेकिन उसके साथ-साथ वांछित भूमि सुधार की आवश्यकता को राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने भी महसूस किया है। प्रधानमंत्री वी. पी. सिंह ने राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में दिनांक 19 जून, 90 को इसी दृष्टि से स्पष्ट कहा कि हमने भूमि सुधार सम्बन्धी सभी कानूनों को संविधान की नौवीं अनुसूची में इसीलिए लिया है कि राज्यों को अनावश्यक मुकदमें बाजी में नहीं फंसना पड़े और काम त्वरित गति से हो सके। अब यह राज्यों पर निर्भर होगा कि वे भूमि सुधारों के विषय में क्या और कितना करते हैं। आजादी के पश्चात के चालीस वर्षों में पहली बार भूमि सुधार कानूनों को इस प्रकार न्यायालयों के हस्तक्षेप के बाहर रखा गया है। अब कोई राज्य सरकार अपनी ढील-पोल के लिए न्यायालय की अडंगेबाजी का बहाना नहीं बना सकेगी। नई योजना में नागरिकों को दिया जा रहा काम का अधिकार और रोजगार वृद्धि की आवश्यकता भी त्वरित भूमि सुधारों के लिए दबाव डालेगी।

ग्रामीण विकास की पूर्व तैयारी के रूप में दूसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्दा सत्ता के विकेन्द्रीकरण का है। पिछले कुछ वर्षों से हमारा झुकाव सत्ता के केन्द्रीकरण की ओर रहा है। केन्द्र सरकार ने इतने अधिकार अपने पास जमा कर लिए थे। उधर, राज्यों ने भी यथा संभव अधिकतम अधिकार अपने पास केन्द्रित कर लिये—परिषदों और पंचायतों को निष्क्रिय और जड़ बना दिया था। दस-दस वर्षों तक पंचायतों के चुनाव ही नहीं हो पाते थे।

सिद्धान्ततः विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज व्यवस्था का समर्थन सभी करते हैं—यद्यपि उसके स्वरूप, कर्त्तव्य, अधिकार एवं कार्य पद्धति के विषय में मतभेद जरूर देखने में आते हैं। हमें विकेन्द्रीकरण सम्बन्धी एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है लेकिन वांछित परिणामों के लिए उतना ही पर्याप्त नहीं है। यहां हमें एक कठोर सत्य का सामना भी करना पड़ रहा है। गांधीजी पंचायतों के चुनावों का राजनीतिकरण करने के सख्त खिलाफ थे और ऐसा करने के लिए उनके पास ठोस कारण भी थे। लेकिन परिवर्तन परिस्थितियों में हम लोग अब अत्यन्त ही राजनीतिक हो गए हैं। अन्य कुछ हो भी कैसे सकते हैं? हमारे यहां राज्य ही सार्वभौम है और सामान्य नागरिक जीवन के हरेक क्षेत्र में गहराई तक उसका दखल है। परिणामतः हममें से हरेक—एक भूमिहीन अकुशल श्रमिक भी जिसके लिए न्यूनतम पारिश्रमिक की दर भी राज्य निर्धारित करता है। सरकार के और राजनीतिक दलों के क्रियाकलापों के प्रति अत्यन्त जागरूक और संवेदनशील होता है। ऐसी स्थिति में पंचायतों के चुनावों का भी राजनीतिकरण हो जाना अस्वाभाविक नहीं है। ऐसी स्थिति में हमें सार्वजनिक रूप से भी जो अभी सूक्ष्म रूप से होना है दलगत आधार पर ठेठ ग्राम स्तर तक जनता का राजनीतिक क्रियान्वयन हो जाने देना चाहिए। कालान्तर में इससे हममें राजनीतिक सहिष्णुता ही विकसित होगी और हम संसदीय लोकतंत्र के हाई पार्टी नियम को ठीक तरह से समझ सकेंगे। लेकिन उसके साथ ही यह भी जरूरी है कि राजनीतिक दलों में भी आन्तरिक लोकतंत्र का विकास हो और यह चुनाव आयोग की जिम्मेदारी होनी चाहिए कि उसी दल को मान्यता दे जिसमें आन्तरिक लोकतंत्र और संवैधानिक व्यवस्था हो।

लेकिन हमारी विकास योजनाओं की असफलता का कारण

इतना ही नहीं है। कुछ और भी है। हमने अंग्रेजों से एक मजबूत प्रशासकीय व्यवस्था प्राप्त की जो ठेठ नीचे पटवारी और गांव से लेकर ऊपर प्रधानमंत्री तक अपने आप में संगठित है। यह व्यवस्था एक विशेष प्रकार का प्रशासन चलाने के लिए ही गठित की गई थी लेकिन जल्दबाजी में हमने उसी का उपयोग विकास कार्य, आर्थिक समृद्धि और सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए, करने का भी तय किया, जिसके लिए वह प्रशिक्षित नहीं थी। परिणामत: जो विकास कार्य जनता की सक्रिय भागीदारी और मौलिक सूझबूझ से किए जाने थे, वे क्रियान्वीकरण के लिए इन कल्पनाहीन नौकरशाहों को सौंप दिये गए।

पंचायती राज की सफलता के लिए नीचे आयोजन और जनता की सक्रिय भागीदारी प्राप्त करने के लिए निम्नस्तर पर कुछ निर्वाचित लोगों की लोकतांत्रिक संस्थाएं गठित कर देने से ही काम नहीं चलेगा। उन्हें स्थायित्व प्रदान करने और उन्हें लोक स्वराज्य की आधारभूत संस्थाएं बनाने के नाम पर इधर-उधर के कुछ छुटपुट अधिकार दे देना भी पर्याप्त नहीं होगा।

हमारे राजनीतिक जीवन को शक्ति दे सकने वाला एक तत्व तो एक निरंतर सतत् क्रियाशील नागरिक प्रशासन का उत्तराधिकारात्मक वह सिलसिला है, जो ठेठ गांव से लेकर केन्द्र सरकार तक प्रशासन को एक समन्वित स्वरूप प्रदान करता है। लेकिन ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था के साथ ही विकास कार्यों के लिए लोकतंत्र में दो अन्य समानान्तर, लेकिन परिवर्तनशील संगठनात्मक ढांचे भी होने चाहिए।

इनमें से एक विधि-समान निर्वाचित प्रतिनिधियों का, विकेन्द्रित लोकतांत्रिक संस्थाओं का ढांचा है जो देश के नागरिकों को स्थानीय स्तर पर स्वशासन का विधि-समान अधिकार देता है। इसमें ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों, जिला परिषदों तथा नगरपालिकाओं आदि का समावेश होता है। दूसरा ढांचा राजनीतिक दलों के स्थानीय संगठनों का है। लोकतंत्र में गांव से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक सभी महत्वपूर्ण और मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों के निर्वाचित सदस्यों के संगठन होने की अपेक्षा भी रखी जाती है।

इन तीनों समानान्तर ढांचों, प्रशासन, पंचायतों और राजनीतिक दल में से हमारे देश में पहला अर्थात प्रशासन का ढांचा ही अभी पूर्णत: विकसित और कार्यरत है।

पंचायती ढांचा जो हमारे संविधान के अनुसार सहभागी लोकतंत्र का वास्तविक और मूल आधार होना चाहिए प्राय: सभी राज्यों में इस समय अस्त-व्यस्त, निष्चेष्ठ और निष्क्रिय पड़ा है। हमारी इस पंचायत व्यवस्था को वस्तुत: कोई संवैधानिक मान्यता नहीं है। वे राज्य के कानून के अन्तर्गत आती हैं। इसीलिए कोई भी सरकार अपनी सुविधा और आवश्यकता के अनुसार उनके साथ चाहे जैसा बर्ताव कर लेती है। परिणामत: वर्षों तक कई राज्यों में तो पंचायतों के चुनाव ही नहीं होते। राजनीतिक दलों की स्थिति भी इससे बेहतर नहीं है।

सहभागी लोकतंत्र तभी एक सक्रिय और जीवित संगठन बनता है, जब ये तीनों इकाइयां ठीक तरह से काम करती हों और आपस में एक-दूसरे से जुड़ी हों। स्थानीय प्रशासन तभी स्थानीय आवश्यकताओं और समस्याओं के प्रति जिम्मेदार होगा जब वह सभी स्तरों पर पंचायती व्यवस्था से भी जुड़ा हो। लेकिन पंचायती संगठनों को आदर्शात्मक आधार और नीति सम्बन्धी दिशा-निर्देश तो अपने राजनीतिक दलीय संगठनों से ही मिल सकेगा।

यहां यह एतराज उठाया जा सकता है कि पंचायती राज संगठनों का राजनीतिक दलों से गठजोड़ उसको अधिक राजनीतिक बना देगा। दूसरे राज्य स्तर पर राजनीतिक दलों के अन्दर होने का और सत्ता परिवर्तन ग्राम-स्तर पर भी अपना राजनीतिक प्रभाव डालेंगे और अस्थिरता पैदा करेंगे। हो सकता है ऐसा हो। लेकिन क्या संसदीय लोकतंत्र का आधार ही यह परिवर्तनशीलता नहीं है?

हमारा प्रशासकीय ढांचा अपरिवर्तनशील स्थायी सेवाओं के आधार पर खड़ा है। उसकी अपनी एक प्रकृति है। जनता के वोट और राजनीतिक परिवर्तन का प्रभाव उस पर नहीं होता है। इसीलिए विकास कार्यक्रमों की सफलता-असफलता के प्रति वह उदासीन वृत्ति अपना सकता है क्योंकि उससे उसका कोई लेना देना नहीं होता है। लेकिन पंचायती और दलगत ढांचों के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता। विकास कार्यक्रमों की सफलता पर ही उनका भविष्य अवलम्बित है। उनकी उपयोगिता और विश्वसनीयता जनता की नजर में उनकी नैतिक प्रभावशीलता और योग्यता पर ही आश्रित है। अतएव विकास के लिए इन दोनों ढांचों को ठीक तरह से विकसित करने की आवश्यकता है। इसके लिए उनके नियमित, निष्पक्ष और खुले चुनाव कराने की स्वस्थ परम्परा डालने की आवश्यकता है। जब तक ऐसा नहीं होगा तब तक खुली चर्चाओं, मतभेदों के प्रति सहनशीलता, स्थानीय मौलिक सूझबूझ और क्रियाशीलता के लिए पर्याप्त अवसर भी नहीं होंगे और जब तक ऐसा नहीं होगा तब तक सहभागी लोकतंत्र की जड़ें जम भी नहीं पाएंगी।

विकास कार्यक्रमों की असफलता का एक प्रमुख कारण

जनता की उनके प्रति उदासीनता और अपनत्व का अभाव भी है। राजनीतिक आधार पर पंचायतों का गठन होने पर बहुमत वाले दल के घोषणा-पत्र के अनुसार वहां विकास-कार्यक्रम लागू होंगे। अतएव उनकी सफलता-असफलता का उनके साथ सीधा सम्बंध होगा। वे उसे सफल बनाने के लिए जी-जान से प्रयत्न करेंगे। इसी प्रकार पंचायती राज व्यवस्था विकेन्द्रित विकास के लिए जन-सहयोग (कम से कम बहुमत का) पाने और नीचे से आयोजना करने का एक सफल माध्यम बना सकती है।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में ग्रामीण विकास के लिए जनता की ऐसी सहभागिता पर काफी बल दिया गया है और उसके लिए सत्ता लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को आवश्यक माना गया है। दृष्टिकोण पत्र के पैरा 118 में कहा गया है—

(क) आठवीं पंचवर्षीय योजना के पहले वर्ष के भीतर ही जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को पूरा करना।

(ख) विभागवार स्कीमों की वर्तमान प्रणाली के स्थान पर एकीकृत स्थानीय क्षेत्र आयोजना को अपना कर ग्रामीण विकास के प्रति दृष्टिकोण में एक प्रमुख परिवर्तन को स्वीकार करना।

(ग) इस प्रायोजना के लिए आवश्यक संसाधनों के साथ आयोजना तथा कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व स्थानीय प्रजातांत्रिक संस्थाओं को हस्तांतरित करने की वचनबद्धता।

पुरानी सरकार के जमाने में तैयार किए गए प्रारूप के मुकाबले नए योजना आयोग ने अपनी प्रगति के लक्ष्यों को नीचा रखकर वास्तविकता का ही परिचय दिया है। निवेश को 65 खरब से घटाकर 59 खरब, विकास-दर को छः प्रतिशत से घटाकर 5.5 प्रतिशत और घरेलू बचत वृद्धि को 23.2 प्रतिशत से घटाकर 22 प्रतिशत अनुमानित किया गया है। लेकिन ये सब बातें गौण हैं। विकास कार्यक्रम यदि सरकारी तंत्र से निकलकर जनता के हाथों में आते हैं। यदि जनता की सक्रिय भागीदारी विकास कार्यक्रमों के साथ जुड़ जाती है तो यह एक महान उपलब्धि होगी, जिसका लाभ भविष्य के आयोजनों में मिलेगा।

विधि-समान पंचायती राज के सक्रिय होने की निम्न-स्तर तक राजनीतिक दलों को भी सक्रिय होना पड़ेगा और तब राज्य-सरकार भूमि सुधार कार्यक्रमों के प्रति चाह कर भी उदासीन नहीं रह सकेगी। उन्हें एक तरफ केन्द्र सरकार और दूसरी तरफ पंचायतीराज संस्थाओं के बीच कदम से कदम मिलाकर चलना ही होगा। आठवीं योजना के लिए स्वीकृत दृष्टिकोण की यह एक महत्वपूर्ण विशेषता है।

82, कसारवाड़ा,
बांसवाड़ा (राज.) पिन-327001

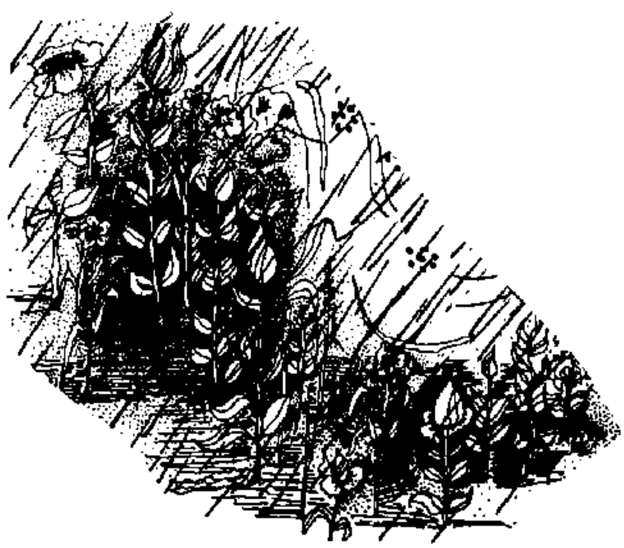

आठवीं योजना—ग्रामीण क्षेत्र में परिवर्तन की हवा लायेगी

वेद प्रकाश अरोड़ा

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में उल्लिखित मुख्य उद्देश्यों में लाभकारी रोजगारों को तेजी से बढ़ाना, संतुलित क्षेत्रीय विकास करना, उत्पादकता में सुधार लाना, विकेन्द्रीकरण, कमजोर वर्गों का कल्याण, उपयुक्त टैक्नोलाजी को अद्यतन बनाना और ग्रामीण उत्पादों के बाजार की कारगर व्यवस्था करना शामिल है। ग्रामीण अर्थतंत्र के विभिन्न अंग इन उद्देश्यों को पूरा करने में बहुत सहायक हैं। चाहे हम देहात के मूल व्यवसाय खेती और कृषि उत्पादों को लें, चाहे कृषि आधारित उद्योगों को और चाहे खादी, ग्राम एवं लघु उद्योगों को लें, चाहे हथकरघा एवं नारियल जटा उद्योग को और चाहे खाद्य संसाधन के किसी बड़े उद्योग को लें, सभी गांवों के रूप-स्वरूप में नया रंग, नया निखार भरने और उसके विकास में नए आयाम जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे शहरों के साथ गांवों के विकास का समुचित संतुलन पैदा करने, विकेन्द्रीकरण, देहाती क्षेत्रों में रोजगार के नए-नए अवसर जुटाकर शहरों की तरफ पलायन रोकने का काम करते हैं तथा पिछड़े कमजोर वर्गों की आर्थिक दशा सुधार कर जिंदगी को जीने लायक बना देते हैं।

देश की 75 प्रतिशत यानी तीन चौथाई जनसंख्या गांवों में रहती है, उसकी अनदेखी करना या उसका और उसके लिए संसाधनों का समुचित विकास न करना, देश को पिछड़ा बनाए रखना तथा 21वीं सदी की दौड़ में फिसड्डी बनाए रखना है। आज भी देहाती इलाके में प्रति व्यक्ति आय और खपत शहरी इलाकों के मुकाबले कहीं कम है। ऐसी ही शोचनीय स्थिति शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन और दूसरी आवश्यक सेवाओं की है। अगर ये विषमताएं कहीं रुकने का नाम ले लें तो भी गनीमत है। लेकिन यह खाई दिन-दिन बढ़ती जा रही है।

मूल प्रश्न है ग्रामीण अर्थतंत्र के इन विभिन्न क्षेत्रों को मजबूत बनाने, इन्हें समुचित प्रोत्साहन देने तथा इनके विकास के लिए अनुकूल वातावरण पैदा करने की और इन सबसे बढ़कर आवश्यकता है राजनीतिक संकल्प की। गांवों की दशा सुधारने की अपनी इस प्रतिबद्धता और राजनीतिक संकल्प को सत्तारूढ़ राष्ट्रीय मोर्चे ने अपने घोषणा पत्र में, फिर देश की बागडोर सम्भालने के बाद विज्ञापित अपनी कार्य योजना में, इस वर्ष के वार्षिक बजट में और अब आठवीं योजना के प्रारूप में अभिव्यक्त किया है। राष्ट्रीय विकास परिषद ने गत 18 और 19 जून को अपनी नई दिल्ली बैठकों में नौवें वित्त आयोग की आर्थिक सिफारिशों पर और ऋण माफी में केन्द्र और राज्यों की जिम्मेदारी पर मतभेदों के बावजूद आठवीं योजना के विभिन्न मुद्दों जैसे विकेन्द्रीकरण, रोजगार, जनसंख्या नियंत्रण, मानव संसाधन विकास, ऊर्जा संरक्षण और वित्तीय अनुशासन पर विस्तार से विचार कर इनके बारे में आधार पत्र को व्यापक सहमति प्रदान की। अब योजना को विकेन्द्रित आधार पर ब्यौरेवार तथा विस्तार से तैयार किया जायेगा। योजना आयोग के उपाध्यक्ष ने सभी मुख्यमंत्रियों को याद दिलाया कि आठवीं योजना की अवधि में उन्होंने अपने-अपने राज्य में कम से कम एक जिले में बेरोजगारी और अशिक्षा को बिल्कुल मिटा देने का संकल्प किया है। हो सकता है इस काम में धन का अभाव आड़े आए। कुछ क्षेत्रों में सुझाया गया है कि इसके लिए स्काटलैंड के हेमिल्टन जिले का परीक्षण आजमाया जा सकता है और बुनियादी सुविधाएं जुटाने के लिए निजी क्षेत्र का सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। भारतीय व्यापार-वाणिज्य महासंघ-फिक्की ने तो गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम में हाथ बटाने का प्रस्ताव भी किया है।

प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने भी कहा कि आठवीं योजना का मुख्य उद्देश्य बेरोजगारी दूर करना है, क्योंकि अगर ऐसा न किया गया तो हमारे बेरोजगार युवक अत्यंत विस्फोटक स्थिति पैदा कर सकते हैं। हमें आठवीं योजना की अवधि में मानव शक्ति के भरपूर उपयोग पर विचार करना है। इसलिए आठवीं योजना के इस केन्द्रीय बिन्दु यानि रोजगार में इस दशक के दौरान तीन प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है। यह वृद्धि सबको काम का अधिकार देने की गारंटी में

बहुत सहायक होगी। इसी संदर्भ में योजना आयोग की कार्य योजना में चार प्रमुख तत्वों को उजागर किया गया है, जैसे 50 प्रतिशत सार्वजनिक पूंजी देहाती क्षेत्रों में लगाना, अधिक गरीबी और बेरोजगारी की मनहूस छाया से त्रस्त क्षेत्रों में अधिक पूंजी निवेश करना, स्थानीय क्षेत्रीय आयोजना तैयार करना, तथा कृषि, उद्योगों, कृषि इतर आर्थिक क्षेत्रों जैसे डेयरी, हस्तशिल्प, फलों, सब्जियों, जंगल के लघु उत्पादों और फसल की कटाई के बाद संसाधन-परिशोधन कार्यों की उत्पादकता और उत्पादन बढ़ाना।

ग्राम क्षेत्रों के लिए 50 प्रतिशत व्यय

जहां तक देहाती इलाकों की भलाई की योजनाओं के लिए खर्च की राशि बढ़ाकर 50 प्रतिशत करने का सवाल है, यह राशि न सिर्फ कृषि और सिंचाई कार्यों, ग्राम उद्योगों, ग्रामीण स्कूलों, अस्पतालों और सड़कों के निर्माण पर खर्च की जायेगी बल्कि ग्रामीण तंत्र को मजबूत बनाने के लिए आवश्यक आदानों जैसे रासायनिक खाद, डीजल तेल, और बिजली पर, तथा खेती की चीजों के वितरण और उत्पादों की बिक्री की बेहतर सुविधाएं प्रदान करने वाले बुनियादी ढांचे एवं परिवहन पर खर्च की जायेगी।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि अब ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए साधनों का उपयोग, ग्रामीण अर्थतंत्र के उत्पादक आधार को विविधता और विस्तार देने के लिए किया जायेगा। इसके अलावा मकान बनाना, शिक्षा, स्वास्थ्य, शिशु कल्याण और अन्य आवश्यक सेवाओं के लिए भी धन का उपयोग कर ग्रामीण जीवन को बहुरंगी बनाना होगा। साथ ही उत्पादकता उत्पादन और उत्पादक रोजगारों में वृद्धि कर यह देखना होगा कि अधिक से अधिक लोगों तथा अधिक से अधिक क्षेत्रों के लिए आय की पक्की पुख्ता व्यवस्था हो। प्रगति के लिहाज से ठहरे और जड़ क्षेत्रों तथा गरीबों के लिए, वित्तीय साधन और टेक्नीकल सहायता जुटाने को प्राथमिकता देनी होगी।

वर्तमान ग्रामीण कार्यक्रम

सार्वजनिक साधनों का काफी हिस्सा कई ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों पर पहले से ही खर्च किया जा रहा है। लेकिन कार्यक्रमों को टुकड़ों में बांटने से, उनके अंतर्विरोधों, परस्पर टकराहटों, एक दूसरे के क्षेत्र में अतिक्रमण से, उनको क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं और क्षमताओं के साथ न जोड़ने से, बात-बात पर केन्द्र और राज्यों के नौकरशाहों पर निर्भरता से, कार्यक्रमों का राजनीतिक संरक्षण देने के लिए प्रयोग करने से, सुविधा सम्पन्न वर्गों के पूर्व लाभ प्राप्त कर लेने से तथा इन कार्यक्रमों में अन्य अनेक त्रुटियों एवं व्यापक खामियों की वजह से, इनका प्रभाव अपेक्षित रूप से परिलक्षित नहीं हुआ। अब इन कार्यक्रमों की विकृतियों एवं विसंगतियों को दूर करने का बीड़ा उठाया गया है। यह महसूस किया गया है कि यथेष्ठ वित्तीय साधन उपलब्ध कराने के साथ-साथ विभिन्न कार्यक्रमों की परिकल्पना, आयोजना और क्रियान्वयन के तौर-तरीकों में परिवर्तन करना आवश्यक है। वर्तमान कार्यक्रमों की बहुत-सी खामियां दूर हो सकती हैं अगर आर्थिक और सामाजिक विकास कार्यक्रमों की आयोजना और क्रियान्वयन की जिम्मेदारी काफी हद तक स्थानीय निर्वाचित प्रतिनिधि संस्थाओं को सौंप दी जाए तथा वित्तीय साधनों और कर्मचारियों पर उनका ही सीधा नियंत्रण हो। ऐसी स्थिति में प्रत्येक गांव, खण्ड पंचायत और जिला-परिषद यह देखेगी कि उसे प्राप्त वित्तीय साधनों और अधिकारों का प्रयोग ज्यादा से ज्यादा स्थानीय विकास के लिए हो। इसका लाभ यह होगा कि ग्रामीण विकास कार्यक्रम, स्थानीय जरूरतों से मेल न रखने वाली उन कथित मानकीय परियोजनाओं के जाल से मुक्त हो जायेंगे, जो केन्द्रीय सरकार के दिमाग की उपज होती हैं। साथ हो परियोजनाओं के दोहरेपन और अपव्यय से भी बचा जा सकेगा। स्थानीय जनता ही यह निश्चित करेगी कि कौन-सी परियोजना पहले ली जाए और कौन-सी बाद में। योजना-कार्यों में उसके सीधे भाग लेने से इन्हें मूर्त रूप देना सरल हो जायेगा। इन परियोजनाओं के क्रियान्वयन से प्राप्त लाभ और धन का भी सही-सही प्रयोग किया जा सकेगा। इन कार्यों से रोजगार, उत्पादन और आय सभी बढ़ेंगे। स्थानीय प्रतिभाएं विकसित होंगी तथा पानी, चारे, ईंधन, रेशे, कच्चे माल जैसे संसाधनों में भी वृद्धि होगी।

पंचायती राज संस्थाएं

इसलिए पंचायती राज संस्थाओं का उन्हें पुनर्जीवित करने और समय-समय पर उनके चुनाव अनिवार्य करने का महत्त्व बढ़ गया है। लेकिन इनके सुचारु रूप से काम करने के लिए आवश्यक है कि इनके कामकाज में सरकार, नौकरशाह वाणिज्यिक और वित्तीय हित कोई हस्तक्षेप न करें। साथ ही इन निर्वाचित संस्थाओं को जनता का सही सच्चा प्रतिनिधि बनाने के लिए इनमें अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं जैसे कमजोर वर्गों के प्रतिनिधि लेने होंगे। इसके अलावा ऐसी व्यवस्था करनी होगी कि पंचायती राज संस्थाएं, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से स्वशासन की प्रभावी इकाइयां बन जाएं। इस प्रक्रिया में सबसे निचले स्तर के कार्यकर्ताओं, संगठनों और स्वयं सेवी समूहों का सहयोग और समर्थन प्राप्त करना आवश्यक है। स्थानीय स्वशासन

इकाइयों का काम असरदार हो—इसके लिए स्थानीय प्रशासन के विशेषज्ञों को भी काफी संख्या में प्रशिक्षित करना होगा। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना जैसी रोजगारपरक केंद्रीय परियोजित योजनाएं राज्यों के अधिकार क्षेत्र में रखते हुए भी यह व्यवस्था करनी होगी कि इनके लिए कार्यक्रमों के लिए निर्धारित राशि ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय कार्यों पर ही खर्च हो। बेहतर यह होगा कि राज्य पूरी राशि पंचायती राज संस्थाओं को सौंप दें। जहां ये संस्थाएं मौजूद न हों, वहां यह रकम जिला ग्रामीण विकास एजेंसी को दे दी जाए। बिना किसी शर्त के दी गई इस राशि के अलावा पंचायती राज संस्थाओं को अपने विकास-कार्यक्रमों के लिए अपने संसाधन जुटाने के अधिकार देने होंगे। जिन क्षेत्रों अथवा जिलों में गरीबों, पिछड़े व्यक्तियों और बेरोजगारों की संख्या अधिक हो, उन्हें अधिक संसाधन और समर्थन देना होगा। विकेन्द्रीकरण की इस सारी प्रक्रिया में केन्द्र अथवा राज्यों का काम मुख्य सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों और प्राथमिकताओं के निर्धारण तक सीमित रहेगा या फिर वे एक से अधिक जिलों अथवा राज्यों से जुड़ी नीतियां तैयार करेंगे तथा बड़े क्षेत्रों, जल और परिवहन की परियोजनाओं में समन्वय स्थापित करेंगे या फिर ये अनुसंधान और प्रशिक्षण कार्य अपने हाथ में रखेंगे। केन्द्र और राज्यों का काम मार्गनिर्देश करना तथा इसके लिए मोटे-मोटे सिद्धांत तय करना होगा जबकि शेष सभी कार्य विकेन्द्रित संस्थाओं को सौंप देने होंगे।

भूमि सुधार नौवीं सूची में

ग्रामीण क्षेत्रों में काम के प्रति उत्साह जगाने, खेत खलिहानों में उत्पादन बढ़ाने और कृषि आधारित उद्यमों में एक नया प्राण फूंकने के लिए कृषि संबंधों का नया ढांचा खड़ा करना आवश्यक है। इसीलिए अब कृषि भूमि के कानूनों की समीक्षा कर उन्हें नए सिरे से तैयार करने और उनके कारगर परिपालन के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। संविधान की नौवीं सूची में भूमि सुधार कानून शामिल करना इसी दिशा में एक निर्णायक कदम है। भूमि सुधारों का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इनमें पट्टेदारी, खेतों में आवासीय मकानों का निर्माण, जोतों की चकबंदी, भूमि की अधिकतम सीमा का निर्धारण आदि अन्य भूमि संबंध और फालतू जमीन का वितरण शामिल है। इस जमीन में वह जमीन भी शामिल होगी जो सरकार के पास हो। गरीबों में वितरित की गई भूमि इस ढंग से विकसित की जाएगी कि वह खेती के योग्य बन जाए और साथ ही मालिकों को सामूहिक आधार पर विभिन्न क्रियाकलाप आराम से करने के लिए बढ़ावा मिले। जहां तक जनजातियों की जमीन का प्रश्न है, उसे गैर-आदिवासियों को बेचने या उनके नाम करने की मनाही कर दी जायेगी। यह देखने में आया है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए किया गया भूमि आवंटन अधिकतर मामलों में बेनामी है। उन्हें केवल पट्टा मिला है, जमीन पर वास्तविक कब्जा पुराने जमींदारों का ही बना रहा है। इसलिए मौके पर जाकर भू-राजस्व रिकार्ड ठीक करने और इस धांधली को रोकने का महत्व बढ़ गया है। इस तरह बेईमानियां रोकने के लिए ऐसे भूमि अधिकरण बनाने की भी आवश्यकता है जिनमें अनिवार्य रूप से इन जातियों के भी प्रतिनिधि हों। कारण जिसे पीड़ा होती है, वही सही मानों में इसे दूर करने का प्रयास करता है।

बाबा साहब आम्बेडकर, शताब्दी समारोह के अंतर्गत मनाए जा रहे सामाजिक कार्य के इस वर्ष में ग्रामीण मजदूरों को न्याय दिलाना भी आवश्यक है। शहरी श्रमिकों के लिए तो अनेक कल्याण-कार्य किए जा चुके हैं लेकिन ग्रामीण खेत मजदूरों का कोई संगठन न होने के कारण उनका आज भी पहले की तरह शोषण किया जा रहा है। इन मजदूरों में अधिक संख्या में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के व्यक्ति होते हैं। इनकी रक्षा के लिए भी अब केन्द्रीय कानून बनाकर उनकी झुग्गी झोपड़ियों में खुशनुमा हवा के कुछ झोंके लाने का प्रयास किया जा रहा है।

प्रधानमंत्री ने यह भी बताया है कि आठवीं योजना के दौरान लघु उद्योगों, विशेषकर हथकरघा के लिए आरक्षित वस्तुओं को मुकदमेबाजी से बचाने के लिए उसे भी संविधान की नौवीं सूची में रखने का प्रस्ताव है। इसी तरह बीमार छोटे उद्योगों को फिर से खड़ा करने के बारे में भी मानवीय दृष्टिकोण से करना होगा और उन्हें फिर से लाभकारी बनाने के प्रयास करने होंगे। संक्षेप में कह सकते हैं कि आठवीं योजना को दृष्टिकोण पत्र के अनुसार उसके टाइटल 'सामाजिक परिवर्तन' को दस्तावेज तक सीमित न रखकर देहाती जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में मूर्त रूप देकर सामाजिक क्रांति में बदला जा सकता है। इसके लिए जरूरत है तो सुदृढ़ संकल्प शक्ति की और उसे ठोस रूप देने के व्यावहारिक उपाय करने की।

268, सत्य निकेतन, मोती बाग, नानकपुरा,
नई दिल्ली-110021

बेरोजगारी उन्मूलन के मार्फत गरीबी पर प्रहार

डा. हेमचंद जैन

किसी भी देश का आर्थिक विकास, मूलरूप में उस देश की जनशक्ति, मौलिक या प्राकृतिक साधनों और वैज्ञानिक-प्राविधिक ज्ञान के सुनियोजित एवं समन्वित विकास तथा उपयोग पर निर्भर करता है। इनमें से जनशक्ति न केवल आर्थिक विकास का एक अपरिहार्य महत्वपूर्ण तथा सक्रिय साधन है। इनमें बल्कि साध्य भी है। तकनीकी एवं वैज्ञानिक ज्ञान से युक्त जनशक्ति देश के आर्थिक विकास की गति को त्वरित करने में महती भूमिका को निभाती है, लेकिन हमारे देश में मौजूदा आबादी के भारी आकार के फलस्वरूप वार्षिक जनसंख्या वृद्धि के जोड़ के कारण जनशक्ति में वृद्धि वरदान की जगह बोझ हो गई है। देश में विगत चालीस वर्षों के नियोजन काल में प्रयत्न करके इस नीति को कार्यान्वित करने की कोशिश की गई, 'जिससे बढ़ी जनशक्ति का अधिकाधिक उपयोग पूंजी निर्माण में हो सके तथा उत्पादन की प्राविधि श्रम-गहन एवं भू-बचत पर आधारित होकर रोजगार के अवसरों में समुचित वृद्धि कर सकें।

समस्या की गंभीरता

देश में बढ़ती हुई बेरोजगारी की समस्या ने गंभीर आकार ग्रहण कर लिया है और इस समस्या की जटिलता के प्रति अब किसी भी प्रकार की चूक समस्या को विस्फोटक आयाम प्रदान कर सकती है। बेरोजगारी विशेषकर युवकों में विस्तार न केवल तनाव एवं संघर्ष को पैदा करता है, जो बाद में राजनैतिक संरचना एवं आन्तरिक-शन्ति के लिए खतरा निर्मित करता है। देश में योजना के शुरुआती वर्षों में यह समस्या न उतनी गंभीर थी और न देश की बेरोजगार जनशक्ति के द्वारा महसूस की जाती थी। आज का बेरोजगार युवक ज्यादा जागरुक और समझदार है और अपनी बेरोजगारी के लिए शासकीय कार्यक्रमों एवं नीतियों को भी उत्तरदायी समझता है।

नियोजन लक्ष्य

देश में पंचवर्षीय योजना की शुरुआत से ही, रोजगार-संवर्द्धन को भी नियोजना का एक प्रमुख लक्ष्य माना गया, परन्तु नियोजना के प्रारंभिक दो दशकों तक यह विश्वास किया जाता रहा कि तीव्र औद्योगीकरण और अर्थव्यवस्था की उच्च संवृद्धि दर की प्राप्ति से अधिक रोजगार के अवसरों का सृजन होकर बेरोजगारों को काम उपलब्ध हो सकेगा। यह दीर्घकालीन प्रक्रिया है और जिन्हें रोजगार उपलब्ध नहीं होता, उन्हें थोड़ा रुककर काम प्राप्त करने के लिए कहना न्यायोचित नहीं माना जा सकता। इस कारण से सम्पूरक किस्म के विशेष रोजगार कार्यक्रमों को लागू करना प्रारंभ से ही नियोजन का एक हिस्सा मान्य किया गया। वास्तव में भारत में पांचवीं पंचवर्षीय योजना तक विकास का केन्द्र "संवृद्धि था, न कि रोजगार के अवसरों को सृजन करना।" यद्यपि इस योजना के प्रमुख उद्देश्यों में गरीबी और बेकारी उन्मूलन को प्रधानता दी थी। वास्तव में देश में बेरोजगारी की समस्या के निराकरण के व्यवस्थित, नियोजित आधार पर नियमित शुरुआत के गंभीर प्रयास छठी पंचवर्षीय योजना से ही किए गये, जब स्वरोजगार तथा मजदूरी रोजगार कार्यक्रमों को व्यापकता प्रदान करके गरीबी-उन्मूलन से जोड़ा गया। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य था देश में बेरोजगारी में क्रमशः कमी करना। छठी योजनावधि में रोजगार के अवसरों में 5.3 प्रतिशत प्रतिवर्ष वृद्धि के परिणामस्वरूप न केवल बढ़े हुए बेरोजगारों को खपा लिया जाएगा वरन् पुराने बेरोजगारों को भी बड़ी संख्या में खपा लेने में भी सफलता की आशा की गई। सातवीं पंचवर्षीय योजना में भी रोजगार के उत्पादक अवसरों में वृद्धि को कृषि उत्पादन के साथ-साथ उत्पादकता पर जोर दिया गया। रोजगार बढ़ाने को सातवीं योजना की रीढ़ माना गया। आठवीं योजना के आधारभूत पत्र में भी योजना का लक्ष्य बेरोजगारी और गरीबी मिटाना रखा गया है। इस योजना के छह सूत्र निर्धारित किये गये: देश के संघीय ढांचे को मजबूत करना, सत्ता और शक्ति का विकेन्द्रीकरण करना, विकास में आम लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करना, ग्रामीण क्षेत्रों का विकास, आर्थिक गतिविधियों में महिलाओं की भूमिका पर जोर और रोजगार के अवसर बढ़ाना। इस योजना के दृष्टिकोण

मसौदे में अगले दशक में रोजगार में हर साल तीन प्रतिशत की वृद्धि की परिकल्पना की गई है। गरीबी की बजाय बेरोजगारी को हटाने की रणनीति अपनाने को मान्य करके यह पहली बार स्पष्ट रूप से स्वीकारा कि देश में बेकारी उन्मूलन के द्वारा ही अपने आप गरीबी भी दूर हो जायेगी। बेरोजगारी से गरीबी जनित होती है और बढ़ती है, यदि इस समस्या को काबू में नहीं रखा जाये।

योजनाएं और बेकारी

देश में पंचवर्षीय योजना अवधि के अनुसार बेरोजगारी के आकार को सारणी में दिया है।

(लाख में)

योजना	पिछले बेरोजगार	नये बेरोजगार	कुल बेरोजगार	रोजगार प्रदान किया	शेष बेरोजगार
प्रथम योजना	33	90	123	70	53
द्वितीय योजना	53	118	171	100	71
तृतीय योजना	71	170	241	145	96
चतुर्थ योजना*	136	273	409	180	229
पांचवी योजना	अन. उप	अन. उप	अन. उप	अन. उप	अन. उप.
छठी योजना**	1202	3424	4626	3428	1198
सातवीं योजना	920	3934	4854	4030	822

* चतुर्थ योजना में पिछले बेरोजगार में वर्ष 1968-69 के अंत तक के 40 लाख को भी शामिल किया गया।

** छठी योजना से बेरोजगारों की गणना पद्धति में बदलाव लाकर मानक व्यक्ति वर्ष के अनुसार बेकारी के आकार का अनुमान किया गया।

सारणी-1 से स्पष्ट है कि देश में प्रत्येक योजनाकाल में यद्यपि रोजगार संवर्द्धन के कारण काम के अवसरों में वृद्धि उत्तरोत्तर हुई है, लेकिन आबादी की वार्षिक वृद्धि दर के फलस्वरूप कार्य-शक्ति में बढ़ोत्तरी के कारण रोजगार चाहने वाले लोगों में बढ़ती रोजगार सृजन संख्या से अधिक हुई। अतएव देश की जनसंख्या में बेतहाशा वार्षिक जोड़ ही मौजूदा बेरोजगारी की जटिलता का कारण एवं परिणाम हैं। वर्ष 1951-1981 की अवधि में आबादी में 90 प्रतिशत संवृद्धि हुई जबकि रोजगार के अवसरों में 60 प्रतिशत संवृद्धि ही हो सकी। इसी प्रकार वर्ष 1972-73 से 1987-88 की अवधि में रोजगार की वार्षिक वृद्धि दर 2 प्रतिशत के आसपास रही जबकि श्रम शक्ति वृद्धि दर 2.5 प्रतिशत रही। देश में रोजगार उत्पन्न करने की प्रगति धीमी होने और रोजगार-बाजार में नये प्रवेशार्थियों के बढ़ते भार के परिणामस्वरूप समस्या का जितना इलाज किया, वह उतनी ही बढ़ती गई। बेकारी के निदान की समरनीति की दिशा उन्मुखता भी अब स्थिति की वास्तविकता पर आधारित है।

रोजगार की धीमी प्रगति

देश में रोजगार की धीमी प्रगति का विवरण सारणी-2 में दिया गया है। इस सारणी में दिये आंकड़ों से स्पष्ट है कि हाल के वर्षों में कृषि और निर्माण क्षेत्रों में रोजगार में गिरावट दर के कारण अर्थव्यवस्था में कुल रोजगार अवसरों के सृजन दर में कमी हुई।

सारणी-II

विभिन्न अवधियों में अर्थव्यवस्था के क्षेत्रों में रोजगार निर्माण की स्थिति: सृजन दर

क्र.	क्षेत्र विवरण	1972-73 से 1977-78	1977-78 से 1983-88	1983-84 से 1987-88
1.	कृषि	2.32	1.20	0.65
2.	खनन	4.68	5.85	6.16
3.	निर्माण	5.10	3.75	2.10
4.	निर्मित	1.59	7.45	13.69
5.	विद्युत, गैस, सम्पूर्ति	12.23	5.07	4.64
6.	परिवहन, संग्रहण, संचार	4.85	6.35	2.67
7.	सेवाएं	3.67	4.69	2.50
	योग रोजगार सृजन दर	2.82	2.22	1.55

सातवीं योजना एवं रोजगार

सातवीं पंचवर्षीय योजना में "संवृद्धि की समरनीति में रोजगार सृजन को पहला स्थान दिया गया। यह स्वाभाविक नीति का परिवर्तन था क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों के 80 प्रतिशत बेरोजगार लोगों में से 78 प्रतिशत लोग गरीबी से ग्रसित हैं। इस कारण से रोजगार देकर गरीबी कम करने की कोशिश की गई। सातवीं योजना के प्रारंभ में वर्ष 1984-85 में करीब 18 करोड़ 67 लाख लोगों को रोजगार मुहैया था, यह योजना के अंत में बढ़कर 22 करोड़ 70 लाख होने का अनुमान था। रोजगार लगभग 4 करोड़ लोगों को मुहैया होने का अनुमान था और योजना के अंत में बेरोजगारी की संख्या 87 लाख आंकी गई। सातवीं योजना में रोजगार के कुल अवसरों में से लगभग 1 करोड़ 80 लाख खेती क्षेत्र में तथा उद्योगों में 67 लाख लोगों को रोजगार मिलने का अंदाज था। रोजगार की वार्षिक संवृद्धि 3.99 प्रतिशत अनुमानित की गई। सारणी-III में योजना के अनुमानों को दर्शाया गया है।

सारणी-III

सातवीं योजना के दौरान क्षेत्रवार रोजगार के अवसरों का आकलन

क्र.	क्षेत्र	रोजगार मानक 1984-85	व्यक्ति वर्ष 1989-90	वृद्धि	रोजगार की वार्षिक संवृद्धि
1.	कृषि	96.108	114.092	17.984	3.49
	अ. फसल क्षेत्र	58.750	65.720	6.970	2.26
	ब. अफसल क्षेत्र	37.358	48.372	11.014	5.30
2.	खनन/उत्खनन	1.153	1.494	0.341	5.32
3.	निर्माण	26.790	33.466	6.676	4.55
4.	निर्मित	10.427	12.724	2.197	3.90
5.	विद्युत	1.031	1.498	0.467	7.78
6.	रेलवे	1.544	1.688	0.144	1.80
7.	अन्य परिवहन	9.440	11.810	2.370	4.58
8.	संचार	0.951	1.224	0.273	5.18
9.	अन्य सेवाएं	39.261	49.165	9.904	4.60
	योग	186.705	227.061	40.356	3.99

आठवीं योजना में रोजगार की स्थिति एवं नीति

सातवीं योजना के लिए प्रक्षेपित रोजगार संवृद्धि की तुलना में योजना के अंत में कितने लोगों को रोजगार वास्तव में मुहैया हो सका और कितने लोग रोजगार से वंचित रह गये का अनुमान आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में शामिल न होने से यह अंदाज लगाना मुश्किल है कि योजना की रोजगार उपलब्धि क्या रही। आठवीं योजना के आधार पत्र में भी यह स्पष्ट नहीं है कि रोजगार के नये अवसर कहां और कैसे पैदा होंगे। क्या औसत विकास दर 5.5 प्रतिशत रखने और 3 प्रतिशत वार्षिक दर से रोजगार बढ़ाने से देश में बेरोजगारी का इलाज संभव है? वास्तव में बेकारी का पूर्णतया उन्मूलन अर्थव्यवस्था की मौजूदा व्यवस्था के अंतर्गत नहीं किया जा सकता है। बेरोजगारी अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न अंग है। समस्या तब उत्पन्न होती है, जब श्रमराशि का 10 से 15 प्रतिशत बेरोजगारी से ग्रसित हो जाता है। भारत में वर्तमान में इसी के कारण समस्या गंभीर आकार में दिखाई दे रही है। योजना आयोग के अनुमान के आधार पर वर्ष 1990-95 में लगभग 6 करोड़ लोगों को रोजगार मुहैया करना होगा तथा 4 प्रतिशत वार्षिक रोजगार संवृद्धि दर से ही बेकारी की विकराल समस्या पर प्रहार करके स्थिति को नियंत्रण में लाया जा सकता है। इस संबंध में स्वरोजगार के अवसरों को संवर्द्धन ही एकमात्र एवं सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प है।

वैज्ञानिक, कृषि अर्थशास्त्र,
ज. ने. कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर-4

कहां नहीं है गांव

डा. संतोष दीक्षित

सपनीली आंखों के कोरों से
छूटता-सा हुआ कुछ
एक गांव ही था,
शहरों में मचलते अरमान लिए
पलता-सा हुआ कुछ
एक गांव ही था,

बरगद की छाती के नीचे
प्रगति की नींव खुदी थी जिस दिन
जब धुआं उठा था चिमनी से,
सुलगता-सा हुआ कुछ
एक गांव ही था,
जहां त्योहारों के आने पर
नित ढोल-मंजीरे बजते थे
जहां स्नेह की मस्ती में डूबे
नर-नारी मिल साथ थिरकते थे
जो हर मौसम में धमकता था—
वह खपरैला चौपाल;
एक गांव ही था,

जो गांधी जी का सपना था;
जहां सहकारिता को जगना था;
जहां पंचायती-राज घर करना था;
जहां अधिकारों से लड़ना था;
जहां विकास की फसल उगानी थी—
वह बंजर भूमि!
एक गांव ही था,

जहां रेणु का "हीरामन" है
जहां "रतिनाथ की चाची" है
जहां प्रेमचंद का "होरी" है
जहां पंत की "ग्राम्या" मुस्काती है
जो "राग-दरबारी" में समाया है।

वह शिवपालगंज
एक गांव ही है

दुलीघाट दीवान मोहल्ला,
पटना सिटी, पटना-800008

अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए कार्यक्रमों पर नए सिरे से बल

आठवीं योजना तैयार करते समय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लाभ के लिए बल दिए जाने वाले नए क्षेत्रों के बारे में सुझाव देने के लिए अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के कल्याण से सम्बद्ध समाजशास्त्रियों एवं कार्यकर्ताओं के एक दल की योजना आयोग के सदस्य श्री जे. डी. सेठी की अध्यक्षता में बैठक हुई। योजना आयोग द्वारा बुलाई गई इस बैठक में अनेक विषयों पर विचार किया गया और अभी तक कार्यान्वित किए गए कार्यक्रमों, योजनाओं की कुछ कमियों का पता लगाया गया।

सामान्यतः यह माना जाता था कि भूमि का मालिक होना ही किसी परिवार के सामाजिक एवं आर्थिक स्तर को निर्धारित करता है। दल ने अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों से अन्य लोगों को भूमि के हस्तांतरण पर नियंत्रण के लिए संरक्षणात्मक कानून लागू किए जाने की आवश्यकता पर बल दिया। यह भी महसूस किया गया कि अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के भूमिहीन लोगों को भूमि आबंटित की जानी चाहिए और उन्हें सिंचाई की सुविधा सहित सभी साजसामान उपलब्ध कराया जाए ताकि कृषि उनके लिए आर्थिक रूप से लाभदायक बने।

बैठक में यह सुझाव भी दिया गया कि कमजोर वर्गों की सुरक्षा के लिए केन्द्रीय प्रायोजित योजनाएं केन्द्र के पास ही रहनी चाहिए। इसका हस्तांतरण राज्यों को नहीं किया जाना चाहिए।

दल ने सहभागी विकास के विचार का स्वागत किया परन्तु अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातीय बहुलता वाले क्षेत्रों में पंचायतों को शामिल किए जाने पर अपना सन्देह व्यक्त किया। दल का यह विचार था कि अधिक पुनर्वास तभी सफल हो सकता है जब कि कमजोर लोग शैक्षिक दृष्टि से ऊपर उठें।

यह भी महसूस किया गया कि इनके लिए आठवीं योजना का आबंटन उनकी संख्या के आधार पर निर्धारित प्रतिशत से अधिक होना चाहिए जिससे उनके पिछले बाकी पड़े कार्यक्रमों को भी पूरा किया जा सके। विस्तृत योजनाओं के निर्माण में योजना आयोग को अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के राष्ट्रीय आयोग से तालमेल रखते हुए कार्य करना चाहिए।

दल ने यह भी महसूस किया कि अभी तक पिछड़े वर्गों को उनके लिए निर्धारित पूरे लाभ नहीं मिल पा रहे थे। दल ने कहा कि लाभों को दूसरे हाथों में चले जाने की रोकथाम के लिए उपाय किए जाने चाहिए। दल का विचार था कि अधिक प्रोत्साहन देकर निष्ठावान व्यक्तियों को अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के कार्यक्रम सौंपे जाने चाहिए और यदि जरूरी हो तो इसके लिए अलग से काडर का गठन किया जाना चाहिए।

सदस्यों ने गंभीरता से यह महसूस किया कि आदिवासी बहुल क्षेत्रों में, चाहे वे अधिसूचित क्षेत्र घोषित किए गए हों या नहीं, देसी शराब की दुकानें बन्द कर दी जानी चाहिए।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग द्वारा अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिए चलाए जा रहे विकास कार्यक्रमों को अनवरत आधार पर व्यापक मूल्यांकन किए जाने और उन कार्यक्रमों के बीच में ही सुधार किए जाने का सुझाव भी दिया गया। दल का विचार था कि कृषि मूल्य आयोग की भांति लघु वन उत्पादों के खरीद मूल्य निर्धारित करने के लिए भी एक मूल्य आयोग बनाया जाना चाहिए।

सदस्यों ने यह भी कहा कि अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लाभ के लिए राज्यों में कार्यरत वित्तीय एवं विकास निगमों के कामकाज की देखरेख अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के राष्ट्रीय आयोग द्वारा की जानी चाहिए। इन निगमों को लाभ पाने वाले लोगों के हितों को पूरा करने वाले कार्यक्रमों के प्रति अधिक ध्यान देना चाहिए, विशेषतया अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेषकर छोटी जोतों वाले किसानों के लिए साज-सामान/ऋण जैसी सभी सेवा मुहैया करायी जानी चाहिए।

बैठक में यह सुझाव भी रखा गया कि इन वर्गों में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने के लिए गैर-राजनीतिक स्वैच्छिक संस्थाओं को शामिल किया जाना चाहिए।

बैठक के अन्त में योजना आयोग की तरफ से यह आश्वासन दिया गया कि अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के क्षेत्र में सक्रिय समूहों और समाज के विभिन्न सक्रिय कार्यकर्त्ताओं तथा योजना आयोग के बीच विचार-विमर्श की यह प्रक्रिया सतत् आधार पर जारी रहेगी। □

आठवीं योजना : स्वप्न साकार करने की दिशा में एक और कदम

हरि विश्नोई

आज हम नियोजित विकास के लिए आठवें सोपान पर खड़े हैं। वहां से हमें अपने अतीत की उपलब्धियां तथा भविष्य की सम्भावनाएं स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही हैं। इसकी एक बड़ी वजह यह भी है कि आठवीं पंचवर्षीय योजना पिछली सातों योजनाओं के मुकाबले में कई मामलों में अलग होगी। जिस प्रकार एक भवन के निर्माण से पूर्व उसका नक्शा बना लिया जाता है और फिर उसकी बुनियाद रखी जाती है। उसी प्रकार आठवीं योजना को लागू करने से पूर्व भी पर्याप्त सोच-विचार कर लिया गया है। राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में आठवीं पंचवर्षीय योजना का दृष्टिकोण नामक जो प्रारूप रखा गया था, उसमें विशेष महत्व के आधारों को शामिल किया गया था ताकि जनता के बड़े भाग को सुख और समृद्धि के नजदीक लाया जा सके।

आठवीं योजना के लिए कृषि एवं ग्रामीण विकास, काम का अधिकार, गरीबी और बेरोजगारी, महिला-विकास, शिक्षा एवं स्वास्थ्य, जनसंख्या, विज्ञान एवं टेक्नोलाजी, पर्यावरण, उद्योग और अन्तर्राष्ट्रीय-व्यापार आदि अनेक बिन्दुओं पर दृष्टिकोण नामक दस्तावेज में संक्षिप्त टिप्पणी की गयी थी। जिसमें यह स्पष्ट होता है कि हमारी वर्तमान सरकार विकास के साथ-साथ समाज के सुखद परिवर्तन हेतु कृत संकल्प है। उद्देश्यों, प्राथमिकताओं और कारगर प्रणालियों में होने वाले प्रभावों को भलीभांति समझने की सद्इच्छा यह जाहिर करती है कि आठवीं योजना में रोजगार सृजन पर विशेष बल दिया जाएगा।

ग्रामीण विकास

अब यद्यपि हमारे देश में गांवों की स्थिति में परिवर्तन हुआ है। लेकिन अभी भी वहां शहरों की तुलना में आमदनी कम है। लेकिन इसके अतिरिक्त वहां जीवन की बुनियादी जरूरतों के हिसाब से अभी शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, संचार और बैंकिंग सुविधाएं कम हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव के लिए वहां की आवश्यकताओं के अनुरूप सम्बन्धों की पुनः संरचना करनी होगी। चाहे भू-स्वामित्व का मामला हो या भूमि सुधार का, सिंचाई का हो या भूमि विकास का, समीक्षा और पुनर्निर्माण करने की दिशा में आवश्यक कदम उठाने होंगे।

चकबन्दी, सीलिंग, बेकार पड़ी भूमि और बांटी गई भूमि का विकास, मिलजुल कर सामूहिक प्रयासों से कृषि कार्य करना और आदिवासी क्षेत्रों में भूमि का विक्रय रोकने जैसे मामले पर गौर करना महत्वपूर्ण है ताकि पिछड़े और ग्रामीण इलाकों का सर्वांगीण विकास तेजी के साथ हो सके। देहाती क्षेत्रों में रहने वालों के लिए विकास योजनाओं का परिव्यय बढ़ाने का संकल्प किया गया है। लेकिन यह सच है कि कृषि, सिंचाई और स्कूल, अस्पताल आदि के अलावा समूची ग्रामीण व्यवस्था के लिए आम जरूरत की चीजें उपलब्ध होनी जरूरी हैं। नई योजना में बदले हुए तरीकों से गांवों की तसवीर बदलेगी, खुशहाली आएगी और जन-जीवन में सुधार आएगा, ऐसी आशा की जाती है।

बेकारी और साक्षरता समाप्त होने से असंतोष और अशान्ति की काली छाया स्वतः ही दूर हो जाएगी। किन्तु निर्बल वर्ग के लोगों के जीवन स्तर में सुधार करने के लिए न्यायोचित और अनुकूल हालात पैदा करने होंगे ताकि हमारा राष्ट्र एकता, अखण्डता, शान्ति और आत्म-विश्वास की डगर पर चलता रहे। गरीबी और बेकारी दूर करने के लिए आठवीं योजना में विशेष बल दिया जाएगा।

18, 19 जून 90 को राष्ट्रीय विकास परिषद ने आठवीं योजना के आधार पत्र को मंजूरी दे दी ताकि योजना आयोग अन्तिम रूप से आठवीं योजना के आधार पर अपना मसविदा तैयार कर सके। परिषद के सदस्यों ने आठवीं योजना के बारे में खुलकर बातचीत की। इसका लाभ यह होगा कि नियोजित

विकास को पथ दिखाने वाली देश की सबसे बड़ी संस्था को निर्णय लेने में सरलता रहेगी। विकास दर और रोजगार दर के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कोई कमर नहीं छोड़ी जाएगी, ऐसे संकेत मिल रहे हैं। आर्थिक चुनौतियों का सामना करने की राह में विशाल जनसंख्या वाले भारत जैसे देश को एक-एक कदम फूंक-फूंक कर रखना होगा चूंकि विदेशी पूंजी की भूमिका में जरा-सी गड़बड़ी बहुत बड़ा नुकसान कर सकती है। अतः सहायता लेते समय ध्यान रखना होगा।

लघु उद्योगों को संरक्षण, बीमार औद्योगिक इकाइयों का पुनरुत्थान तथा आर्थिक गतिविधियों पर लगे नियंत्रण को ढीला करना बहुत आवश्यक है। संसाधनों की कमी को पूरा करने के लिए प्रधानमंत्रीजी ने इस सम्बन्ध में घोषणा भी की है। यदि बड़ी औद्योगिक इकाइयों की पूरक के रूप में लघु इकाइयों का विकास हो तो ज्यादा हितकर है। लेकिन भुगतान संतुलन की समस्या को देखते हुए सीमित साधनों में महत्वाकांक्षी लक्ष्यों को पूरा करने में निश्चय ही बेहतर नियोजन, कुशल प्रबंध और मितव्ययता का सहारा लेना होगा। साथ ही साथ राज्यों के केन्द्र के साथ अच्छे सम्बन्ध, रचनात्मक सहयोग और मजबूत आधार भी आठवीं योजना को पहले की योजनाओं से कहीं ज्यादा बेहतर बनाएंगे।

तालमेल जरूरी

आठवीं योजना में सार्वजनिक इकाइयों की समीक्षा करने के अतिरिक्त एक बड़ा कार्य यह किया जाएगा कि प्रौद्योगिक के हस्तान्तरण को प्रभावी बनाया जायेगा। निश्चय ही इससे ग्रामीण ढांचा उन्नत होगा और कृषि नीति का प्रमुख अंग बन सकेगा। बागवानी, रेशम उद्योग, मछली पालन, पशुपालन, डेयरी उद्योग तथा मुर्गी पालन आदि कामों को प्रोत्साहित किया जाएगा ताकि उन्हें और अधिक लाभप्रद बनाया जा सके। किन्तु इसके लिए कृषि-विपणन, अनुसंधान और विस्तार एवं प्रसार सेवाओं पर बल दिया जाना जरूरी है क्योंकि तेजी के साथ बढ़ते उद्योगों के साथ यदि कृषि अर्थव्यवस्था का तालमेल बनाना है तो समन्वित दृष्टिकोण अपनाना होगा। स्वागत योग्य बात यह है कि आठवीं योजना में कृषि उत्पादन को बढ़ाने के साथ-साथ पर्यावरण को भी ध्यान में रखा जायेगा क्योंकि रसायनिक उर्वरक एवं कीटनाशक दवाओं के अंधाधुंध इस्तेमाल से मिट्टी, पानी और हवा को लगातार नुकसान हो रहा है। खेती को उत्पादक और स्थायी किस्म के धंधे में बदलने के लिए सिंचाई और अन्य दूसरी सुविधाओं का प्रसार किया जायेगा।

वर्तमान दशक में रोजगार वृद्धि की दर तीन प्रतिशत रखी गई है। साथ ही दशक के अन्त तक निरक्षरता दूर करने का संकल्प भी किया गया है। लेकिन युवाओं का जो बहाव महानगरों की ओर हो रहा है उसे गांवों में रोकने के लिए भी बहुत कुछ करना होगा। सस्ते आवास, रैन बसेरे, सफाई कार्यक्रम, महिलाओं की प्रतिभा का उत्पादक इस्तेमाल और शोषण के विरुद्ध कठोर दंड जैसे उपाय किये जायेंगे जो आठवीं योजना को पिछली सात योजनाओं से अलग और अधिक उपयोगी सिद्ध करेंगे।

आठवीं योजना के दौरान सरकार ऐसे कारगर उपाय करने पर जोर देगी जिसमें सरकारी कारखानों को अपने काम-काज के प्रति जवाब देही उठानी होगी। ऐसी स्थिति में उनके सामने मुश्किल खड़ी हो जाएगी जो अर्थव्यवस्था को लगातार कमजोर कर रहे हैं और बीमार इकाइयों के रूप में घिसट रहे हैं।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में शंकाओं और आलोचनाओं के स्वर भी यदा-कदा सुनाई दिए हैं। दूसरी तरफ यह आशंका व्यक्त की जाती रही कि विकास दर में वृद्धि कर पाना कोई सरल कार्य नहीं है क्योंकि पिछली योजनाओं के अनुभव से यह बात स्पष्ट रूप से कटु अनुभव के रूप में उभर कर सामने आई है कि प्रशासनिक मामलों में फिजूल खर्ची और अकुशलता के कारण जो अव्यवस्था रही उसने हमारी विकास दर के लक्ष्य को प्राप्त करने में निरंतर अवरोध उत्पन्न किया। अतः विकास दर का लक्ष्य प्राप्त करना एक बड़ी चुनौती है।

आजादी मिलने के बाद से देश में जो कुछ हुआ, वह हमारी विकासशील योजनाओं का ही सुपरिणाम है। कृषि, उद्योग और विज्ञान की उपलब्धियों पर आज हम गर्व कर सकते हैं। स्वतंत्र भारत के इस लोकतंत्र का संचालन भी होता रहा है। फलस्वरूप भारत आज विश्व में एक ऐसा मजबूत देश है जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। उत्पादन बढ़ा है, इसके अलावा विकास के लिए अपनी सामर्थ्य पर अधिकांश पूंजी लगायी गयी है। इसलिए यह जरूरी है कि विकास का सम्पर्क और सीधा सरोकार उन लोगों से होना चाहिये जो अभी तक विकास की मुख्य धारा से दूर रहे हैं।

प्रथम पंचवर्षीय योजना से सातवीं योजना तक आते-आते प्रगति के जो सौपान हमारे देश ने पार किए हैं, उनका सही अवलोकन भी आठवीं सीढ़ी पर चढ़ने के साथ किया जाना बेहद जरूरी है। दरअसल आज विकास के अन्तर्गत सभी भौतिक प्रक्रियाओं को समाहित कर लिया गया है।

पिछली विकास योजनाओं की प्रगति के साथ जब हम विकास के ढांचे को बुनियादी तौर पर देखते हैं तो कई ऐसे सवाल उठते हैं जिन पर विशेष रूप से ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है और आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में इनमें से कई महत्वपूर्ण बातों का मद्देनजर रखा गया है। कृषि और गैर कृषि क्षेत्रों के विकास का प्रभाव यद्यपि कुछ क्षेत्रों में अधिक दिखाई देता है। लेकिन आठवीं योजना में कुल मिलाकर क्षेत्रीय असंतुलन न बढ़े इस बात के प्रयास तेज करने होंगे। इसके लिए संघीय ढांचे को मजबूत बनाने, अधिकारों का विकेन्द्रीकरण करने, जनता की भागीदारी बढ़ाने, रोजगार के अधिकाधिक अवसर तलाश करने, आर्थिक क्रियाकलापों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने तथा ग्रामीण इलाकों के विकास पर बल दिया जाना चाहिए।

सीमित संसाधन

आठवीं पंचवर्षीय योजना की सफलता के लिए योजना आयोग द्वारा 5.5 प्रतिशत विकास दर का प्रस्ताव किया गया है। अपने दृष्टिकोण पत्र में इस आशय का प्रस्ताव स्पष्ट करते हुए आयोग द्वारा कहा गया कि ग्रामीण और पिछड़े हुए इलाकों में ज्यादा निवेश किया जाएगा तथा सरकारी क्षेत्र की कार्य क्षमता बढ़ाने पर बल दिया जाएगा। रोजगार बढ़ाने के लिए प्रति वर्ष 3 प्रतिशत वृद्धि की औसत दर निर्धारित की गयी है। साथ ही यह भी संकेत मिले हैं कि गरीब वर्ग के लोगों की जरूरतों को पूरा करने के लिए अभी तक जो भी प्रयास किए गए हैं, आठवीं योजना में उनकी विसंगतियों को दूर करने के अलावा नए स्वरूप में बड़े पैमाने पर शुद्ध किया जाएगा। रोजगार के अधिकार की गारन्टी, ग्रामीण क्षेत्रों के लिए 50 प्रतिशत धन की व्यवस्था, निजी क्षेत्र की विकास में सक्रिय भागीदारी और उन पर नियंत्रण, टेक्नोलाजी की महत्ता को देखते हुए उस पर निवेश में वृद्धि करने पर भी विशेष ध्यान देना होगा।

सीमित संसाधनों को दृष्टिगत रखते हुए महत्वाकांक्षी लक्ष्यों को प्राप्त करना यद्यपि सरल कार्य नहीं है। साथ ही साथ जो विसंगतियां हमारे अर्थतंत्र में पैदा हो गयी हैं उन्हें भी दूर करना होगा। यह सच है कि हमारे देश में गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वालों की स्थिति में सुधार आया है। लेकिन साथ ही साथ यह भी आवश्यक है कि उनकी तादाद में भी कमी आए और रोजगार सृजन की दर भी आशाजनक हो। इसके लिए विकास दर के साथ रोजगार सृजन की दर का संतुलन स्थापित करना होगा। क्योंकि भारत अब एक ऐसे दौर से गुजर रहा है जहां दीर्घ अवधि तक तीव्र विकास की पर्याप्त सम्भावनाएं हैं। लेकिन विकास का तथ्य यह भी होना चाहिए कि आर्थिक विषमताओं की खाई कम होने के स्थान पर और गहरी न हों।

चिन्ताजनक पहलू यह है कि अब तक सकल घरेलू उत्पादों में कृषि क्षेत्र का योगदान उतना नहीं रहा, जितना कि होना चाहिए था। लेकिन आठवीं योजना में यह कमी दूर की जाएगी और निश्चय ही उसके उत्साहजनक परिणाम सामने आएंगे जिसका लाभ देश की गरीब जनता को मिलेगा। आठवीं योजना में औद्योगिक नीति की जो प्राथमिकताएं और मुख्य लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं उनमें उत्पादन बढ़ाने में सहायक रोजगार का तीव्र विकास और नव विकसित टेक्नोलाजी के प्रयोग जैसे मुद्दे शामिल हैं ताकि अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में टिकने के साथ-साथ उत्पादन में भी निरंतर वृद्धि सम्भव हो सके। आठवीं योजना में कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने के साथ औद्योगीकरण पर भी पूर्व की भांति बराबर ध्यान दिया जाएगा। औद्योगिक नीति में सुधार करके नौकरशाही के नियंत्रण को कम करने के प्रयासों, उत्पादन संस्थाओं को मजबूती और उद्यमिता विकास जैसे पहलुओं को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

सच तो यह है कि संरक्षण प्रवृत्ति को कम करने तथा उद्योगों में स्वस्थ स्पर्धा की भावना को प्रोत्साहित करने के उपाय किये जाने चाहिए ताकि आम उपभोक्ताओं को कम दाम में अच्छी से अच्छी क्वालिटी की वस्तुएं आसानी से मिल सकें। यह खुशी की बात है कि आठवीं योजना के प्रारम्भिक दस्तावेजों से यह बात साफ होती है कि ऐसे प्रयास किये जाएंगे तभी यह सम्भव भी हो सकेगा कि क्षेत्रीय विकास संतुलित हो। ऐसा करने के लिए लघु एवं ग्रामीण उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रौद्योगिकी विकसित करने की कोशिश की जाएगी और इस दिशा में अब तक जो कुछ हुआ है उसे भी आम आदमी तक पहुंचाया जाएगा।

उर्जा, परिवहन और पर्यावरण जैसे क्षेत्रों के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराए जाएंगे ताकि इन क्षेत्रों में कोई बाधा उत्पन्न न हो। गुणवत्ता बढ़ाने, लागत कम करने तथा ऊर्जा आदि के बेहतर इस्तेमाल के लिए अनुसंधान कार्यों पर जोर दिये जाने की जरूरत है। स्वदेशी और उन्नत प्रौद्योगिकी के साथ उत्पादन के उच्च लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उद्देश्य परक नीतियां बनाई जाएंगी। लेकिन भारतीय उद्योगों को अपने काम-काज में सुधार, प्रतिस्पर्धा से निबटने, निर्यात बढ़ाने और आयात के विकल्पों की तलाश करने पर ध्यान देना चाहिए ताकि आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान गरीबी, बेरोजगारी और निरक्षरता जैसी समस्याओं का उन्मूलन किया जा सके। आठवीं योजना को सच्चे अर्थों में रोजगारोन्मुखी कहा

गया है। लेकिन रोजगार बढ़ने से आम उपभोक्ताओं की मांग भी स्वाभाविक रूप से बढ़ेगी। फलस्वरूप आपूर्ति और विस्तार की सम्भावनाओं को पर्याप्त बल मिलेगा। साथ ही साथ कृषि की सम्पूर्ण विकास दर बढ़ाने के प्रयास भी आठवीं योजना में किए जायेंगे।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में लघु उद्योगों के अधिकाधिक विकास पर विशेष बल दिया जाएगा ताकि रोजगार के अवसरों में वृद्धि सम्भव हो सके। भले ही लघु उद्योग क्षेत्र को आम जरूरत की चीजों का उत्पादन करने के लिए सुरक्षित क्यों न करना पड़े। जहां तक बड़े उद्योगों का सवाल है उनके अभी तक के अनुभव यह बताते हैं कि वे बढ़ती हुई आबादी, बेकारी और गरीबी के अनुसार रोजगार के अवसर बढ़ाने में सफल नहीं हुए। इसकी एक बड़ी वजह यह भी है कि बड़े उद्योगों के लिए बड़े पैमाने पर पूंजी की जरूरत होती है। दूसरी बात यह है कि अत्याधुनिक-टैक्नोलाजी और मशीनीकरण के कारण बहुत कम श्रमिकों को उसमें रोजगार उपलब्ध हो पाता है। अतः छोटी-मोटी जरूरत की चीजों के उत्पादन में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को आमंत्रित करने के स्थान पर यदि अपने देश में रहने वाले छोटे उद्यमियों को प्रोत्साहित किया जाए तो ज्यादा बेहतर होगा।

यह आवश्यक है कि विभिन्न क्षेत्रों में जो खामियां चली आ रही हैं उन्हें दूर किया जाए। उदाहरण के तौर पर सार्वजनिक क्षेत्र का स्थान हमारी अर्थव्यवस्था में यद्यपि बहुत ऊंचा माना जाता है लेकिन सार्वजनिक क्षेत्र में जो उद्योग लगातार घाटे में चल रहे हैं उन्हें चलाते रहने की अनिवार्यता पर फिर से एक बार विचार करने की जरूरत है। यह एक अच्छी बात है कि हमारे योजना आयोग के उपाध्यक्ष महोदय ने भी ऐसी ही मंशा जाहिर की। बल्कि उन्होंने तो यहां तक कहा कि यदि आवश्यक हुआ तो ऐसे उद्योगों को बंद भी किया जा सकता है।

आठवीं योजना के बारे में कहा गया है कि विदेशी पूंजी निवेश के प्रश्न पर गौर किया जाएगा और निर्यात के क्षेत्र में उच्च तकनीक को प्रोत्साहित एवं संरक्षण प्रदान किया जायेगा ताकि हम अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतियोगिताओं का सामना करते हुए आगे बढ़ सकें। बेकारी और निर्धनता को समाप्त करने के लिए आवश्यक संसाधन जुटाने के लिए जिन उपायों की रूपरेखा बनाई गई है उनमें वित्तीय अनुशासन लागू करने के आधार को व्यापक बनाने तथा अनुत्पादक किस्म के फिजूल खर्चों पर रोक लगाने को स्वीकार किया गया है। बचत दर का लक्ष्य सकल घरेलू उत्पाद का 22 प्रतिशत रखा गया है। आठवीं योजना के अन्तर्गत रोजगार के सम्बन्ध में जो रणनीति बनाई गई है उसमें कृषि उपज और ग्रामीण विकास को विशेष महत्व का दर्जा दिया गया है। आठवीं योजना अवधि में काम का अधिकार देने की नीति को लागू किया जाएगा।

खेती और लघु उद्योग धंधों को बढ़ावा देकर देहाती इलाकों का विकास तेजी से करने के लिए बेरोजगारी की समस्या से निबटना जरूरी है। आठवीं योजना के इस दृष्टिकोण पर राष्ट्रीय विकास परिषद में आमतौर पर व्यक्त सहमति इस बात का स्पष्ट संकेत है कि देश बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के बगैर भी तरक्की कर सकता है। लेकिन इसके लिए गैर योजना मदों में कटौती करनी होगी। अधिकाधिक निर्यात के द्वारा विदेशी मुद्रा कमाने का रास्ता उन तमाम लोगों को प्रोत्साहित कर सकता है जो बिना ऋण के छोटे उद्योग स्थापित करने में रुचि रखते हैं। विकास की गति तेज करने के लिए आवश्यक है कि दिशा-निर्देशों और सिद्धांतों के अनुसार क्रियान्वयन हो।

दरअसल हमारे देश में कुल आबादी का बड़ा हिस्सा परंपरागत शिल्प तथा उद्योगों आदि में लगा है। लाखों लोगों के जीवन निर्वाह का साधन कारीगरी या मजदूरी है। उन तमाम लोगों के विकास के लिए भी कदम उठाने होंगे। जो हमारे देश की गरीबी दूर करने की दिशा में सहायक होंगे। विकास के लिए यह बात जरूरी है कि कृषि उत्पादन में समग्र वृद्धि हो। यानि उपज में वृद्धि जनसंख्या वृद्धि की गति के साथ-साथ रहे। मजदूर-मालिक, स्त्री-पुरुष और किसान-व्यापारी के बीच में विषमता की खाई को पाटा जाना आवश्यक है। यह अच्छी बात है कि आठवीं योजना की तैयारी करने के साथ दृष्टिकोण पत्र में उन तमाम बिन्दुओं का भी स्पष्ट उल्लेख किया गया है जो अब तक की स्थिति पर प्रकाश डालते हैं।

योजना के मुख्य उद्देश्यों में आम आदमी की जरूरतें पूरी करने के साथ-साथ उसका जीवन स्तर सुधारने को भी शामिल किया गया है। काम का अधिकार योजना के पुनरुत्थान का केन्द्र बिन्दु है। इसका मतलब है पूर्ण-रोजगार की योजना। उत्पादक कामगारों के लिए काम देने की गारंटी का एक विशेष कार्यक्रम आठवीं योजना में चलाए जाने की सम्भावना है।

उत्पादन वृद्धि

आलोचकों का कहना है कि केवल धन आबंटन करने से ही काम होने वाला नहीं है। बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में कम पूंजी से शुरू होने वाले उद्योगों की स्थापना करने के साथ-साथ तैयार माल के विपणन और भंडारण पर भी बहुत कुछ निर्भर करता है क्योंकि अभी तक ग्रामीण विकास की दिशा में आड़े आने वाली समस्याओं में कुछ ऐसी बातें शामिल रही हैं जिन्हें तत्काल दूर

(शेष पृष्ठ 58 पर)

सामाजिक न्याय की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम

सुभाष चन्द्र 'सत्य'

विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र और जनसंख्या की दृष्टि से दूसरे सबसे बड़े देश भारत में योजना प्रक्रिया अपने सात सोपान पार करके आठवें चरण में प्रवेश कर रही है। स्वतंत्रता के पश्चात विशेष कर योजना-बद्ध विकास के युग के सूत्रपात के उपरांत के इस कालखंड में हमारे देश की प्रगति की यात्रा पूर्ण रूपेण संतोषजनक भले ही नहीं रही है किन्तु यह अपने आप में कोई छोटी बात नहीं है कि भारत जैसे निर्धन और विविधताओं से भरे देश की योजना प्रक्रिया लगभग अखंड रूप से गतिमान रही है और कृषि उद्योग तथा टेक्नोलाजी के विकास के क्षेत्र में हमारी उपलब्धियां उल्लेखनीय रही हैं। परन्तु यह भी सत्य है कि विकास के लाभों के समान वितरण,सामाजिक और क्षेत्रीय संतुलन की कसौटी पर हमारी उपलब्धियां खरी नहीं उतरतीं। गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता और लोगों की क्रय शक्ति की क्षीणता आज भी हमारे योजनाकारों के लिए चुनौती बनी हुई है। 18 जून, 1990 को राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने भी स्वीकार किया है—''तीव्र विकास का लाभ आबादी के सभी वर्गों को समान रूप से नहीं मिला न ही देश के सभी क्षेत्रों में ये लाभ समान रूप से पहुंचे हैं।''

नया उत्साह

आठवीं योजना इस शताब्दी के अंतिम दशक के प्रथम वर्ष से प्रारंभ हो रही है। इसके अतिरिक्त इसका एक और ऐतिहासिक महत्व यह है कि यह केन्द्र में सत्तारूढ़ राष्ट्रीय मोर्चा सरकार की पहली पंचवर्षीय योजना है। राष्ट्रीय मोर्चे ने पिछले वर्ष के अंत में आम चुनावों के दौरान देश की जनता से कई वायदे किए थे, जिन्हें पूरा करने का दायित्व नई केन्द्र सरकार पूरा करने को तत्पर है। इसलिए पंचवर्षीय योजना को तैयार करने तथा उसे लागू करने के प्रति राजनीतिक एवं प्रशासनिक स्तर पर विशेष उत्साह दिखाई देना स्वाभाविक है। आठवीं योजना का स्वरूप इसलिए भी विशेष उत्सुकता का विषय बन गया है, क्योंकि राष्ट्रीय मोर्चा सरकार साधनों का 50 प्रतिशत कृषि तथा ग्रामीण विकास पर निवेश करने के लिए वचनबद्ध है। इसके अतिरिक्त काम के अधिकार को मौलिक अधिकार में शामिल करके देश में रोजगार के अवसर बढ़ाना भी नई सरकार की प्राथमिकताओं में शामिल है। इन प्राथमिकताओं के अनुरूप योजना आयोग के ढांचे को भी नया रूप दिया गया।

योजना के मुख्य मुद्दों को राष्ट्रीय बहस के लिए प्रस्तुत करने के उद्देश्य से आयोग ने आठवीं योजना का दृष्टिकोण पत्र तैयार किया। मंत्रिमंडल और राष्ट्रीय विकास परिषद ने इस दृष्टिकोण पत्र को मंजूरी दे दी है। यही दस्तावेज पंचवर्षीय योजना का आधार होगा। दृष्टिकोण पत्र में साधनों की कमी की ओर संकेत करते हुए यह चेतावनी भी दी गई है कि हमें अपनी आर्थिक प्राथमिकताओं को इस ढंग से पुनर्निर्धारण और उन पर क्रियान्वयन करना है कि साधनों के वर्तमान स्तर पर ही और अधिक परिणाम प्राप्त किए जा सकें। इसके लिए खर्च करने के मौजूदा ढर्रे में परिवर्तन लाना जरूरी है। हमें अब अधिक धन खर्च करने का जोश दिखाने की बजाय अधिक परिणाम लेने के होश से काम लेना होगा।

मूल लक्ष्य सामाजिक परिवर्तन

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र से संकेत मिलता है कि यह योजना कुछ मामलों में पिछली योजनाओं से भिन्न होगी। दृष्टिकोण पत्र के अनुसार अब आंकड़ों तथा संख्या पर नहीं बल्कि वास्तविक परिणामों पर बल दिया जाएगा। कितने लोगों के लिए कितने कार्यक्रम बनाए गए जैसे आंकड़ों की बजाय यह देखा जाएगा कि वास्तव में कितने लोगों के जीवन में क्या परिवर्तन हुआ। राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में प्रधानमंत्री ने कहा कि 'आठवीं योजना का झुकाव सामाजिक परिवर्तन की ओर है। हम आर्थिक विकास से सम्बंधित आंकड़ों पर नहीं बल्कि ठोस स्थिति पर ध्यान देना चाहते हैं। विकास के साथ-साथ रहन-सहन में सुधार दिखाई देना चाहिए।'।

ऐसा नहीं कि सामाजिक न्याय पर पिछली योजनाओं में बल नहीं दिया गया। सातवीं योजना में भी सामाजिक समानता को पर्याप्त महत्व दिया गया था और उसमें गरीबी तथा बेरोजगारी दूर करने के लक्ष्य को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की घोषणा की गई थी परन्तु होता यह है कि योजना में निर्धारित कार्यक्रमों पर, अमल में आम आदमी को सहभागी नहीं बनाया जाता, जिसके फलस्वरूप वास्तविक लाभ आज लोगों तक नहीं पहुंच पाते। आर्थिक-सामाजिक तथा जातीय विषमताओं के कारण अपेक्षित और पिछड़े वर्ग, विशेषकर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लोग वंचित रह जाते हैं तथा बिचौलिए लाभों को स्वयं हड़प लेते हैं। दृष्टिकोण पत्र में इन त्रुटियों को दूर करके विकास नीति को नया रूप देने का संकल्प प्रकट किया गया है। सामाजिक परिवर्तन का सपना तब तक अधूरा है, जब तक गरीबों के लिए इतनी आय की व्यवस्था नहीं हो जाती कि वे अपनी न्यूनतम तात्कालिक आवश्यकताएं पूरी कर सकें। इन न्यूनतम आवश्यकताओं में भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान, वस्त्र तथा अन्य बुनियादी सुविधाएं सम्मिलित हैं। ये सुविधाएं तभी पूरी हो सकती हैं जब लोगों में खासकर ग्रामीण लोगों के लिए रोजगार के समुचित अवसर उपलब्ध कराए जाएं। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए दृष्टिकोण पत्र में नई सरकार की वचनबद्धता के अनुरूप सार्वजनिक परिव्यय का 50 प्रतिशत धन ग्रामीण क्षेत्रों के लिए निर्धारित करने, काम के अधिकार की गारंटी, ग्रामीण उद्योगों के विकास और अधिक लोगों को रोजगार दिलाने वाली तकनीकों के इस्तेमाल से आम उपभोग की वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने पर विशेष बल दिया गया है।

सामाजिक परिवर्तन का लक्ष्य पुराने ढर्रे पर चल कर प्राप्त करना असंभव है। इसके लिए योजना की वर्तमान पद्धति में परिवर्तन करना आवश्यक है। इसलिए दृष्टिकोण पत्र में योजना प्रक्रिया के विकेन्द्रीकरण की ओर संकेत किया गया है। इसमें योजना की प्राथमिकताओं के पुनर्निर्धारण करने के साथ-साथ उसकी पद्धतियों तथा क्रियान्वयन की विधियों को भी बदलने की बात कही गई है। योजना प्रक्रिया को लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान किया जाएगा। योजना बनाने और उसे क्रियान्वित करने में आम आदमी की सहभागिता को बढ़ाकर योजना प्रक्रिया को और कारगर बनाया जाएगा। इसके लिए योजना आयोग राज्यों के योजना संगठनों के साथ तथा राज्यों के योजना संगठन आगे ग्रामीण और शहरी संस्थाओं से तालमेल रखकर काम करेंगे। योजना प्रक्रिया का उद्देश्य एक ओर विभिन्न वर्गों के बीच तो दूसरी ओर विभिन्न क्षेत्रों के बीच विषमता को दूर करना होना चाहिए। इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए स्थानीय क्षेत्र आयोजन के सिद्धांत पर बल दिया गया है। इसके अंतर्गत केन्द्र/राज्य सरकारें केवल व्यापक सामाजिक-आर्थिक लक्ष्य तथा प्राथमिकताएं तय करेंगी और कार्यक्रम बनाने तथा उन्हें क्रियान्वित करने का दायित्व स्थानीय प्रशासन और स्वायत्त संस्थाओं का होगा। राज्य सरकारें इसके लिए धन पंचायती राज संस्थाओं तक सीधे पहुंचाएंगी। जहां पंचायतें नहीं हैं, वहां जिला ग्रामीण विकास एजेंसी को धन उपलब्ध कराया जाएगा।

अनेक ऐतिहासिक, धार्मिक, आर्थिक तथा सामाजिक कारणों से हमारे समाज में विभिन्न वर्गों में विषमता की गहरी खाई है। इसे पाटने के लिए उपेक्षित और दलित वर्गों को विशेष सुविधाएं और अवसर उपलब्ध कराना। सामाजिक न्याय तथा सामाजिक परिवर्तन का लक्ष्य प्राप्त करने की अनिवार्य शर्त है। अपेक्षित वर्गों में महिलाओं का प्रतिशत बहुत अधिक है। इसलिए आठवीं योजना में विकेन्द्रीकृत क्षेत्र योजना में महिलाओं को विशेष भूमिका प्रदान की जाएगी। इसके लिए लड़कियों के लिए शिक्षा के प्रसार, रोजगार के लिए प्रशिक्षण, बाल कल्याण सुविधाओं की व्यवस्था, सामाजिक सुरक्षा जैसे अनेक उपायों पर खास ध्यान दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त उन्हें सहकारी समितियां, मजदूर संगठन तथा अन्य संस्थाएं बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा ताकि वे विकास की अपनी संपूर्ण क्षमताओं का उपयोग कर सकें तथा समाज में अपना समुचित स्थान बना सकें।

शहरों तथा गांवों के बीच बढ़ती हुई विषमता और टकराव योजनाकारों के लिए चिंता का एक और मुख्य विषय है। इसके फलस्वरूप कई प्रकार के सामाजिक तनाव और संघर्ष पैदा हुए हैं। गांवों से शहरों की ओर पलायन की रोकथाम को आठवीं योजना का एक महत्वपूर्ण पहलू माना गया है, क्योंकि शहरों में आबादी के केन्द्रित होने से वहां तंग बस्तियों का जाल फैल रहा है और अपराधिक प्रवृत्तियों को हवा मिल रही है। दृष्टिकोण पत्र में इस समस्या के समाधान के रूप में गांवों तथा शहरों के समन्वित विकास की नीति अपनाने पर जोर दिया गया है।

ग्रामीण विकास

यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि शहरी क्षेत्रों की तुलना में गांवों के विकास की गति बहुत धीमी है, यद्यपि देश की तीन चौथाई आबादी गांवों में रहती है। वहां शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, स्वच्छता, पेयजल तथा अन्य बुनियादी सेवाएं बहुत कम हैं और जो हैं उनका रख-रखाव असंतोषजनक है।

आठवीं योजना में ग्रामीण विकास पर अधिक से अधिक बल दिया गया है। बुनियादी सुविधाओं के साथ-साथ रोजगार के

अवसर जुटाना भी महत्वपूर्ण है। इसके लिए गांवों में छोटे और कुटीर उद्योग, खाद्य संसाधन, इकाइयां तथा मंडियां स्थापित करने के कार्यक्रम चलाए जाएंगे। इसके अतिरिक्त बागवानी, रेशम उत्पादन, मुर्गीपालन, पशुपालन, मछलीपालन जैसे वैकल्पिक व्यवसायों को बढ़ावा दिया जाएगा जिससे गैर-कृषि श्रमिकों को काम मिल सकें तथा लोग अपने काम-धंधे चला सकें। उद्योगों तथा कृषि के विकास में समन्वय कायम किया जाएगा।

गांवों में समतावादी समाज की रचना तब तक असम्भव है, जब तक कृषि सम्बंधों को नया रूप नहीं दिया जाता। दृष्टिकोण पत्र में यह संकल्प व्यक्त किया गया है कि भूमि संबंधी कानूनों की समीक्षा करने तथा उनकी फिर से रचना करने के लिए कदम उठाए जाएंगे। इन कानूनों को कारगर ढंग से क्रियान्वित किया जाएगा। भूमि संबंधी कानूनों को संविधान की नौवीं सूची में शामिल किया जाना इसी दिशा में एक प्रयास है। भूमि संबंधों के विभिन्न पहलुओं, पट्टेदारी, चकबंदी, हदबंदी, अतिरिक्त भूमि से वंचित किए जाने की कुछ तत्वों की कोशिशों को विफल करने के लिए इन वर्गों की भूमि को गैर-जनजातीय लोगों के नाम स्थानांतरित करने पर प्रतिबंध लगाया जाएगा। भूमि संबंधी रिकार्डों के रख-रखाव की पद्धति में सुधार किया जाएगा।

दृष्टिकोण पत्र में यह भी कहा गया है कि किसानों को कृषि के काम आने वाली वस्तुओं की सप्लाई में सुधार करने के प्रयास किए जाएंगे। ऋण सुविधाओं को बेहतर बनाने पर भी बल दिया गया है। इसी प्रकार कृषि उत्पादों के विपणन की सुविधाओं का काफी विस्तार किया जाएगा और परिवहन तथा सड़कों के विकास के लिए अधिक राशि का प्रावधान किया जाएगा। कृषि उत्पादों के निर्यात में वृद्धि करने का भी निश्चय किया गया है।

दृष्टिकोण पत्र में इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि कृषि आधार को व्यापक बनाने तथा उत्पादन में विविधता लाने के प्रयासों के बिना ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि पर बढ़ते हुए बोझ को कम करना कठिन है। इन प्रयासों के लिए पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था की जाएगी।

इसमें कोई संदेह नहीं कि ग्रामीण क्षेत्रों के विकास तथा गांवों के जरूरतमंद लोगों के लाभ के लिए बहुत बड़ी धनराशि पहले से ही खर्च की जा रही है तथा लोगों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने के लिए अनेक विशेष कार्यक्रम चल रहे हैं। किन्तु यह भी सत्य है कि नौकरशाही के हावी रहने के कारण इन कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में जड़ता और उत्साहहीनता झलकती है। निहित स्वार्थों तथा उच्च वर्गों के दबदबे और प्रभाव के कारण इन कार्यक्रमों के लाभ उनके असली हकदार लोगों तक नहीं पहुंच रहे हैं। दृष्टिकोण पत्र में स्पष्ट कहा गया है कि इन गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की सफलता के लिए पर्याप्त वित्तीय प्रावधान करना ही पर्याप्त नहीं है, इनकी रचना, कार्यान्वियन तथा निगरानी की प्रक्रिया को नया रूप देना भी आवश्यक है।

दृष्टिकोण पत्र में स्वीकार किया गया है कि कृषि उत्पादन में आत्म निर्भरता प्राप्त कर लिये जाने के बावजूद देश के विभिन्न भागों में कृषि विकास समान रूप से नहीं हुआ और हरित क्रांति बहुत कम क्षेत्र तक सीमित रही है। हरित क्रांति को अन्य राज्यों तक ले जाने का संकल्प प्रकट करते हुए वर्षा पर आधारित क्षेत्रों में सिंचाई की व्यवस्था करने तथा खेती-बाड़ी की नई टेक्नोलाजी को किसानों तक पहुंचाने के काम में गति लाने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है।

रोजगार

जैसे कि ऊपर कहा गया है रोजगार के अवसर बढ़ाए बिना विकास और सामाजिक परिवर्तन का सपना पूरा नहीं हो सकता। गांवों में पिछले कुछ वर्षों में खेतिहर मजदूरों की संख्या में वृद्धि हुई है और अपनी जमीन जोतने वालों की संख्या में कमी आई है। यह चिंतनीय स्थिति है। शिक्षा के प्रसार के कारण हर वर्ष हजारों शिक्षित युवकों के नाम रोजगार चाहने वालों की संख्या में जुड़ जाते हैं। 10-15 वर्ष तक स्कूलों, कालेजों में एड़ियां रगड़ने के बाद यदि किसी को एहसास हो कि भविष्य के द्वार उसके लिए बंद हैं तो उसमें कुंठा पैदा होना तथा उसके पांव फिसलना स्वाभाविक है। शहरों और गांवों में बेरोजगारों की संख्या हर वर्ष बढ़ती जा रही है। इसके अलावा ऐसे लोगों की संख्या भी कम नहीं जिन्हें अपनी आवश्यकताओं तथा योग्यताओं के तुलना में अपर्याप्त रोजगार मिला हुआ है। सातवीं योजना में रोजगार को उच्च प्राथमिकता दी गई थी और योजना अवधि में रोजगार के अवसरों की वास्तविक आवश्यकता से अधिक रोजगार उपलब्ध कराने का लक्ष्य तय किया गया था। परन्तु कृषि विकास की गति लक्ष्य के मुकाबले धीमी रहने के परिणामस्वरूप कृषि क्षेत्र में रोजगार पैदा होने की गति भी कम रही। इस कारण गांवों से काम की तलाश में शहरों में जाने वाले लोगों, खासकर शिक्षित युवकों की संख्या में वृद्धि हुई है। गांवों में असंगठित मजदूरों तथा बंधुआ मजदूरों की समस्या जटिल रूप लेती जा रही है। इस गंभीर स्थिति को ध्यान में रखते हुए ही दृष्टिकोण पत्र में गांवों में रोजगार के अवसर जुटाने तथा कई प्रकार के उद्योग धंधे चलाने को प्रोत्साहन देने का निश्चय प्रकट किया गया है। आठवीं योजना

में न्यूनतम मजदूरी की दरों को युक्तिसंगत बनाने तथा इन्हें कारगर ढंग से लागू करने के भी उपाय किए जाएंगे।

शहरों में बेरोजगारी दूर करने के लिए अलग-अलग वर्गों के लिए अलग-अलग नीति अपनाने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। उदाहरण के लिए शिक्षित-अशिक्षित महिलाओं, दिहाड़ी के मजदूरों, अपना छोटा-मोटा काम करने लायक लोगों आदि के लिए अलग-अलग प्रकार की योजनाएं बनाई जाएं, जिनके वे लाभ उठा सकें।

दृष्टिकोण पत्र में आवास निर्माण गति विधियों में तेजी लाने का सुझाव दिया गया है। इससे काफी संख्या में रोजगारों को काम मिलेगा और लोगों को सिर छिपाने के लिए मकान भी उपलब्ध कराए जा सकेंगे। इसमें कम लागत के मकानों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। स्वरोजगार में लगे लोगों को अपनी तकनीकी क्षमता तथा कार्यकुशलता के सुधार लाने के अवसर दिए जाएंगे और बेहतर स्थान उपकरण एवं विपणन सुविधाओं के लिए उन्हें ऋण उपलब्ध कराने के उपाय किए जाएंगे।

दृष्टिकोण पत्र में काम के अधिकार की गारंटी देने का भी आश्वासन दिया गया है। काम का अधिकार योजना प्रक्रिया को नया रूप देने का केन्द्रीय बिन्दु है। इसका अर्थ है पूर्ण रोजगार की व्यवस्था की नीति। इसके अंतर्गत ऐसे प्रयास किए जाएंगे कि विकास सभी वर्गों और क्षेत्रों में समान रूप से हो तथा बेरोजगारी और अल्प रोजगार की समस्या हल हो सके।

महिलाओं को प्रशिक्षण देने तथा उन्हें रोजगार पाने योग्य बनाने पर विशेष ध्यान दिया जाएगा ताकि वे भी विकास प्रक्रिया में बराबरी की हिस्सेदार बन सकें और परिवार की आय बढ़ाकर बच्चों का जीवन स्तर तथा अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा ऊंची कर सकें। जब तक महिलाओं की स्थिति और स्तर में सुधार नहीं होता तब तक सामाजिक परिवर्तन का लक्ष्य केवल सपना ही बना रहेगा। इसलिए आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में महिलाओं के विकास के उपायों पर पर्याप्त विस्तार से चर्चा की गई है।

यदि दृष्टिकोण पत्र के अनुसार ही आठवीं योजनाओं की प्राथमिकताएं निर्धारित की गईं और उन पर गंभीरता तथा निष्ठा से अमल किया गया तो इसमें कोई संदेह नहीं कि सामाजिक परिवर्तन की दिशा में हम अवश्य आगे बढ़ सकेंगे।

(पृष्ठ 54 का शेष)

करना होगा ताकि नई सरकार से जो आशाएं और आकांक्षाएं हैं वे पूरी हो सकें और इस मामले में आशावादी दृष्टिकोण अपनाया जाना ही बेहतर होगा। क्योंकि फिलहाल तो यही लगता है कि आठवीं योजना पिछली योजनाओं की अपेक्षा कई मामलों में भिन्न होगी।

यह उचित भी है कि बढ़ती जनसंख्या और बेकारी को देखते हुए 21वीं सदी में प्रवेश करने की बात पर धैर्यपूर्वक विचार किया जाए ताकि उन उपायों का पता लग सके जो शहरी और देहाती इलाकों के बदलाव, शिक्षित, अशिक्षित के बीच का अन्तर तथा गरीब और अमीर आदि के बीच की खाई को पाटने के लिए, फिर एक बार नए सिरे से, प्रयास किए जाने जरूरी हैं।

उत्पादन बढ़ाने, महंगाई पर नियंत्रण करने और रोजगार के अवसर मुहैया कराने वाली रणनीति से अर्थव्यवस्था में जो गति आएगी उससे निश्चय ही उन विचारों को प्रोत्साहन मिलेगा जो राष्ट्रीय विकास की अवधारणा में शामिल हैं और व्यापक दृष्टिकोण रखते हैं। अन्याय और दमन के जो कटु अनुभव पूर्व में हुए हैं उन्हें भुलाकर एक नए समाज की संरचना में उन तमाम सामाजिक-आर्थिक पहलुओं पर विचार करना होगा जो हमारी समस्याओं को सुलझा सकते हैं। कुल मिलाकर लगता है कि आठवीं योजना में गरीबों, बेरोजगारों और ग्रामवासियों के वे सपने साकार हो सकेंगे जो उनकी आंखों में लम्बे समय से बसे हैं या अभी तक अधूरे हैं।

एच-88, शास्त्रीनगर,
मेरठ-250005 (उ. प्र.)

आठवीं योजना का प्रारूप क्या ग्रामीण क्षेत्रों के लिए वरदान सिद्ध होगा?

गणेश कुमार पाठक

देश के आर्थिक विकास में पंचवर्षीय योजनाओं की विशेष भूमिका रही है। अब तक सात पंचवर्षीय योजनाएं समाप्त हो चुकी हैं एवं आठवीं पंचवर्षीय योजना प्रारम्भ होने जा रही है। इन विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में विकास के लिए अलग-अलग लक्ष्य निर्धारित किए गए एवं लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रारूप तैयार कर विभिन्न कार्य योजनाएं लागू की गईं। विभिन्न योजनाओं में विकास दर का लक्ष्य एवं उनकी प्राप्ति तालिका-1 से स्पष्ट है।

तालिका-1

पंचवर्षीय योजनाओं में विकास दर लक्ष्य एवं प्राप्ति

योजनाएं	विकास दर (लक्ष्य) प्रतिशत में	विकास दर (प्राप्ति) प्रतिशत में
प्रथम योजना	2.1	3.6
द्वितीय योजना	4.5	4.0
तृतीय योजना	5.6	2.2
चतुर्थ योजना	5.7	3.3
पंचम योजना	5.4	5.1
षष्ठम योजना	5.2	5.3
सप्तम योजना	5.0	5.3 (सम्भावित)
अष्ठम् योजना	6.0	

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि आठवीं पंचवर्षीय योजना में प्रस्तावित विकास दर लक्ष्य काफी ऊंचा है किन्तु यह विकास दर लक्ष्य उचित भी है। कारण कि 40 वर्षों के नियोजित आर्थिक विकास के बावजूद भी देश में गरीबी एवं बेरोजगारी की स्थिति विकराल रूप धारण किए हुए है। इस स्थिति को देखते हुए ही आठवीं योजना में विकास दर का लक्ष्य 6 प्रतिशत रखा गया है एवं कुल राष्ट्रीय आय का 50 प्रतिशत अंश ग्रामीण क्षेत्रों के विकास पर खर्च करने का प्रावधान किया गया है।

28 अगस्त, 1989 को योजना आयोग ने अपनी बैठक में आठवीं पंचवर्षीय योजना (1990-95) के आधार पत्र को स्वीकृति प्रदान कर दी जिसमें आगामी 5 वर्षों में विकास की दर प्रति वर्ष कम से कम 6 प्रतिशत एवं बचतों पर अधिक बल दिया गया है। नव गठित योजना आयोग ने भी फरवरी 1990 में इस आठवीं योजना के दृष्टिकोण के मसौदे को सरसरी तौर पर स्वीकृति प्रदान कर दी। प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह की अध्यक्षता में हुई पूर्ण योजना आयोग की प्रथम बैठक में योजना आयोग के तत्कालीन उपाध्यक्ष ने आठवीं योजना के प्रारूप पर नये ढंग से विचार करने का संकेत दिया और कहा कि पिछली पंचवर्षीय योजनाओं में आर्थिक विकास की दर तो बढ़ी है, किन्तु इसका लाभ समाज के बड़े हिस्से को प्राप्त नहीं हो सका है। फलत: सामाजिक असंतुलन को बल मिला है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ही इस नये आयोग ने योजना के सामाजिक एवं आर्थिक लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु 6 सूत्री रूप-रेखा प्रस्तुत की और विकास दर 5½ प्रतिशत रखी। योजना उद्देश्यों के निर्धारण में आयोग ने इस बात पर गौर किया है कि पिछली सात पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से हजारों-करोड़ों रुपये खर्च किए जाने के बावजूद भी ग्रामीण क्षेत्र आज भी पिछड़ा है एवं रोजगार के अवसरों में कमी आई है। इसका यही कारण है कि आठवीं योजना को ग्रामोन्मुख बनाने एवं योजनाबद्ध तरीके से ऐसे कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने का संकेत दिया गया है, जिससे गरीबी एवं बेरोजगारी में कमी हो सके। देश की 36 प्रतिशत जनसंख्या आज भी गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है। इनमें से अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है जिन्हें न तो पर्याप्त भोजन मिलता है और न ही पर्याप्त वस्त्र। स्वच्छ आवास, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं की तो बात ही अलग है। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए सरकार ने राष्ट्रीय आय का 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों के ऊपर खर्च करने का निर्णय किया है। 18-19 जून, 1990 को राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक ने भी इसको मंजूरी दे दी है।

आठवीं योजना में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर विचार करने से पूर्व सातवीं योजना में ग्रामीण विकास के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों की समीक्षा कर लेना भी समीचीन होगा। कारण कि इससे प्रगति का सही आकलन हो सकेगा और यह भी ज्ञात हो सकेगा कि आठवीं योजना में निर्धारित लक्ष्य कहां तक उचित हैं।

सातवीं योजना एवं ग्रामीण विकास

योजना आयोग की गणना के अनुसार सातवीं योजना में ग्रामीण क्षेत्र का भाग कुल अनुमानित परिव्यय का 44.8 प्रतिशत रहा है। योजना आयोग का यह अध्ययन नई सरकार के आठवीं योजना में ग्रामीण क्षेत्र पर 50 प्रतिशत परिव्यय के वायदे को ध्यान में रखते हुए महत्वपूर्ण है। पिछले परिव्यय में यदि 5 प्रतिशत की वृद्धि और कर दी जाए तो ग्रामीण क्षेत्र का परिव्यय आठवीं योजना में 50 प्रतिशत का हो जायेगा। योजना आयोग के अनुसार सातवीं योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के परिव्यय 2,22,169 करोड़ रुपयों में से ग्रामीण क्षेत्र में 99,521 करोड़ रुपये व्यय किए गए। ग्रामीण क्षेत्र का यह 44.8 प्रतिशत भाग सातवीं योजना के प्रारम्भिक स्वीकृत अनुमान के बराबर है। स्वीकृत योजना के अनुसार सार्वजनिक क्षेत्र के 1,80,000 करोड़ रुपये के परिव्यय में ग्रामीण क्षेत्र का भाग 80,668.6 करोड़ रुपये अनुमानित किया गया था।

सातवीं योजना के दौरान केन्द्रीय सरकार का ग्रामीण क्षेत्र परिव्यय का अध्ययन करते समय 10 मुख्य क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया है जो निम्नलिखित हैं— 1.कृषि एवं सहायक क्रियाएं 2. ग्रामीण विकास 3. विशेष क्षेत्र कार्यक्रम (कुल परिव्यय का 21.17 प्रतिशत भाग) 4. सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण 5. ऊर्जा (9.12 प्रतिशत) 6. उद्योग एवं खनिज (2.2 प्रतिशत) 7. परिवहन (1.6 प्रतिशत) 8. संवाद वहन (0.24 प्रतिशत) 9. विज्ञान, तकनीकी एवं पर्यावरण (0.35 प्रतिशत) 10. सामाजिक सेवाएं (10.10 प्रतिशत)- 11. अन्य (0.02 प्रतिशत)।

अध्ययन में इस बात को दर्शाया गया है कि कृषि, ग्रामीण विकास, विशेष क्षेत्र कार्यक्रम, सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर किया गया कुल परिव्यय का 30 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के व्यय के लिए दिखाया गया। इसमें सम्पूर्ण कृषि एवं पारिवारिक क्षेत्र के लिए विद्युत उत्पादन एवं उससे सम्बन्धित क्रियाओं को लिया गया। पेट्रोलियम के परिव्यय का अधिकतम 38 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्र के लिए दिखाया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रयोग किए जाने वाले कैरोसिन/डीजल एवं नेप्था के भाग को भी इसमें लिया गया। इसके अतिरिक्त उर्वरक उत्पादन के लिए गैस पाईप लाइनों को भी इसमें सम्मिलित किया गया। इस बात का ध्यान दिलाया गया कि उर्वरक उत्पादन के लिए 1990-91 में गैस की बिक्री का भाग कुल गैस बिक्री का 51.5 प्रतिशत है।

कोयले के कुल परिव्यय में ग्रामीण क्षेत्र का भाग 12 प्रतिशत दर्शाया गया है। इसका अनुमान इस आधार पर निकाला गया है कि ग्रामीण पारिवारिक क्षेत्र में कोयले की कितनी मात्रा का प्रयोग किया जाता है एवं यहां के लिए विद्युत उत्पादन में कितना कोयला लगता है। नए एवं नवीनीकरण ऊर्जा स्रोत पर होने वाले व्यय का 80 प्रतिशत जो रेलवे पर होता है वह भी ग्रामीण क्षेत्र के अन्तर्गत ही दिखाया गया है क्योंकि इससे इसी क्षेत्र को लाभ होता है। अन्य मदों पर ग्रामीण व्यय का भाग ग्रामीण सड़क एवं आंतरिक जल परिवहन के 100 प्रतिशत व्यय और सड़क परिवहन पर व्यय 40 प्रतिशत व्यय के आधार पर निकाला गया है।

डाक सेवा के लिए परिव्यय को 1985-86 में शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में डाकघरों की संख्या के आधार पर विभक्त कर दिया गया है। दूरसंचार व्यय के 3 प्रतिशत भाग को ग्रामीण परिव्यय में रखा गया है।

अब प्रश्न यह उठता है कि सातवीं योजना में उपर्युक्त निर्धारित परिव्ययों द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति में कहां तक सफलता मिली है। इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाये तो सातवीं योजना (1985-90) में नीति निर्धारक स्पष्ट रूप से यह नहीं बता पा रहे हैं कि निर्धनता का प्रतिशत कम हुआ है अथवा नहीं। सरकारी घोषणाओं में एक ही राग अलापा जाता है कि सातवीं योजना का लक्ष्य गरीबी-रेखा से नीचे जीवन व्यतीत करने वाले सन् 1985 के 27 करोड़ 30 लाख लोगों को सन् 1990 के अंत तक घटा कर 21 करोड़ 8 लाख करना है। अर्थात निर्धनता का प्रतिशत 36.9 से घटाकर 25.8 प्रतिशत करना है एवं आठवीं योजना के अंत तक मात्र 18 से 20 प्रतिशत तक व्यक्ति गरीबी की रेखा के नीचे रह जायेंगे। बार-बार अधिकृत रूप से यह भी कहा जाता है कि समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई.आर.डी.पी.), राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एन.आर.ई.पी.), ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (आर.एल.ई.जी.पी.), ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण (ट्राइसेम) आदि योजनाओं से ग्रामीण गरीबी में कमी आई किन्तु यह कमी कितनी हुई है यह स्पष्ट नहीं हो पा रहा है। किन्तु सातवीं योजना के आंकड़ों की दुहाई देकर यह सरकारी घोषणायें होने लगी हैं कि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले जिन 6 करोड़ 20 लाख लोगों को गरीबी रेखा से ऊपर लाया जाएगा, उनमें से 5 करोड़ 40 लाख ग्रामीण गरीब होंगे।

भारत में कुल कितने निर्धन व्यक्ति हैं। इस विषय पर भी योजना आयोग एवं विश्व बैंक के भिन्न-भिन्न विचार हैं। योजना आयोग के अनुसार भारत में गरीबी रेखा से नीचे की जनसंख्या तालिका-2 में स्पष्ट है—

तालिका-2

भारत में गरीबी रेखा से नीचे जनसंख्या (प्रतिशत में)

वर्ष	ग्रामीण	शहरी	योग
1977-78	51.2	38.2	48.3
1983-84	40.4	28.1	37.4
1984-85	39.9	27.7	36.9
1989-90 (लक्ष्य)	28.2	19.3	25.8

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि सातवीं योजना में लक्ष्य यह था कि गरीबी रेखा से नीचे रहने वालों का प्रतिशत 25.8 हो जाए। जबकि विश्व बैंक के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या की 40 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रही है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सात पंचवर्षीय योजनाओं में करोड़ों रुपये बहाने के बावजूद भी ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी अपेक्षित विकास नहीं हो पाया है जिसको दृष्टिगत रखते हुए ही आठवीं योजना का प्रारूप तैयार किया गया है।

तालिका-3

विभिन्न योजनाओं में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए निर्धारित विनियोग राशि

योजनाएं	सार्वजनिक क्षेत्र में व्यय (करोड़ रुपये में)
प्रथम योजना (1951-56)	1,960 (वास्तविक)
द्वितीय योजना (1956-61)	4,672 (वास्तविक)
तृतीय योजना (1961-66)	8,577 (वास्तविक)
तीन वार्षिक योजना (1966-69)	6,625 (वास्तविक)
चतुर्थ योजना (1969-74)	16,160 (वास्तविक)
पांचवीं योजना (1974-78)	42,330 (वास्तविक)
छठी योजना (1980-85)	1,09,953 (वास्तविक)
सातवीं योजना (1985-90)	1,80,000 (प्रावधान)
आठवीं योजना (1990-95)	3,50,000 (वास्तविक)

आठवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास का दृष्टिकोण

आठवीं योजना में निर्धारित विकास पर एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिए निर्धारित परिव्यय अब तक पूर्ण हो चुकी सातों योजनाओं की तुलना में बहुत ही अधिक है जिसके लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 35 खरब रुपये परिव्यय का प्रावधान किया गया है। यह परिव्यय 1989-90 के मूल्यों पर आधारित है, जबकि सातवीं योजना में 1984-85 के मूल्यों के आधार पर मात्र 18 खरब रुपये रखा गया था। आठवीं योजना का कुल परिव्यय 1989-90 के मूल्यों के आधार पर 64 खरब 50 अरब निर्धारित किया गया है जब कि सातवीं योजना में कुल परिव्यय 1984-85 के मूल्यों के आधार पर मात्र 32 अरब से कुछ अधिक रहा है। इस प्रकार सातवीं योजना की तुलना में आठवीं योजना की परिव्यय राशि दुगनी है। जब कि प्रथम योजना की तुलना में आठवीं योजना का यह विनियोग 179 गुना है। विभिन्न योजनाओं में सार्वजनिक क्षेत्र में जो वृद्धि हुई है उसका विवरण तालिका-3 से स्पष्ट है।

आठवीं योजना का मुख्य उद्देश्य कमजोर वर्गों के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर, भोजन, कपड़ा, आवास एवं स्वास्थ्य सुविधाओं को उपलब्ध कराना है। इस तरह आठवीं योजना के निर्धारित लक्ष्य इस प्रकार हैं—

1. आठवीं पंचवर्षीय योजना के पहले वर्ष के भीतर ही जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को पूरा करना।
2. विभाग स्तर स्कीमों की वर्तमान प्रणाली के स्थान पर एक एकीकृत स्थानीय आयोजना को अपनाकर विकास के प्रति दृष्टिकोण में एक प्रमुख परिवर्तन को स्वीकार करना।
3. इस प्रयोजन के लिए आवश्यक संसाधनों के साथ आयोजना तथा कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व स्थानीय प्रजातांत्रिक संस्थाओं को हस्तांतरित करने की वचनबद्धता एवं आयोजना तथा कार्यान्वयन के लिए तकनीकी कार्मिकों तक उन्हें पहुंचाने की व्यवस्था करना।
4. केन्द्रीय तथा राज्य सरकार के विभागों की भूमिका में परिवर्तन, जिसके फलस्वरूप आयोजन में उनकी प्रत्यक्ष सहभागिता, वृहद सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों तथा समग्र प्राथमिकताओं को निर्धारण करने तथा बड़ी एवं अन्तर जिला तथा अन्तर प्रादेशिक परियोजनाओं को पूरा करने से स्थापित होगा।
5. अपेक्षाकृत सरल मापदण्ड और प्रतिक्रियाएं तैयार करना जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि स्थानीय क्षेत्रीय आयोजना के लिए हस्तांतरित संसाधन उन्हीं क्षेत्रों को उपलब्ध हैं जहां उनकी ज्यादा जरूरत है तथा उन कार्यक्रमों को जो राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

6. महिलाओं के जीवन में सुरक्षा व प्रतिष्ठा सुनिश्चित करके उनकी प्रतिभा तथा शक्ति का उत्पादक ढंग से उपयोग करना।
7. कृषीय विकास आयोजना में प्राकृतिक संसाधनों, विशेषकर मृदा जल और बायोमास की देखभाल और संरक्षण पर अधिक ध्यान देना।
8. कृषि का प्रत्येक दृष्टि से विकास करना जिसके अंतर्गत 6 तथ्यों को सम्मिलित किया गया है।
9. एक व्यापक सामाजिक नीति तैयार करना।
10. जनसंख्या वृद्धि रोकने पर बल देना एवं मानव संसाधनों की गुणवत्ता में सुधार करना तथा निरक्षरता उन्मूलन के लक्ष्य को प्राप्त कर शिक्षा नीति में आमूलचूल परिवर्तन करना।
11. पारम्परिक शिल्पकारों को कच्चे माल की सुनिश्चित आपूर्ति ऋण तथा विपणन सुविधाओं के जरिए व्यापक उपभोक्ता वस्तुओं के श्रम प्रधान निर्माण को बढ़ावा देना।
12. बढ़ती हुई जरूरतों की पूर्ति के लिए आधारभूत संरचना सुविधाओं के साथ-साथ प्रमुख मध्यवर्ती तथा पूंजीगत वस्तुओं की आपूर्ति में विस्तार करना।
13. बड़े पूंजी निवेशों के सभी प्रस्तावों की समीक्षा करना। चुने हुए प्रमुख उद्योगों के प्रभावशाली विकास के लिए दीर्घावधि कार्यक्रम तैयार करना एवं सेवाओं का अधिक सक्रिय उपयोग किया जाना।
14. विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के ऐसे आदानों के जरिए विकास के लिए नए दृष्टिकोण को अभिप्रेरित करना, जिन्हें कि उन लोगों विशेष रूप से जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं उन्हें आवश्यकताओं के प्रति जिम्मेदार बनाना होगा और जो रोजगार-पर्यावरण तथा आत्मनिर्भरता के अन्वयन से सम्बन्धित हो।
15. पहले से ही निर्धारित परियोजनाओं की पर्यावरण संबंधी स्वीकृति के मानकों तथा मार्गदर्शी सिद्धान्तों का सख्ती से अनुपालन तथा उनके संसाधन, संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण तथा भूमि और जल संसाधन की गुणवत्ता का दर्जा बढ़ाने से संबंधित उपायों के जरिए पर्यावरणीय रूप से ग्रहण योग्य विकास कार्यक्रमों पर जोर देना।
16. विदेशी संसाधनों पर निर्भरता को कम करने के लिए निर्यात पर बल देना।
17. चुनिंदा आयात प्रति स्थापकों के लिए उपायों, आयातित वस्तुओं के अधिक प्रयोग और आवश्यक उपभोग से सम्बन्धित वस्तुओं के आयात से बचने के उपायों के माध्यम से आयात करना।
18. सरकारी व्यय में यथा संभव सख्त मितव्ययता, विशेषकर विकास प्रवृत्ति की, ऋणों देशी या विदेशी पर निर्माण को कम करना तथा कर समहरण त्रुटियों को रोक कर उद्यमियों के अधिक अतिरेकों और सरकारी व्यय के सबसिडी घटक की समग्र समीक्षा और इसके सामाजिक प्रभावों के अध्ययन से अधिक संसाधनों का सृजन करना।

आठवीं योजना के उपर्युक्त लक्ष्यों से स्पष्ट है कि इस योजना का अधिकांश लक्ष्य किसी न किसी रूप में ग्रामीण क्षेत्रों से ही सम्बन्धित हैं और सम्भवतः इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर कुल परिव्यय का 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों के विकास पर ही खर्च करने का प्रावधान रखा गया है ताकि भारत की 78.2 प्रतिशत जनसंख्या जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, का विकास सम्भव हो सके।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में प्रस्तुत ग्रामीण विकास सम्बन्धी तथ्य

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में ग्रामीण विकास से सम्बन्धित कुछ लक्ष्य एवं तथ्य निर्धारित किए गए हैं। इस दृष्टिकोण पत्र में यह स्वीकार किया गया है कि शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में जहां देश की तीन-चौथाई जनसंख्या बसती है प्रति व्यक्ति आय तथा खपत का स्तर काफी नीचे है तथा साथ ही वहां शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन तथा अन्य आवश्यक सेवाएं काफी कम हैं।

ग्रामीण शहरी असमानताएं बढ़ रही प्रतीत होती हैं। इसलिए सरकार ग्रामीण विकास पर अधिक बल देने के लिए कृत संकल्प है। ग्रामीण परिवर्तन के लिए कृषि संबंधों की पुनर्संरचना महत्वपूर्ण होगी। भूमि कानूनों की समीक्षा और उन्हें पुनर्निर्मित करने तथा उनका कार्यान्वियन सुनिश्चित करने हेतु कदम उठाये जायेंगे। संविधान की नौवीं अनुसूची में भूमि सुधार संबंधों के विभिन्न पहलू जैसे काश्तकारी, जोतों की चकबंदी, भूमि अधिकतम सीमाएं और अतिरिक्त भूमि जिसमें सरकार के पास पड़ी भूमि भी शामिल है, का वितरण सम्मिलित होने चाहिए। गरीबों को इस प्रकार दी गयी भूमि को विकसित किया जाना चाहिए ताकि वह कृषि योग्य बने तथा मालिकों को सामूहिक आधार पर कृषि के विभिन्न क्रिया-कलापों को आरम्भ करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जहां तक आदिवासियों की भूमि का संबंध है इसकी गैर-आदिवासियों को बिक्री या हस्तांतरण पर प्रतिबंध होना

चाहिए। भूमि सुधारों के संदर्भ में भूमि अभिलेखों के उचित रख-रखाव और सुधार महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में यह भी परिकल्पना की गयी है कि ग्रामीण जनसंख्या को लाभ पहुंचाने वाली विकास स्कीमों के परिव्ययों का महत्वपूर्ण रूप से अनुपात बढ़ाया जाए, लक्ष्य 50 प्रतिशत है। ग्रामीण जनसंख्या को लाभ पहुंचाने वाले निवेश में केवल कृषि तथा सिंचाई ग्राम उद्योग, ग्रामीण विद्यालय अस्पताल उपलब्ध करना जैसे उर्वरक, कीटनाशी, डीजल,तेल, बिजली तथा परिवहन और आधार संरचनाओं में जो आदानों का बेहतर वितरण तथा गांव की उपज के विपणन को भी सम्मिलित किया जायेगा, किये जाने वाले निवेशों को भी शामिल किया जायेगा। उस निवेश से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कितना लाभ पहुंच रहा है सही-सही अनुमान लगाने में चाहे जो भी अन्तर्निहित कठिनाई हो। यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि योजना प्रक्रिया के परिणामतः इस प्रयोजनार्थ किया गया समानुपातिक आबंटन वर्तमान स्तर से बढ़ा हुआ है। इस प्रक्रिया में ग्रामीण क्षेत्रों के अथवा ग्रामीण शहरी विभाजन में बढ़ने से बचने का अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिए।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में यह भी कहा गया है कि ग्राम विकास कार्यक्रमों में अधिक संसाधनों का निवेश तो सहायक होगा ही, लेकिन इससे भी अधिक महत्वपूर्ण वह जागरूक प्रयास इस प्रकार के निवेश का प्रयोग, ग्रामीण अर्थव्यवस्था बच्चों की देखरेख और अन्य जरूरी सेवाओं की सुविधाओं में जिनका जीवन की गुणवत्ता जनसंख्या वृद्धि दर और साथ ही ग्रामीण लोगों की उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है, सुधार करने में सहायता प्रदान करेगा। निवेश प्रक्रिया का प्रबन्ध इस प्रकार हो कि उत्पादकता रोजगार और आय में होने वाली वृद्धि क्षेत्रों में अधिक व्यापक और फैली हुई हो। इसलिए वित्तीय संसाधनों का आबंटन करने और तकनीकी सहायता प्रदान करते, दोनों ही दृष्टियों से गरीब और प्रगतिहीन क्षेत्रों की जरूरतों पर पहले बल दिया जाना चाहिए।

दृष्टिकोण पत्र में इस बात पर भी बल प्रदान किया गया है कि सार्वजनिक संसाधन विविध प्रकार के ग्राम विकास और गरीबी विरोधी कार्यक्रमों पर पहले से ही काफी मात्रा में खर्च किए जा रहे हैं लेकिन उनका प्रभाव और प्रभाविता कार्यक्रमों में फैले होने, उनमें अंतर्विरोध और अतिव्याप्ति, विशेष प्रदेशों की आवश्यकताओं और क्षमताओं के साथ कार्यक्रमों को जोड़ने में असफलता, केन्द्रीय और राज्य अधिकारी तंत्र पर ही भरोसा, राजनैतिक संरक्षण के साधन के रूप में इन कार्यक्रमों का प्रयोग, संस्थापित विशिष्ट वर्गों द्वारा उनका पूर्वक्रय, व्यापक रूप से प्रकट हो जाने के कारण गंभीर रूप से प्रभावित होती है। हमें पर्याप्त वित्तीय संसाधन ही जरूरी नहीं। वरन् कार्यक्रमों पर विचार करने उनकी योजना बनाने तथा उनको क्रियान्वित करने के तरीकों में बुनियादी परिवर्तन करना जरूरी है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि आठवीं योजना का बुनियादी उद्देश्य इस बात को सुनिश्चित करना है कि आम लोगों की आवश्यकताएं तथा उनका जीवन स्तर आयोजना का मुख्य फोकस बने, भले ही योजना का आशय अर्थव्यवस्था का तीव्र समग्र विकास करना और उसमें विविधता लाना तथा आधार संरचना को सुदृढ़ करना ही हो। विशिष्टतः राज्य को सभी के लिए विशेष रूप से गरीबों के लिए पर्याप्त रोजगार सृजित करने तथा उनके रहन-सहन के बुनियादी स्तर की व्यवस्था सुनिश्चित करने की प्राथमिक जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए। योजनाओं को परिस्थितिकीय रूप से स्थिर विकास की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील होना भी आवश्यक है।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए आठवीं योजना के प्रथम वर्ष 1990-91 जिसकी शुरुआत 1 अप्रैल 1990 से ही हो चुकी है के लिए केन्द्रीय आयोजना का परिव्यय 39,329 करोड़ रुपये नियत किया गया है जो वर्ष 1989-90 की तुलना में 14.2 प्रतिशत अधिक है। विभिन्न क्षेत्रों में आयोजना व्यय का आबंटन इस प्रकार किया गया है।

ग्रामीण रोजगार

ग्रामीण रोजगार हेतु वर्ष 1990-91 के लिए 2100 करोड़ रुपये का आबंटन किया गया है। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम एवं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम को 1989 में मिलाकर जवाहर रोजगार योजना के नाम से एक नया कार्यक्रम आरम्भ किया गया था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत वर्ष 1990-91 में 8565.4 लाख रोजगार कार्य दिवसों का सृजन किया जायेगा।

शहरी रोजगार

ग्रामीण विकास की प्राथमिकता को ध्यान में रखते हुए ही शहरी विकास के लिए परिव्यय का आबंटन मात्र 120 करोड़ रुपया ही किया गया है। इससे वर्ष 1990-91 में शहरी सूक्ष्म उद्यम योजना के अन्तर्गत लगभग एक लाख शहरी निर्धन व्यक्तियों को स्व-रोजगार संबंधी कार्य प्रारंभ करने के लिए सहायता प्रदान की जायेगी तथा 475 लाख से अधिक कार्य दिवसों का सृजन किया जायेगा।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

1990-91 में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम हेतु 377 करोड़ रुपये का आबंटन किया गया है। इससे गरीबी रेखा के

नीचे रहने वाले 19.94 लाख ग्रामीण परिवारों को सहायता प्रदान की जायेगी। लाभ प्राप्त करने वालों में 30 प्रतिशत लोग अनुसूचित जातियों/जनजातियों के होंगे तथा अन्य 30 प्रतिशत स्त्रियां होंगी। इन लाभार्थियों के लिए सामूहिक बीमा योजना की सुविधा भी उपलब्ध होगी।

त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम

1990-91 के दौरान त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम हेतु 423 करोड़ रुपये आबंटित किये गये है। अप्रैल 1985 में 'कोई स्रोत नहीं' समस्या से ग्रस्त ग्रामों की संख्या 1,86,722 थी, 1 मार्च 1990 तक इनमें से 1,57,484 ग्रामों को इस कार्यक्रम में सम्मिलित कर लिया जाना था।

ग्रामीण विद्युतीकरण

वर्ष 1990-91 में 13,672 गांवों का विद्युतीकरण किया जाना है। आशा है इससे वर्ष में 4,23,510 पम्प सेटों को ऊर्जा प्राप्त होगी।

वर्ष 1990-91 में विभिन्न क्षेत्रों में आयोजन व्यय का आबंटन तालिका-4 से स्पष्ट है।

तालिका-4

1990-91 हेतु केन्द्रीय आयोजना व्यय का विभिन्न क्षेत्रों हेतु आबंटन

कार्य क्षेत्र	आबंटित व्यय (करोड़ रुपये में)
ग्रामीण रोजगार	2100
शहरी रोजगार	120
समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम	377
त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम	423
ऊर्जा : कोयला एवं लिग्नाइट	2,447
विद्युत	5,917
इस्पात	2,734.71
रेलवे	5,000
दूरसंचार	2875

इस प्रकार आठवीं योजना के प्रारूप एवं 1990-91 के आयोजना व्यय आबंटन के अध्ययन से यह स्पष्ट हो रहा है कि आठवीं योजना में ग्रामीण विकास पर विशेष बल दिया गया है। आठवीं योजना के प्रारूपों को देखते हुए यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आठवीं योजना का प्रारूप ग्रामोन्मुख विकास को ध्यान में रखकर बनाया गया है, किन्तु आयोजना व्यय का 50 प्रतिशत आबंटन जो ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए किया गया है, वह भी कम है। ग्रामीण गरीबी एवं ग्रामीण जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए यह आबंटन 75 प्रतिशत होना चाहिए। साथ ही साथ ग्रामीण विकास हेतु चलाये जा रहे अब तक के विभिन्न कार्यक्रमों के अवलोकन से स्पष्ट है कि इन कार्यक्रमों द्वारा आर्थिक लक्ष्य की पूर्णतया प्राप्ति नहीं हो पा रही है। कारण कि इन कार्यक्रमों का क्रियान्वयन ही सही ढंग से नहीं हो पा रहा है। लोगों में योजना निर्माण एवं क्रियान्वयन के प्रति लगन, उत्पादन करने की इच्छा को हम अब तक सफलतापूर्वक पूरा नहीं कर पाये हैं। प्रायः लोगों की आधारभूत आवश्यकताओं को अनदेखा कर दिया जाता है। यही नहीं उन तक पहुंचने वाला लाभ भी बिचौलिये ले लेते हैं।

ग्रामीण विकास के प्रशासन की एक प्रमुख बाधा यह भी है कि प्रशासक अधिकांशतः शहरी क्षेत्र एवं सम्पन्न समूह का प्रतिनिधित्व करता है। ऐसे अधिकारियों से ग्राम्य विकास की योजनाओं को क्रियान्वित करने की अपेक्षा करना अपने आप में विरोधाभासी आकांक्षा है। इसके लिए आवश्यक है कि शहरी लोगों की पढ़ाई के दौरान डिग्री प्राप्त करने से पूर्व कुछ समय तक गांव में रहना अनिवार्य कर दिया जाए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि नौकरशाही के माध्यम से एवं जनतांत्रिक तरीके से स्वस्थ वातावरण बनाकर गांवों का अधिक द्रुतगति से विकास किया जाए। संस्थागत संरचनात्मक परिवर्तनों से यद्यपि कोई क्रांतिकारी आशाएं नहीं की जा सकती तथापि धीरे-धीरे हमें अपने दृष्टिकोण, मूल्यों, धारणाओं को विकासात्मक-रचनात्मक बनाना होगा, तभी गांवों का विकास सम्भव हो सकेगा।

इस प्रकार आज आवश्यकता इस बात की है कि हमारी सरकार जो भी विकास योजनाओं को लागू कर रही है, उनके कार्यान्वियन में जनता की भागीदारी अधिक होनी चाहिए। संतोष की बात है कि हमारी सरकार पंचायती राज के माध्यम से विकास योजनाओं में जनता की भागीदारी निभाने का कारगर उपाय कर रही है, जिससे अब वह दिन दूर नहीं जब गांवों में खुशहाली की लहर छा जायेगी अर्थात हमारा समग्र विकास का सपना साकार होता नजर आएगा तथा 'भारत सोने की चिड़िया है' यह उक्ति चरितार्थ हो जायेगी।

प्राध्यापक, भूगोल विभाग
महाविद्यालय दूबे छपरा, बलिया (उ. प्र.)-277205

दूसरी किस्त

पंचायती राज तथा उसका प्रशासकीय ढांचा

डा. (श्रीमती) वीणा मेहता

पंचायतीराज का प्रशासकीय ढांचा

भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायतीराज संस्थाओं के रूप में इन संस्थाओं का प्रशासकीय ढांचा बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिशों के बाद ही निर्मित हुआ। चूंकि स्थानीय स्वशासन इकाइयों का विषय है, अतः इकाइयों की इच्छा पर निर्भर था कि इस समिति के सुझावों के आधार पर अधिनियमों का निर्माण करें। सर्वप्रथम इसके सुझावों के आधार पर राजस्थान ने 1959 में पंचायत समिति एवं जिला परिषद अधिनियम पास किया। बलवंतराय समिति ने जिस त्रिस्तरीय ढांचे की सिफारिश की थी, उसे अपने अनुकूल इकाइयों ने जैसा उपयुक्त लगा स्वीकार किया। त्रिस्तरीय ढांचे का निर्माण जिन इकाइयों में है वे हैं–बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल, अरुणाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तर प्रदेश।

दो स्तरीय ढांचा जिन राज्यों में है वे हैं–आसाम, हरियाणा, पंजाब, उड़ीसा, तमिलनाडु, मणिपुर, दिल्ली, पांडिचेरी।

एक स्तरीय व्यवस्था जिन राज्यों में है वे हैं–जम्मू-काश्मीर, केरल, त्रिपुरा, गोआ, अंडमान निकोबार द्वीप समूह, चंडीगढ़, दादर तथा नागर हवेली, दमन और दीव।

जहां कोई भी व्यवस्था नहीं है वे हैं–मेघालय, नगालैंड, लक्षद्वीप, मिजोरम।

कर्नाटक में 1985 तथा आंध्र में 1987 में अपने पंचायतीराज के ढांचे में परिवर्तन कर, नये ढंग से उनका निर्माण किया गया है। कर्नाटक में चार स्तरीय व्यवस्था में–ग्राम सभायें, मंडल पंचायत, तालुका पंचायत समिति, जिला परिषदें हैं। आंध्र में–ग्राम पंचायत (पंचायत समिति) भंग कर दी गई है। मंडल पंचायत, जिला प्रजा परिषद और जिला अभिवृद्धि समीक्षा मंडल की स्थापना की गई है।

निष्कर्षतः इससे स्पष्ट है कि प्रशासकीय ढांचे में पूरे भारत वर्ष में एकरूपता हमें देखने को नहीं मिलती। बहुत ही दुर्भाग्य की बात है कि एक ओर शासन पंचायतीराज संस्थाओं को ग्रामीण विकास की आधारभूत संस्थायें मानता है, दूसरी ओर पूरे भारतवर्ष में उसका समुचित ढंग से निर्माण एवं विकास नहीं हो पाया है। इसी का दुष्परिणाम है कि स्वतंत्रता के इतने सालों बाद भी हम अभी तक यह निश्चित नहीं कर पा रहे हैं कि कौन-सा ढांचा भारत के लिए उपयुक्त होगा तथा हम यह परख नहीं पा रहे हैं कि कौन-सा ढांचा सफलतापूर्वक कार्य कर रहा है, जिसे हम सम्पूर्ण भारत के लिए आदर्श आधार के रूप में निर्मित कर सकें।

पंचायतीराज के प्रशासकीय ढांचे का प्रश्न है, हमें निम्नानुसार स्थिति देखने को मिलती है जिसे इकाइयों ने अपने अनुसार परिवर्तन कर लागू किया है–

स्तर	संस्था का नाम	निर्वाचित सदस्य	प्रशासकीय कर्मचारी
1. ग्राम स्तर पर	ग्राम पंचायत	सरपंच तथा पंच	ग्राम स्तर का अधिकारी
2. विकास खंड/तहसीलस्तर	जनपद पंचायत/पंचायत समिति	अध्यक्ष तथा सदस्य	विकास अधिकारी तथा विस्तार अधिकारी
3. जिला स्तर पर	जिला परिषद या जिला पंचायत	अध्यक्ष तथा अन्य सदस्य	जिलाधीश या विकास अधिकारी

आंध्र एवं कर्नाटक ने द्वितीय स्तर पर मंडल पंचायत की स्थापना की है, जो वृद्धि विकास केन्द्र की अवधारणा के ऊपर आधारित है।

उपरोक्त स्थिति का विश्लेषण करने पर संक्षिप्त रूप में विभिन्न इकाइयों में प्रशासकीय ढांचे की कार्यरूप में स्थिति निम्नानुसार है–

ग्राम सभा

प्रत्येक गांव में व्यस्क नागरिकों को मिलाकर एक सभा बनाई जाती है। जिसे ग्राम सभा कहते हैं। किन्हीं राज्यों में इन्हें कानूनी अस्तित्व प्रदान किया जाता है जैसे मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र में। किन्हीं राज्यों में कानूनी अस्तित्व प्रदान नहीं

किया जाता है जैसे केरल, पश्चिम बंगाल आदि। ग्राम स्तर पर जो ग्राम पंचायतें हैं, उनके सदस्यों का चुनाव हरेक इकाई में प्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। पंचायत के निर्वाचित प्रमुख को जिसे कई इकाइयों में सरपंच कहा जाता है उसका चुनाव कहीं प्रत्यक्ष अथवा कहीं अप्रत्यक्ष होता है। जैसे मध्य प्रदेश में सरपंच का चुनाव पहले अप्रत्यक्ष था, अब वर्तमान में प्रत्यक्ष कर दिया गया है।

ग्राम स्तर पर अधिकारी—जिसे ग्राम सहायक, ग्राम सेवक आदि नामों से संबोधित किया जाता है। किन्हीं-किन्हीं राज्यों में शासन द्वारा जैसे मध्य प्रदेश में और कहीं-कहीं पंचायतों के द्वारा नियुक्त किया जाता है जैसे महाराष्ट्र में।

प्रारंभ में ग्राम पंचायतों को नागरिक कार्य सौंपे गए थे, किन्तु वर्तमान में प्रवृत्ति ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों को सौंपने की है।

द्वितीय स्तर—इस स्तर की संस्थाओं के नामों में विभिन्न इकाइयों में विभिन्नता है जैसे मध्य प्रदेश में इसे जनपद पंचायत, कर्नाटक में तालुका पंचायत समितियां, राजस्थान में पंचायत समिति आदि नामों से पुकारा जाता है।

इस द्वितीय स्तर के संगठन में भी एकरूपता देखने को नहीं मिलती। सामान्यतः इसमें पदेन, सहयोगी एवं सहयोजित सदस्य पाये जाते हैं। पांच राज्यों में प्रत्येक निर्वाचन की व्यवस्था की गई है, एक में इसके साथ अप्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था है। 5 राज्यों में अप्रत्यक्ष निर्वाचन तथा साथ ही प्रतिनिधित्व भी है। छः अन्य राज्यों में नीचे स्तर के पदाधिकारियों को पदेन सदस्य बनाने वाली व्यवस्था है।

महाराष्ट्र में इसके अध्यक्ष को सभापति कहते हैं, उत्तर प्रदेश, बिहार में प्रमुख, राजस्थान में प्रधान कहा जाता है। पंचायत समिति के सदस्य प्रायः इसे चुनते हैं। राजस्थान में इसे निर्वाचन मंडल द्वारा चुना जाता है।

पंचायत समिति का मुख्य निष्पादक खंड विकास अधिकारी होता है जो शासकीय कर्मचारी है। साथ ही विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ जिसे विस्तार अधिकारी के पद से जाना जाता है, इसमें रहते हैं। खंड विकास अधिकारी, विस्तार अधिकारियों तथा पंचायत समिति के निर्वाचित सदस्यों के सहयोग से विकास कार्यों का संचालन करता है।

भारत की अधिकांश इकाइयों में पंचायत समिति (द्वितीय स्तर) मुख्य कार्यकारी निकाय है, जिस पर विकास कार्यों को क्रियान्वित करने का उत्तरदायित्व है, जैसा कि बलवंतराय मेहता समिति का सुझाव था।

पंचायतीराज का तृतीय स्तर जिला स्तर पर होता है, जिसे मध्य प्रदेश, गुजरात में जिला पंचायत, महाराष्ट्र में जिला परिषद, आसाम में महाकोमा परिषद कहा जाता है। पांच राज्यों में प्रत्यक्ष निर्वाचन का प्रावधान है साथ ही पदेन तथा अन्य सदस्यों को प्रतिनिधित्व देने की व्यवस्था है। बाकी राज्यों में जिला स्तर की संस्था निचले स्तर के पदेन सदस्यों तथा अन्य सदस्यों के प्रतिनिधित्व से निर्मित होती है। दो राज्यों में अप्रत्यक्ष निर्वाचन भी इसके साथ हैं।

बलवंतराय मेहता समिति ने इसे निम्न स्तर पर नियंत्रण एवं समन्वयकारी संस्था के रूप में प्रतिपादित किया है। राजस्थान, मध्य प्रदेश में यही भूमिका निभाती है। महाराष्ट्र तथा कर्नाटक में ये सबसे शक्तिशाली मुख्य कार्यकारी संस्था है। महाराष्ट्र में इसके अध्यक्ष को प्रधान कहते है, राजस्थान में इनको प्रमुख कहते हैं। महाराष्ट्र में इसका निर्वाचन निर्वाचक मंडल द्वारा होता है।

शासकीय कर्मचारियों में प्रायः जिलाधीश इसका मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता है। चूंकि विकास के कार्य बढ़ते चले जा रहे हैं, अतः जैसे महाराष्ट्र में जिलाधीश को विकास कार्यों से बिल्कुल मुक्त कर दिया गया है। विकास कार्यों का उत्तरदायित्व प्रमुख कार्यकारी अधिकारी को सौंपा गया है। मध्य प्रदेश में भी प्रावधान है कि प्रथम श्रेणी का अधिकारी जिला पंचायत का सचिव होगा जो जिलाधीश के निर्देशन में काम करेगा।

आंध्र एवं कर्नाटक में 'वृद्धि विकास केन्द्र' की धारणा के आधार पर मंडल पंचायतों का निर्माण किया गया है। कर्नाटक में मंडल पंचायत के अध्यक्ष का चुनाव अप्रत्यक्ष, आंध्र में प्रत्यक्ष होता है। कर्नाटक में निचले स्तर से नियोजन, जिला सरकार की कल्पना को साकार करने के आधार पर जिला परिषद का रूप दिया गया है। पंचायती राज को सक्षम बनाने के लिए कर्नाटक में कुछ नई व्यवस्थाएं की गई हैं—

कर्नाटक में सभी विकास एजेन्सी चुने हुए प्रतिनिधियों के देख-रेख में काम करेंगी। किसी भी राज्य में वर्तमान में ऐसी व्यवस्था नहीं है। जिले के अधिकारी, जिला परिषद जो कि निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं, के देखरेख में काम करेंगे। जिला परिषद का अध्यक्ष ही जिला अधिकारी की गोपनीय रिपोर्ट लिखेगा। उसे मंत्री का तथा उपाध्यक्ष को उपमंत्री का दर्जा दिया गया है।

जिला स्तर पर योजना बनाना, क्रियान्वयन दोनों ही निर्वाचित प्रतिनिधि की देखरेख में होगा।

मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में राज्य विकास परिषद का गठन किया गया है। यह केन्द्र की राष्ट्रीय विकास परिषद के आधार पर बनाई गई है, जो राज्य एवं जिले की योजना में समन्वय करने का काम करेगी तथा योजनाओं को स्वीकृति प्रदान करेगी।

पंचायतीराज संस्थाओं के लिए वित्त आयोग की व्यवस्था की गई है। पंचायतों में 25 प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।

पंचायतीराज संस्थाओं के चुनाव निर्वाचन आयोग के माध्यम से कराये जायेंगे।

समूची पंचायतीराज सेवा को दो स्तर पर संगठित किया गया है एक राज्य स्तर की होगी, दूसरी जिला परिषद स्तर की।

पंचायतों की सफलता के लिए सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक पृष्ठभूमि की आवश्यकता है। किन्तु भारत में निम्नानुसार बाधक तत्व हैं, जिन्हें जब तक दूर नहीं किया जायेगा, पंचायतों का सफलतापूर्वक कार्यकाल संभव नहीं होगा।

जनता में साक्षरता का अभाव, राजनैतिक चेतना का अभाव, निस्वार्थ नेतृत्व का अभाव, जनता में क्रियाशीलता का अभाव, जातीय, धार्मिक, सामंतवादी निष्ठायें, भारत का अलोकतांत्रिक सामाजिक एवं पारिवारिक ढांचा, ग्राम समुदाय में शक्तिशाली वर्गों का कमजोर वर्ग पर प्रभुत्व।

उपरोक्त बाधक तत्वों के अलावा कुछ प्रशासकीय समस्याएं हैं जो इस प्रकार हैं—

(1) विकास की आधारभूत इकाई क्या हो, खंड या जिला?

(2) पंचायतीराज के अधिकारी वर्ग तथा गैर-अधिकारियों में परस्पर क्या संबंध हो।

(3) विकास के कार्यों में जिलाधीश की क्या भूमिका दी जाये।

(4) पंचायतीराज संस्थाओं तथा राज्य सरकार के बीच में क्या संबंध है।

(5) पंचायतीराज संस्थाओं के अंतर्गत विभिन्न सेवाओं में पदाधिकारियों की भर्ती, पदोन्नति, वेतन, भत्ते, भविष्य निधि, प्रशिक्षण आदि की समस्याएं।

(6) पंचायतीराज संबंधी चुनावों में राजनैतिक दलों की क्या भूमिका हो।

वर्तमान में पंचायतीराज संस्थाओं की भूमिका ग्रामीण विकास के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है और उसी के माध्यम से राष्ट्र निर्माण में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। एक ओर पंचायतीराज का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र का आर्थिक एवं सामाजिक विकास करना है।

राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान में पंचायतीराज द्वारा विकास पर 18 से 22 अगस्त 1986 तक संगोष्ठी आयोजित की गई। इस संगोष्ठी में संस्तुति दी गई—"कि आई.आर.डी.पी., एन.आर.ई.पी. आदि कार्यक्रम यदि पंचायतीराज की छत्रछाया में लाये जायें तो हितकर होगा।"

लोकतंत्र को हम निचले स्तर तक पहुंचाना चाहते हैं तथा पंचायतीराज संस्थाओं को ग्रामीण विकास की महत्वपूर्ण संस्थाएं बनाना चाहते हैं तो निम्नलिखित सुझावों पर ध्यान देना उपयुक्त होगा—

(1) नियोजन को जनता की आवश्यकता की पूर्ति करना है ये तभी हो सकता है, जब जिले को नियोजन की इकाई बनाया जाये।

(2) राज्य सरकारों को पंचायतीराज संस्थाओं को अधिकारों का विसर्जन (Dispersion) करना चाहिए।

(3) ग्रामीण विकास के दृष्टिकोण से, जिले को नियोजन की इकाई के दृष्टिकोण से तृतीय स्तर याने, जिला परिषद (जिला पंचायत) को मुख्य कार्यकारी निकाय बनाना चाहिए, जैसे महाराष्ट्र एवं कर्नाटक आदि राज्यों में है।

(4) विकास के दृष्टिकोण से मंडल पंचायतों की स्थापना की जानी चाहिए। इसे अलग स्तर न बनाकर विकास तथा प्रशासकीय इकाई के रूप में बनाना चाहिए, ताकि विकास योजनाओं को कार्यरूप में परिणित करे।

(5) पूरे भारतवर्ष के लिए जहां तक संभव हो पंचायतीराज संस्थाओं को एकरूप में संगठित किया जाये, क्योंकि इनका उद्देश्य पूरे भारतवर्ष में लोकतंत्र एवं ग्रामीण विकास करना है।

(6) भूमि सुधार को सक्रियतापूर्वक किया जाना चाहिए क्योंकि उत्पादन के साधन के रूप में पूंजी का साधन है भूमि। जब तक समुचित वितरण नहीं होता, पूंजी का विकेन्द्रीकरण नहीं होगा। जब तक पूंजी का विकेन्द्रीयकरण न होगा, वास्तविक लोकतंत्र की स्थापना नहीं हो पायेगी।

(7) साख की सुविधा ऐसी होनी चाहिए ताकि जन साधारण उससे फायदा उठा सके।

(8) प्रशासकीय कर्मचारी जो इन पंचायतीराज संस्थाओं के लिए नियुक्त किए गए हैं तथा ग्रामीण क्षेत्र में ग्रामीण विकास अधिकारियों को एक ही ग्रामीण विभाग के अंतर्गत रखा जाना चाहिए, ताकि सब का उद्देश्य एक हो, उनकी नियुक्ति, पदोन्नति तथा अन्य सुविधाओं की समुचित व्यवस्था हो सके।

(9) केन्द्र सरकार या राज्य सरकार को ग्रामीण विकास की अन्य योजनाएं पंचायतीराज संस्थाओं के माध्यम से चलानी चाहिए, अलग से नहीं चलानी चाहिए, जैसा कि अभी तक होता आया है। ये तत्व पंचायतीराज संस्थाओं में समानता एवं विश्वास को कम करते हैं।

(10) इसके साथ ही जो राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, बाधाएं हैं उन्हें दूर करने के उपाय भी करने चाहिए।

(11) पंचायतीराज की प्रशासकीय समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए। उनका निराकरण करने के लिए तुरंत कार्यवाही की जानी चाहिए।

(12) पंचायतीराज संस्थाओं को कर लगाने का अधिकार है, किन्तु जो कर नहीं देते, उन्हें दंडित करने की क्या व्यवस्था होगी इस पर विचार कर, उसकी व्यवस्था की जानी चाहिए।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि—

राजनैतिक जाग्रति एवं आर्थिक विकास की आवश्यकता के कारण ग्रामीण स्तर पर आर्थिक विकास एवं स्वशासन के दोहरे उत्तरदायित्व के आधार पर पंचायतीराज संस्थाओं की स्थापना एक अत्यंत महत्वपूर्ण खोज है। अतः ऐसा कहना गलत होगा कि पंचायतीराज संस्थायें सिर्फ 'राजनैतिक नर्सरी' या सिर्फ राज्य के प्रशासन के विस्तार का स्थानीय स्तर पर एक साधन है। पंचायतीराज संस्थायें दोनों हैं, ज्यादा महत्वपूर्ण रूप में आर्थिक क्षेत्र में राष्ट्र निर्माण के साधन के निमित्त है, किंतु पंचायतीराज का यह पहलू लगातार अनदेखा किया जाता है।

अतः पंचायतीराज पर चिंतन के दृष्टिकोण से भी तथा ग्रामीण विकास के क्रियान्वयन की संस्था के दृष्टिकोण से गंभीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है ताकि राष्ट्र निर्माण में ये अपनी सक्षम भूमिका निभा सकें।

रीडर, राजनीति शास्त्र,

रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय,

जबलपुर, मध्य प्रदेश

"शासन का विकेन्द्रीकरण महत्वपूर्ण अवश्य है लेकिन स्थानीय नियोजन की समन्वित प्रक्रिया अपनाने में देरी यह कह कर नहीं की जा सकती कि जब तक हर जगह निर्वाचित निकाय नहीं बन जाते, हमें रुकना होगा। रोजगारपरक योजनाओं जैसे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना के लिए केन्द्र-प्रायोजित योजनाओं के रूप में आबंटन इस शर्त पर राज्यों को सौंप दिया जाना चाहिए कि इसे ग्रामीण क्षेत्र में स्थानीय नियोजन पर ही खर्च किया जाएगा।

इसके अंतर्गत धनराशि केवल उच्च राष्ट्रीय महत्व की योजनाओं पर ही खर्च होगी और इन योजनाओं की नियमित समीक्षा होगी। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि राज्य यह पूरी धनराशि पंचायतों को सौंप दें और जहां पंचायतें नहीं हैं, वहां यह राशि जिला ग्रामीण विकास एजेंसी को सौंपी जाएं तथा इस बीच एक साल के अंदर निर्वाचित निकाय गठित कर लिए जाएं। पूर्ण रोजगार की नीति को सफल बनाने के लिए विकेन्द्रीकरण अत्यंत आवश्यक है।

यह भी सुनिश्चित करना आवश्यक है कि ग्रामीण विकास के लिए निर्धारित संसाधनों का काफी भाग स्थानीय निकायों को बिना किसी शर्त के सौंप दिया जाए ताकि वे इस धन और खुद जुटाये गए धन से व्यवस्थित नियोजन कर सकें और क्षेत्र विकास कार्यक्रमों को चला सकें। यह भी देखना होगा कि जिन जिलों या क्षेत्रों में गरीबों व बेरोजगारों की संख्या अधिक है या जो सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं, उन्हें अपेक्षाकृत अधिक संसाधन व समर्थन प्राप्त हों। इस बारे में कोई व्यवस्था करने से पहले हमें उन राज्यों के अनुभवों का अध्ययन करना होगा जिन्होंने अपने यहां ऐसे विकेन्द्रीकरण के लिए उपाय किए हैं और जिनके यहां खंडों व जिलों के लिए संसाधनों के आबंटन की दर अलग-अलग है।"

(आठवीं पंचवर्षीय योजना, 1990-95 के दृष्टिकोण पत्र से)

(डी एन) 98
नई दिल्ली में डाक में डालने
(डी एन)-55

P & T Regd. No. D
Licensed under U (D)
to post without pre-payment at NDPSO, New

"हमारे देश के सत्तर प्रतिशत लोग गांवों में रहते हैं और उनका कल्याण तथा विकास तभी संभव है जब कृषि क्षेत्र का विकास व विस्तार हो और ग्रामीण अंचल में आर्थिक व सामाजिक बुनियादी ढांचे का विस्तार हो। इन क्षेत्रों की अब तक घोर उपेक्षा की जाती रही है। सम्पन्न कृषि ही राष्ट्रीय सम्पन्नता की सुदृढ़ नींव है। इसके बावजूद आठवें दशक में कृषि क्षेत्र में पूंजी निवेश वहीं का वहीं रहा। इस संदर्भ में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि सातवीं योजना में कृषि विकास की दर लक्ष्य से कम रही और कृषि क्षेत्र में रोजगार के नए अवसरों में कमी आई । मूल सामाजिक व आर्थिक ढांचे की सुविधा के मामले में भी ग्रामीण क्षेत्र पिछड़े रहे।

आठवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में इन विसंगतियों को दूर करने के प्रयास किए गए हैं। उद्देश्य यह है कि केन्द्र व राज्यों के कुल योजना संसाधनों का आधा भाग कृषि, ग्रामीण विकास व ग्रामीण क्षेत्रों में मूल सुविधाओं पर खर्च किया जाए। हमने वर्ष 1990-91 के केन्द्रीय बजट में इसकी शुरुआत कर दी है। कृषि, ग्रामीण विकास तथा संबद्ध क्षेत्रों के लिए केन्द्रीय योजना में आबंटन को बढ़ाकर 49 प्रतिशत कर दिया गया है।"

–प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह

(नई दिल्ली में 18 जून, 1990 को हुई राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में उद्घाटन भाषण से)